अल्लाह का अभिशाप

मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा

हारिस सुल्तान

अल्लाह का अभिशाप

मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा

लेखकः

हारिस सुल्तान

प्रकाशकः

हारिस सुल्तान ऐसोसियेटस

अल्लाह का अभिशाप

लेखकः

हारिस सुल्तान

प्रकाशन वर्ष : 2021

मूल्यः 300/-

प्रकाशकः

हारिस सुल्तान ऐसोसियेटस

भारत में प्रकाशित

अनुक्रमणिका

अली ए. रिज़वी द्वारा अल्लाह का अभिशाप पर आमुख

हम सबने पत्रिकाओं के लेखों और स्टैंड-अप कॉमेडियनों के मुख से पतित कैथोलिकों के विषय में सुना है। यहूदी समुदाय में धर्मनिरपेक्ष यहूदी होना लगभग स्वाभाविक है। अवार्ड विजेता नेटफ्लिक्स वृत्तचित्रों में पूर्व के हैसिडिक यहूदियों के बारे में दर्शाया गया है। पूर्व साइंटोलॉजी बहुधा लुभावनी पुस्तक व टीवी डील पा जाते हैं।

पर पूर्व-मुसलमान के बारे में क्या? क्या यह मान लेना वास्तव में तर्कसंगत है कि विश्व की दूसरी सबसे बड़ी जनसंख्या वाला धार्मिक समुदाय जिसकी संख्या 1 अरब 60 करोड़ से अधिक है, एकमात्र ऐसा समुदाय है जिस ने मुक्तचिंतन वाले किसी ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्ति को जन्म नहीं दिया है जिसने मज़हब के स्थान पर तर्क और ईश्वर के स्थान पर नैतिकता का पक्ष लिया हो? निश्चित रूप से ऐसा नहीं है। फिर भी जैसा कि कालातीत कैथोलिक, पूर्व हैसीडिक और पूर्व साइंटोलॉजीवादियों को न केवल स्वीकार किया जाता है, वरन् सम्मान भी दिया जाता है, किंतु पूर्व-मुसलमानों को ऐसा गौण, इस्लामोफ़ोबिक 'सहजात भेदिया' अथवा आत्म-द्वेषी द्रोही कहकर किनारे कर दिया जाता है कि वे मुस्लिम विरोधी जनवादी अति-दक्षिणपंथियों द्वारा मुसलमानों को पिशाच सिद्ध करने के अभियान का एक अंश भर बनकर रह जाते हैं।

प्रिय पाठकों यह धर्मांधता है। ऐसा माना जाता है कि मुसलमान असंतोष, व्यंग्य अथवा संवाद को सहन करने में असमर्थ होते हैं। ऐसे में कभी मज़हबी रहे एक युवा मुसलमान का सत्य व नैतिक सातत्य का अन्वेषण करते-करते अपने मज़हब से कैसे विश्वास उठ गया, यह पुस्तक इस रुचिकर वृत्तांत से बढ़कर है यह पुस्तक। मुसलमानों के लिये भी यह एक अवसर है कि वे इस प्रकार के संवाद में भाग लें, क्योंकि उनके बारे में व्यापक धारणा है कि वे ऐसा संवाद करने में अक्षम होते हैं।

हम सभी उदारवादी जो पश्चिमी लोकतंत्र में रहते हैं, ज्ञानोदय के युग के लाभार्थी हैं। स्वतंत्र अभिव्यक्ति, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समान अधिकार और लोकतंत्र, ये सब उन साहसी मुक्त चिंतकों के प्रयासों का परिणाम है जिन्होंने अपने समय के यूरोपीय धर्मतंत्रों एवं धार्मिक रुढ़िवादिताओं को चुनौती दी थी। ये सत्ताएं ऐसी क्रूर व शक्तिशाली थीं कि ये आज के इस्लामिक स्टेट जैसी ही दिखती होंगी।

अमरीका के स्वतंत्रता की उद्घोषणा में इन ज्ञान-तत्वों को डालने वाले थॉमस जैफ़रसन इसलिये विख्यात हैं कि उन्होंने रेज़र ब्लेड लेकर बाइबिल के परालौकिक दावे और अंधविश्वास के चीथड़े उड़ा दिये थे। जैसा कि कुछ लोग ग़लत ढंग से दावा करते हैं कि अमेरिका में 'यहूदी-ईसाई मूल्यों' पर आधारित राष्ट्र का निर्माण किया गया था, पर यह सच नहीं है, अपितु सच यह है कि अमेरिका की स्थापना करने वाले पूर्वजों ने ठीक इसके विपरीत किया था। उन्होंने अपने राष्ट्र से 'यहूदी-ईसाई मूल्यों' को हटाकर इसकी स्थापना की थी। अमरीका में स्वतंत्र अभिव्यक्ति और स्वतंत्र संवाद के लिये हुए प्रथम संविधान ने धर्म और राज्य के मध्य में सीमा रेखा निश्चित कर दी।

आज मुस्लिम दुनिया में ज्ञान के इस युग का पुनः उदय हो रहा है।

वोल्टायर, रोसेयू और जैफ़रसन जैसा ही विश्व के मुस्लिम समुदायों के असंख्य युवा पुरुष व महिलाएं सार्वजनिक रूप से अपने अभिभावकों के मज़हब पर प्रश्न उठा रहे हैं और अभूतपूर्व ढंग से संगठित हो रहे हैं। मुद्रण यंत्र (प्रिंटिंग प्रेस) के अविष्कार के साथ ही बाइबिल के जो तत्व ढंके-छिपे थे, सामने आने लगे। इंटरनेट आने के बाद स्थिति यह है कि यदि गूगल सर्च की सामान्य जानकारी हो तो कुरआन में लिखी बातों को एक छोटा बच्चा भी जान सकता है। 1980 में जब मैं बड़ा हो रहा था तो मेरे निवास पर आलमारी में रखे पुस्तकों में सब से ऊपर कुरआन रखी होती थी। यह ऐसी भाषा में थी जिसे हम नहीं समझते थे। खोलना या पढ़ना तो बहुत दूर की बात है। वजू नामक शुद्धिकरण क्रिया किये बिना इसे छुआ तक नहीं जा सकता था, अधिकांश मुसलमान इस पुस्तक को पवित्र मानते है, परंतु इसमें क्या लिखा है उसको लेकर उनकी जानकारी अस्पष्ट है या यूं कहें कि उससे उनका मात्र परिचय भर है। हममें से जो लोग इसे पढ़ना और समझना चाहते थे, उन्हें किसी प्रसंग से संबंधित सभी आयतों को ढूंढ़ने में घंटों खपाना पड़ा और बुकमार्किंग करनी पड़ी। इस काम के लिये हम इस पुस्तक के

उस अनुवाद को प्राथमिकता देते थे जिसे अधिकांश मुसलमानों में स्वीकृति प्राप्त है (अधिकांश नहीं भी थे)। इसके विपरीत आज के बच्चे प्रसंगवार पूरी कुरआन को कीबोर्ड सर्च के माध्यम से ढूंढ़ सकते हैं, एक के साथ एक इसके दर्जनों अनुवाद की तुलना कर सकते हैं, शब्द-व्युत्पत्ति, व्याकरण और वाक्यविन्यास पर शोध कर सकते हैं तथा जो सीखा है उसे मिनटों में अपने मित्रों से साझा कर सकते हैं।

हमने इसके बारे में तब क्यों नहीं सुना? इस प्रश्न का उत्तर जितना सीधा है, उतना ही दुर्भाग्यपूर्ण भी है। मुस्लिम बहुसंख्यक देशों में जिन थोड़े से लोगों ने बोलने का साहस किया, उन्हें इसके भयानक परिणाम भोगने पड़े हैं। मेरे मित्र रैफ़ बदावी सऊदी अरब की जेल में बंद हैं। यह लिखे जाने के समय तक उनको अपनी पत्नी और बच्चों से अलग हुए 6 वर्ष से अधिक समय हो चुका है।

उनका अपराध? अपने देश में मज़हब और राज्य को पृथक करने के बारे में ब्लॉग लिखना। आरोप? 'इस्लाम का अपमान करना।' बांग्लादेश में धर्मनिरपेक्ष ब्लॉगर अविजित रॉय को मज़हब को चुनौती देने और विज्ञान व तर्क को प्रोत्साहन देने के लिये दिन—दिहाड़े छुरा घोंपकर मार डाला गया। ईरान ने 37 वर्षीय मोहसिन आमिर असलानी को 2014 में इसलिए फांसी पर चढ़ा दिया, क्योंकि उन्होंने उस कहानी पर प्रश्न किया था जो जोना (कुरआन में युनुस) और उस बड़ी मछली के बारे में है जिसमें कथित रूप से युनुस रहता था। मशाल ख़ान को विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की भीड़ ने पीट-पीट कर मार डाला, क्योंकि उन्होंने आदम और हौवा पर प्रश्न पूछ लिये थे। हां, मशाल ख़ान की हत्या विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों ने की और वह भी विश्वविद्यालय परिसर में सबके सामने। यह तो कुछ गिने-चुने लोगों के उदाहरण हैं जो खुलकर बोलने के लिये सामने आये। पर ऐसे बहुत से लोग हैं जिनके बारे में हम नहीं जान पाते। यद्यपि अभी भी बहुत से लोग हैं जो उचित समय पर बोलने में हिचकते नहीं हैं। अब आप समझ पा रहे होंगे कि क्यों। वर्तमान में विश्व के 13 देशों में नास्तिकता के लिये मृत्युदंड का प्रावधान है। ये सभी देश मुस्लिम बहुसंख्यक हैं। यहां तक कि जिन देशों में सरकार इसके लिये दंड नहीं देती है, वहां भीड़ दंड दे देगी।

कुछ समय से मुस्लिम सरकारों ने इस्लाम में विश्वास न करने वाले अपने नागरिकों पर कठोर कार्रवाई करनी प्रारंभ कर दी है। सऊदी अरब ने घोषणा की

है कि नास्तिकता (इस्लाम में अविश्वास) आतंकवादी कृत्य है। मलेशिया ने इस्लाम न मानने वाले अर्थात नास्तिकों पर बराबर कार्रवाई करने की मंशा प्रकट की है। पाकिस्तान ईशनिंदा क़ानून को और कठोर बना रहा है और वह इस पर समर्थन पाने के लिये यूएन से लेकर यूट्यूब तक को अपने पक्ष में करने का प्रयास कर रहा है। इसी प्रकार की कड़ी कार्रवाईयां ईरान और इजिप्ट मिस्र में भी हो रही हैं।

जब तक आप स्वयं से नहीं पूछते कि क्यों, यह बुरे समाचार जैसा प्रतीत होगा।

यह कड़ी कार्रवाई क्यों? ऐसा दुस्साहस क्यों?

इन प्रश्नों का जो उत्तर है, वह देखकर कोई आशान्वित हो सकता है: उत्तर यह है कि क्योंकि मुस्लिम दुनिया में इस्लाम छोड़ने वालों की संख्या बढ़ रही है। इस पुस्तक में आप उस संख्या को पढ़ेंगे जो अति जोखिम व भयानक परिणामों के भय से निश्चित ही कम ही सामने लायी जाती है। वैसे यह संख्या देखकर आपकी आंखें खुल सकती हैं। यहां तक कि अमरीका में अभी हाल ही पीईडब्ल्यू (PEW) द्वारा किये गये एक अनुसंधान पोल में पाया गया कि अमेरिकन मुस्लिम परिवारों में जन्मे बच्चों में से एक-चौथाई इस्लाम को नहीं मानते हैं। बाहरी व्यक्ति के लिये इस पर विश्वास करना कठिन नहीं है, क्योंकि सामान्यत: मज़हब छोड़ रहे युवाओं की बढ़ती संख्या इस अनुसंधान-पोल के सुसंगत है।

यद्यपि मुसलमानों के लिये यह निश्चित ही नया है। जब इस्लाम और मुसलमानों की बात आती है तो वामपंथी और दक्षिणपंथी दोनों इसे ग़लत ढंग से लेते हैं। क्योंकि वामपंथी पक्ष के बहुतायत लोगों में इस्लाम की कोई आलोचना सभी मुसलमानों के विरोध में कट्टरता के रूप में देखी जाती है, जबकि दक्षिणपंथी विचारधारा के बहुत यह सोचते हैं कि इस्लामी सिद्धांतों के समस्यापरक अंश सभी मुसलमानों की मज़हबी मान्यताएं हैं। दोनों पक्ष एक बड़ी ग़लती करते हैं। वे इस्लाम और मुसलमान दोनों का घालमेल कर देते हैं। जबकि 'इस्लाम' विचारों का समूह है और 'मुसलमान' हाड़-मांस का बना एक जीवित प्राणी है। इस्लाम की आलोचना की जा सकती है, उसको चुनौती दी जा सकती है, क्योंकि विचार और पुस्तक के पास कोई अधिकार या संरक्षण नहीं होता है, पर मुसलमानों का चित्रण पिशाच के रूप में नहीं किया जाना चाहिये और न ही उनके साथ भेदभाव किया जाना चाहिये, क्योंकि मानव जाति के पास अधिकार और संरक्षण होता है। विचारों को चुनौती दिये जाने से समाज आगे जाता है, जबकि लोगों को कोसने से समाज टूटता है।

इस पुस्तक अल्लाह के अभिशाप में हारिस सुल्तान ने बुद्धिमत्ता, शुचिता और सहानुभूति के साथ इस संतुलन को बनाये रखा है। उनकी अपने पूर्वजों के मज़हब इस्लाम की आलोचना तीखी और बिना किसी पश्चाताप के है तथा इसमें गहरी निष्पक्षता व शोधपरक तर्कों का समावेश है। यह पुस्तक प्रश्न करने वाले मुसलमानों के लिये सहायक होगी और वे यह जान पायेंगे कि वे अकेले नहीं हैं जिन्हें इस्लाम के सिद्धांतों पर संदेह है। यह पुस्तक शंका प्रकट करने वाले बच्चों के मुसलमान अभिभावकों को यह समझने में सहायता करेगी कि उनके बच्चों का प्रश्न करना पालन-पोषण में कमी नहीं दर्शाता है, वरन् यह बताता है कि उन बच्चों द्वारा एक ऐसा जीवन जीने का प्रयास है जो नैतिक रूप से सुसंगत और ज्ञान-संबंधी असंगति से मुक्त हो। यह पुस्तक अति वामवादी समर्थकों को यह समझने में सहायता करेगी कि केवल समूहों के मध्य ही विविधता नहीं होती, अपितु उनके बीच के लोगों के बीच भी होती है। यह पुस्तक अति-दक्षिणपंथी पहचानवादियों को यह समझने में सहायता करेगी कि मुस्लिम दुनिया पत्थरों जैसी जड़ नहीं है, अपितु उसके भीतर लाखों की संख्या में असंतुष्ट, मुक्त चिंतक और ऐसे धर्मनिरपेक्षतावादी हैं जो निरंकुशतावाद की अपेक्षा स्वतंत्रता को मूल्यवान मानते हैं।

जब यूरोप के मुक्त चिंतकों ने ईसाईयत को चुनौती दी तो हमने इसे ज्ञानोदय का युग कहा और आज हम इससे लाभान्वित हुए हैं। अब जबकि मुस्लिम दुनिया में मुक्त चिंतक अपने प्राण और आजीविका को ख़तरे में डालकर इस्लाम को चुनौती दे रहे हैं तो इसे कुछ और कहना अन्याय होगा।

-अली ए. रिज़वी

परिचय

मैं मज़हब विरोधी नहीं हूं। मैं नारी के प्रति विद्वेष का विरोधी, दास प्रथा का विरोधी, लैंगिकवाद का विरोधी, हिंसा का विरोधी, अज्ञानता का विरोधी, बच्चों के प्रति दुर्व्यवहार का विरोधी, उत्पीड़न का विरोधी, युद्ध का विरोधी हूं। मज़हब मेरा विरोधी है।

संभव है जब यह पुस्तक प्रकाशित हो तो मेरे जीवन को ख़तरे में डालने वाला कोई न कोई फ़तवा आये और संभव है यह फ़तवा अत्याचारी ईरान की सरकार, पाकिस्तान के तालिबान अथवा इससे भी बुरा हुआ तो आस्ट्रेलिया के किसी आईएसआईएस एजेंट की ओर से आये। आस्ट्रेलिया में हिज़्ब-उल-तहरीर के चरमपंथ का ख़तरा निरंतर मंडरा रहा है। यद्यपि यह मेरे जैसे लोगों को उन संगठित मज़हबों और विशेषकर उस इस्लाम से पर्दा हटाने से रोक नहीं पायेगा जिसके बारे में भ्रांति है कि वह शांतिपूर्ण व हानिरहित मज़हब है। इस पुस्तक का उद्देश्य किसी धर्म विशेष के अनुयायियों को आहत करना नहीं है, अपितु इसका उद्देश्य लोगों को यह जानकारी देना है कि धर्म के विषय में कैसे सोचें। आप यह मान सकते हैं कि मज़हबी पक्षधरों को भी यह सीखने में कोई आपत्ति नहीं होगी कि कैसे सोचें, बनिस्बत इसके कि उनको कहा जाये कि वे क्या सोचें। किंतु भले ही वे इससे असहमत नहीं होंगे, पर फिर भी वे लोगों को उन्हीं ग्रंथों का अंधानुकरण करने को प्रोत्साहित करेंगे जो हज़ारों वर्ष पूर्व मनुष्यों द्वारा लिखे गये हैं। स्पष्ट है कि मैं यह सुझाव नहीं दे रहा हूं कि हमें हज़ारों वर्ष पूर्व के विचारकों अथवा दार्शनिकों की बातों पर ध्यान नहीं देना चाहिये, पर हमें नयी सूचनाओं पर खुले मन से विचार करना चाहिये तथा बिना यह सोचे कि किसने और कब लिखा है, हमें उन ग्रंथों की बातों पर प्रश्न पूछने में समर्थ होना चाहिये।

यह पुस्तक किसी विशेष ईश्वर के अस्तित्व की संभावना के अभाव पर विमर्श करने के लिये नहीं लिखी गयी है, वरन् सभी ईश्वरों के बारे में है, चाहे

वो जीसस या याहया हों, विष्णु हों अथवा अल्लाह। यद्यपि इस पुस्तक में अधिकांश संदर्भ अल्लाह अथवा इस्लामी ईश्वर के संबंध में मिलेंगे, पर मेरी मंशा केवल अल्लाह की निंदा की नहीं है। किसी अन्य ईश्वर से पहले अल्लाह का उल्लेख क्यों है, इसके पीछे सीधा कारण यह है कि यही वो मज़हब है जिससे मैं सर्वाधिक परिचित हूं।

यद्यपि मैंने 9 या 10 वर्ष के आयु से ही इस्लाम की कपटी बातों पर प्रश्न उठाने प्रारंभ कर दिये थे, पर मज़हब को दोषी बताना मैं तब तक नहीं शुरू कर पाया था जब तक कि मैंने पारंपरिक मज़हबी तर्कों पर वैकल्पिक विचारों और प्रति-तर्कों को नहीं पढ़ लिया।

यह कहना कोरा झूठ होगा कि किसी एक पुस्तक ने मेरा दृष्टिकोण परिवर्तित कर दिया, पर मैं उन प्रोफेसर रिचर्ड डाकिन्स का उल्लेख अवश्य करूंगा जिन्होंने मुझे मज़हबी पुस्तकों से बाहर सोचने को प्रेरित किया। मज़हब की परी-कथा जैसे जादुई संसार से बाहर आना तथा इस सुंदर संसार में प्रवेश करना जहां हमको विज्ञान का परिचय कराया गया, अपेक्षाकृत लंबी व पीड़ादायी यात्रा रही। मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि भले ही यह यात्रा पीड़ादायी रही, पर मैं प्रसन्न हूं कि इस मार्ग पर चला और अब यह बताये जाने की अपेक्षा कि क्या सोचें, मैं स्वतंत्र रूप से चिंतन कर रहा हूं। मैं शिक्षा देने वाले उन सैकड़ों लोगों के प्रति कृतज्ञ हूं जो निकलकर बाहर आये और पूरे मनोयोग व लगन से लोगों को यह बताने में अपना जीवन खपाया कि मज़हब का विकल्प भी है। यह विकल्प विज्ञान है। विज्ञान प्राकृतिक संसार व प्राकृतिक प्रक्रिया को रहस्यमयी बनाने की अपेक्षा हमें उत्तर प्रदान करता है, जबकि मज़हब ने हमें इनके बारे में न सोचने को कहा। यह हमें उस प्रश्न का उत्तर देता कि संसार अस्तित्व में कैसे आया अथवा हमारी धरती पर जीवन का उविकास कैसे हुआ। मज़हब कहता है कि अल्लाह ने सब कुछ बनाया, पर यह नहीं बताता कि 'कैसे'। यह प्रश्न कि अल्लाह को किसने बनाया, हमें और भी बड़ी समस्या में डालता है। निश्चित रूप से मज़हब के पास कोई विश्वसनीय उत्तर नहीं है, या यह कहें कि इसके पास ऐसा उत्तर ही नहीं है जिससे कि आगे अनुत्तरित प्रश्न न उठें।

इस पुस्तक का लक्ष्य उन उदारवादी मज़हबी लोगों और विशेषकर मुसलमानों तक पहुंचने का है जो संगीत सुनते हों और सोचते हों कि शादी किये बिना किसी

सहचर से प्यार करने में क्या बुराई है, जो इससे सहमत न हों कि यौनाचार करने पर पत्थरों से मार-मार कर हत्या कर दी जाये अथवा चोरी करने पर हाथ काट लिये जायें आदि। कुछ पश्चिमी पाठक सोचेंगे कि मुझे सुनने वाले लोगों की संख्या बहुत अधिक नहीं होगी क्योंकि अधिकांश मुसलमान ऐसा विचार नहीं रखते हैं, किंतु मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूं कि मज़हबी ठगों जैसे तालिबान या हिज़बुल्लाह को मानने वाले लोगों की तुलना में उदारवादी मुसलमानों की संख्या कहीं अधिक है और मुझे पता है कि कम से कम पाकिस्तान में तो ऐसा ही है। चूंकि मैं पाकिस्तान में पला-बढ़ा हूं, इसलिए अधिकांश विचार पाकिस्तानी मुसलमान और इस्लाम पर केंद्रित होंगे, पर फिर भी मैं पुनः कहना चाहूंगा कि यह पुस्तक केवल मुसलमान अथवा पाकिस्तानी मुसलमान के लिये नहीं है। यह उन सभी लोगों के लिये है जो यह पूछते हैं कि क्या अल्लाह और फ़रिश्तों की कहानियां झूठी हैं। यह पुस्तक उन मुसलमानों के लिये है जो संसार को देखना चाहते हैं, गीत गाना चाहते हैं, संगीत सुनना चाहते हैं, जो समलिंगी हैं, जिन्हें चलचित्र देखना अच्छा लगता है, जो अन्य मनुष्यों या जानवरों के चित्रण वाली चित्रकारी की सराहना करते हैं, जो महिलाओं के साथ समानता का व्यवहार करना चाहते हैं, जो पशुओं की क्रूर हत्या के स्थान पर उनके साथ मानवीय व्यवहार करना चाहते हैं आदि। हां, आप अचंभित हो जायेंगे, ये सभी कार्य वास्तव में इस्लाम के विभिन्न समूहों में प्रतिबंधित हैं।

हमारे पास हज़ारों की संख्या में ऐसे मुसलमान संगीतकार, अभिनेता, अभिनेत्रियां और कार्यकर्ता हैं जो शरिया जैसी अमानवीय व्यवस्था के विरोध में खड़े होते हैं, जो महिलाओं की स्वतंत्रता व पशु अधिकारों आदि के पक्ष में खड़े होते हैं और यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि लाखों ऐसे लोग हैं जो वास्तव में इन संगीतकारों, कलाकारों व कार्यकर्ताओं का समर्थन व सराहना करते हैं। इन लोगों में कुछ महान मुस्लिम विचारक और वैज्ञानिक हैं, जैसे कि नोबल पुरस्कार विजेता एकमात्र मुस्लिम प्रोफ़ेसर अब्दुस्सलाम, प्रसिद्ध क्रिकेटर और आज पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान ख़ान, मलेशिया के प्रधानमंत्री रहे महातीर मोहम्मद, परवेज़ मुशर्रफ़ तथा कई अन्य। मैं इन लोगों की प्रशंसा इसलिये नहीं करता हूं कि इन्होंने अल्लाह का महिमामंडन किया है, अपितु उनके इनके उन कार्यों के लिये करता हूं जो इन्होंने मानवता के लिये किया है, पर मैं उनके प्रयासों का श्रेय केवल उनको देता हूं। मैं इसकी अपेक्षा नहीं करता कि वे अपनी चिंतन पद्धति को परिवर्तित करें।

यह पुस्तक उन मुसलमानों के लिये लिखी गयी है जो अनजाने में उन मूल्यों से असहमत हैं जिसमें इस्लाम के आधारभूत सिद्धांत हैं। इन प्रकार के सभी मुसलमानों के लिये मेरा संदेश यह है कि **या तो एक साथ इस्लाम की भर्त्सना करिये (क्योंकि आप इसके मूल्यों से असहमत हैं) अथवा तालिबान या आईएसआईएस जैसा बन जाइये, क्योंकि वे ही मुहम्मद के इस्लाम के सच्चे अनुयायी हैं। यह बात कठोर प्रतीत हो सकती है, किंतु इस्लाम वास्तव में वही है जो तालिबान और आईएसआईएस का इस्लाम है।** मैं निश्चित रूप से जानता हूँ कि यदि कोई अल्लाह है और यदि आप उसके कुछ विचारों को स्वीकार करें और कुछ की उपेक्षा कर दें तो वह आपसे प्रसन्न नहीं होगा।

अंतत: इस पुस्तक की वास्तविक पाठक वो मुस्लिम महिलाएं हैं जिनके साथ मज़हब द्वारा दुर्व्यवहार हो रहा है। मैं उस दुख और लाचारी के भाव की कल्पना नहीं कर सकता जिससे इस पुरुष-प्रधान मज़हब में एक महिला दैनिक जीवन में त्रस्त है। कोई भी समझदार व्यक्ति समझ सकता है कि न केवल आज के समाज, वरन् भविष्य के समाज के निर्माण में भी महिलाएं कितनी महत्वपूर्ण हैं। फिर भी इस मज़हब में महिलाओं के साथ ऐसे व्यवहार होता है मानों उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य बच्चे जनना और मर्दों की सेवा करना है। मैं उन महिलाओं तक पहुंचना चाहता हूं जो अपने शौहरों, भाइयों या पिताओं के दुर्व्यवहार और भेदभाव का शिकार होती हैं तथा मैं उन महिलाओं को प्रोत्साहित एवं सशक्त करना चाहता हूं जिससे वे अपने बच्चों का पालन-पोषण इस प्रकार कर सकें कि उनके बच्चे उन शौहरों, भाइयों या पिताओं जैसे न बनें।

यह पुस्तक क्यों लिखी?

मेरे जैसे लोग मज़हब की आलोचना केवल इसलिये नहीं करते कि यह मज़हब एक झूठ हैं, अपितु हम ऐसा इसलिये करते हैं क्योंकि यह एक ख़तरनाक झूठ है। ऐसा नहीं है कि हमें कोई ठोकर लगी और उस मिथक को नष्ट करने निकल पड़े जो मानव जनसंख्या के बड़े भाग को अति प्रिय है, वरन् हम ऐसा करने को बाध्य हुए क्योंकि यह मिथक मानव सभ्यता के बड़े भाग के लिये बड़ा ख़तरा है।

इस पुस्तक को लिखने के लिये सबसे बड़ी प्रेरणा मुझे मुस्लिम समुदाय में नास्तिकों की बढ़ती संख्या का ज्ञान होने से मिली। भले ही मैं दस वर्ष से अधिक

समय से नास्तिक रहा था, किंतु मैं मुस्लिम दुनिया में नास्तिकों की संख्या में वृद्धि को लेकर कहीं न कहीं संदेह की स्थिति में था। मुझे भीतर से लगता था कि पाकिस्तान में नास्तिक हैं, किंतु मैं यह नहीं जानता था कि उन नास्तिकों की संख्या कितनी है। इस बारे में जानने के लिये मैंने कुछ पूर्व मुस्लिम नास्तिकों से अंतर्संवाद के लिये एक फेसबुक पेज प्रारंभ किया। कुछ ही सप्ताह में मुझे उस पेज पर भारत और पाकिस्तान के मुसलमानों, हिंदुओं व नास्तिकों के हज़ारों लाइक मिलने लगे। मेरी मृत्यु की कामना करने वाले हज़ारों क्रुद्ध मुसलमानों ने भी मुझसे सम्पर्क किया, पर पाकिस्तान में रहने वाले हज़ारों ऐसे पूर्व-मुस्लिमों ने भी मुझसे संपर्क किया जो अपने जीवन पर ख़तरे के भय में जी रहे हैं। मैं यह जानकर भी कैसे चुप रह सकता था कि जिस देश को कभी मैं अपना घर कहता था वहां मेरे जैसे हज़ारों लोग हैं जिनका उत्पीड़न हो रहा है, जिनके साथ भेदभाव हो रहा है और जिनके मूल मानव अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है?

आप सबने सुना होगा कि इस्लाम दुनिया में सबसे तेज़ बढ़ने वाला मज़हब है। ऐसा है तो, पर वयस्कों के धर्मांतरण की अपेक्षा उच्च जन्म दर के कारण। ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जो यह बताता हो कि इस्लाम स्वीकार करने वाले वयस्कों की संख्या इस मज़हब को छोड़ने वाले वयस्कों की संख्या से अधिक है।

आइये, कुछ मुस्लिम देशों में नास्तिकों अर्थात इस्लाम छोड़ने वाले की बढ़ती संख्या देखें:

देश	**अंतर**	**कुल वर्तमान संख्या (लाखों में) 80**
पाकिस्तान	2001 में + 1% + 2012 में +2%	40 लाख
तुर्की	2013 में + 6: 2015 में.9.4:	48 लाख
मलेशिया	NèA 2012 में + 6:	18 लाख
सऊदी अरब	NèA 2012 में + 5:	16 लाख
नास्तिकों की कुल संख्या		122 लाख

मुझे लगता है कि गैलप इंडेक्स 2012 में दी गयी यह संख्या धरातल पर और अधिक हो सकती है, क्योंकि मुस्लिम दुनिया में नास्तिकता होने पर गंभीर परिणाम भुगतना पड़ता है और वहां यह प्रतिबंधित है। इसके अतिरिक्त उपरोक्त सूची में उल्लिखित देशों के अतिरिक्त और भी मुसलमान देश हैं तो आप सरलता से

अनुमान लगा सकते हैं कि मुस्लिम प्रधान देशों में नास्तिकों की संख्या 1.3 करोड़ से बहुत अधिक है।

मेरे जैसे लोगों के लिये मज़हबी प्रतिष्ठानों की बर्बरता के विरुद्ध अपने विचारों की अभिव्यक्ति अत्यंत आवश्यक है। चूंकि हम आपकी परी कथा में विश्वास करना छोड़ चुके हैं तो आप लोग हमारी हत्या कर देते हैं, हम लोग आप लोगों से बस इतना ही कह रहे हैं कि ऐसा करना बंद कीजिये। यह आग्रह करने से भी मज़हबी प्रतिष्ठान इतने आहत हो जाते हैं कि वे हमारी हत्या के लिये फ़तवा निकालने में प्रसन्न होते हैं। इतिहास ने सिखाया है कि वर्जनाओं को तोड़ने का एकमात्र उपाय उनके बारे में खुलकर बात करना है, जैसा कि यह पुस्तक और मेरे जैसे अन्य लोग करते हैं।

हमें बुरे विचारों का उपहास करते रहना है और बुरी विचारधारा को मानने वालों को आहत करते रहना है। पिछले दस वर्षों की इस ताड़ना का परिणाम है कि सऊदी अरब ने अब महिलाओं को ड्राइविंग करने की अनुमति दे दी है, फिर भी 2013 से अब तक केवल बांग्लादेश में 48 धर्म निरपेक्षतावादी व नास्तिक ब्लॉगरों की हत्या यह कहकर कर दी गयी कि उन्होंने मज़हबी समूहों को आहत किया था। हमको इस्लामी प्रतिष्ठानों द्वारा नास्तिकों की हत्या का विरोध करते रहना है जिससे कि वे उनकी हत्या करना बंद करें। दुर्भाग्य से हममें से कुछ इस प्रक्रिया में मारे जायेंगे, किंतु यह हमारे संघर्ष के रुकने का कारण नहीं बनना चाहिये। 2017 में मशाल ख़ान का समाचार विश्व भर में हेडलाइन बना था, क्योंकि ईशनिंदा वाली फ़ेसबुक पोस्ट के लिये एक इस्लामी भीड़ द्वारा उनकी पीट-पीट कर बर्बरतापूर्वक हत्या कर दी गयी थी। पाकिस्तान की एजेंसियों ने 2017 के प्रारंभिक दिनों में फ़ेसबुक ब्लॉगर अयाज़ निज़ामी को निरुद्ध किया था और 29 अगस्त, 2018 के बाद से हमें उनके बारे कुछ पता नहीं है। वह भी ईशनिंदा के आरोपी हैं और यदि दोष सिद्ध हुआ तो उन्हें मृत्यु दंड मिल सकता है। इन घटनाओं के कारण इन देशों में नास्तिक निरंतर भय में रहते हैं और सामने आने से बचते हैं। मेरे फ़ेसबुक पेज पर मुस्लिम देशों के इन नास्तिकों में से अधिकांश व्यक्तियों ने फ़ेक फ़ेसबुक प्रोफ़ाइल बनायी है जिससे कि वे एजेंसियों का शिकार बनने से बच सकें। यह रुकना चाहिये। इस पुस्तक के लिखने का उद्देश्य इस लक्ष्य को प्राप्त करने का एक छोटा सा प्रयास है।

मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा?

बड़ी संख्या में लोग मुझसे ये प्रश्न पूछते हैं। मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा? मैंने कब निर्णय किया कि अब बहुत हो गया? इसका उत्तर उतना सीधा नहीं है, क्योंकि मेरे जीवन का कोई क्षण ऐसा नहीं था जब इस्लाम की मान्यताओं-और बाद में सामान्य अल्लाह- में मेरा विश्वास खंडित न हुआ हो।

मेरा जन्म पाकिस्तान के लाहौर में एक मुस्लिम परिवार में हुआ। मेरा पूरा परिवार आज भी मुसलमान है और उन्हें अपना मज़हब प्यारा है। पर मैं उनसे थोड़ा भिन्न था। मेरे पास प्रश्न थे। जब मैं बच्चा था तो बालसुलभ प्रश्न पूछता था, पर उनके पास उत्तर नहीं होते थे अथवा उन प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़ने में उनकी कोई रुचि नहीं होती थी। मुझे स्मरण है कि जब मैं 9 या 10 वर्ष का था तो अपनी मां से पूछा कि सब कुछ किसने बनाया और जब उन्होंने कहा कि अल्लाह ने बनाया तो मैंने पूछा कि अल्लाह को किसने बनाया तो उनके पास इस प्रश्न का उत्तर नहीं था।

मेरी नास्तिकता के बाद भी मेरी मां आज भी मुझे प्यार करती है और नहीं चाहती थी कि मैं यह पुस्तक लिखूं। वह मुझे समझा नहीं सकीं कि यह पुस्तक मुझे क्यों नहीं लिखनी चाहिये। 'कोई तुम्हारी हत्या कर देगा', यह उत्तर कोई बहुत अच्छा तर्क नहीं था।

मैं एक मुसलमान के रूप में बड़ा हुआ और जुमा (शुक्रवार) की नमाज़ के लिये मस्जिद जाता था। मैंने परंपरा के अनुसार अरबी में कुरआन पढ़ी, पर बहुत सारी बातों का अब भी कोई अर्थ नहीं है। जब 90 के दशक में मैं पाकिस्तान में बड़ा हो रहा था तो इंटरनेट एक नयी युक्ति थी और उत्तर बहुत सरलता से नहीं मिलते थे तो कुढ़न होती थी। मेरे जीवन में एक समय वह भी आया जब 'अल्लाह ने किया' जैसे घिसे-पिटे वाक्य का कोई अर्थ नहीं रह गया।

इस्लाम अथवा किसी अन्य धर्म की वैधता को समझने के प्रयास में मैंने तीन प्रश्न पूछे:

1. क्या इस अल्लाह के पक्ष में कोई प्रमाण है?
2. क्या इस मज़हब में बतायी गयी नैतिकता अच्छी है?
3. क्या इस मज़हब का विज्ञान सही है?

मैं यहां बता रहा हूं कि यदि मैं कहता कि ये सब मैं स्वयं ही जान सकता था तो अनुचित होगा। 'द गॉड डेल्यूजन' जैसी पुस्तकों ने तर्क के दूसरे पक्ष को समझने में मेरी बहुत सहायता की।

ये तीन प्रश्न मुझे इस्लाम से तो दूर ले गये, किंतु और ईश्वरों का क्या? हिंदुत्व, ईसाईयत, यहूदी, प्राचीन रोमन या यूनानियों के ईश्वर अथवा हज़ारों अन्य ईश्वर जिनकी पूजा करते हुए लोग मर-खप गये? ये सब भी तो दावा करते हैं कि उनका धर्म इन तीन प्रश्नों से होकर आया है। मैंने सभी धर्मों का उतना व्यापक अध्ययन नहीं किया है जितना कि इस्लाम का, पर मैं सामान्य रूप से ईश्वर के चरित्र के बारे में प्रश्नों का उत्तर दे सकता हूं कि लगभग सभी ईश्वरों में इस्लामी या अब्राहमिक अल्लाह के समान लक्षण हैं। सभी धर्मों के विषय में मेरी कुढ़न निम्नलिखित विचारों में समाहित की जा सकती है:

1. अरबों की संख्या में ग्रह-मण्डलों (आकाशगंगा) का सृजनकर्ता हम लघु मानवों के व्यक्तिगत जीवन से इतना आसक्त क्यों है? यदि हम किसी समान लिंगी के साथ सो जायें तो वह क्रोधित हो उठता है। यदि हम किसी के साथ सोने से पहले समारोह न करें तो वह क्रोधित हो उठता है। यदि हम उसकी इबादत न करें तो वह इतना क्रोधित हो उठता है कि अपने ही बनाये मनुष्य को अनंत काल तक नर्क में सतायेगा। उसे इबादत की आवश्यकता क्यों है? इससे मुझे तो यह लगने लगा है कि करोड़ों-करोड़ों ग्रह-मण्डलों के सृजनकर्ता का स्वभाव एक बच्चे जैसा है। यदि मैं किसी बच्चे से कहूं कि उसे कैंडी नहीं ख़ाना चाहिये तो जब तक खा नहीं जायेगा, रोयेगा-चीखेगा। इन सभी ईश्वरों में एक बात समान है-'मेरी पूजा करो, अन्यथा मैं तुम्हें सदा के लिये नर्क में जलाऊंगा!'
2. वह अल्लाह जो चाहता है कि हम उसमें अंधा विश्वास करें, क्यों अपने अस्तित्व का कोई प्रमाण नहीं दे पाता है? वो व्हाइट हाउस के ठीक सामने अपने को प्रकट कर सकता है और सारे युद्धों को समाप्त कर सकता है।

वह आज ही प्रकट हो सकता है और कह सकता है, 'हे, देखो ये मैं हूं। यह मेरा नाम है और मैं चाहता हूं कि तुम ये सब करो।' बस। किंतु वह स्वयं को छिपाना चाहता है और फिर वह हम पर आरोप मढ़ता है कि हम उस पर विश्वास नहीं कर रहे? मुसलमान और अन्य धर्मों के पक्षधर कहते हैं, 'देखो, हमारे ख़ुदा ने अपना संदेश हज़ारों वर्ष पहले भेजा है।' तब यह प्रश्न फिर खड़ा हो जाता है कि अब्राहमिक ख़ुदा ने अपने सारे संदेश मध्यपूर्व के छोटे से भाग में ही क्यों भेजे? उन लोगों का क्या, जो धरती के अन्य भागों में जैसे कि आस्ट्रेलिया या अमेरिका में हैं और उसका संदेश नहीं जान पाये? 15वीं सदी या इसके बाद जब तक कि इन देशों की खोज नहीं हो गयी, इनके लोग मुहम्मद या किसी अन्य मध्य-पूर्वी अल्लाह के विषय में नहीं जानते थे। कल्पना कीजिये कि लाखों-करोड़ों की संख्या में जो लोग उन महाद्वीपों में जन्म लिये और मर गये, वे इन अब्राहमिक ख़ुदा से पूरी तरह अनभिज्ञ थे और वे नर्क की आग में इसलिये जलेंगे क्योंकि उन्होंने ग़लत भौगोलिक क्षेत्र में जन्म लिया था।

3. मुसलमान दावा करते हैं कि मनुष्यों ने पहले के धर्म-ग्रंथों यथा तोरा और बाइबिल को दूषित कर दिया था। क्या सब कुछ रचने वाला सृजनकर्ता यह नहीं जानता कि यदि वह ईसा या मूसा जैसा कोई पैग़म्बर भेजता है तो अन्य लोगों द्वारा उनके संदेश को दूषित कर दिया जायेगा और उसका संदेश लुप्त हो जायेगा? वे लोग उन ग्रंथों पर विश्वास करते हुए जिये और मर गये, पर यदि वे ग्रंथ उनके पूर्वजों द्वारा दूषित कर दिये गये थे तो उन्हें इसका पता कैसे चला?

   मुसलमान बड़े गर्व से डींगें हांकते हैं कि कुरआन को दूषित नहीं किया गया है, पर भले ही यह सही भी हो तो भी, मुझे लगता है कि यह तो दूषित करने से भी अधिक बुरा है क्योंकि इस्लाम के प्रत्येक पंथ की अपनी-अपनी व्याख्या हैं। सुन्नी कहता है कि वही सही है, जबकि शिया मानते हैं कि वे ही सही हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि कुरआन को समझने में भूल हुई, यह गंदे ढंग से लिखा गया है अथवा व्यर्थ की बातों से भरा हुआ है। कुरआन में ऐसी आयतें हैं जिन्हें ग़लत ढंग से समझा गया और आज मुसलमान इस प्रकार की आयतों को 'महाविस्फोट' के साक्ष्य के रूप में

प्रस्तुत करते हैं:

> वो जो काफ़िर हैं, उन्हें नहीं दिखता कि जन्नत और धरती एक साथ सिले गये थे और तब हमने उनकी सिलाई उघाड़ी तथा पानी से सभी जीवित प्राणियों की रचना की? तो क्या इसलिये वो अल्लाह और उसके रसूल में विश्वास नहीं करेंगे? (29:30)

बाद के अध्यायों में मैं इस आयत की त्रुटि की व्याख्या करूंगा, पर यह दार्शनिक प्रश्न की मांग करता है कि यदि ये आयतें वैज्ञानिक रूप से सही हैं तो कोई मुसलमान कभी 'महाविस्फोट' (बिग बैंग) जैसे किसी सिद्धांत का प्रतिपादन क्यों नहीं कर सका? पुनः इसका अर्थ यही होता है कि या तो ये ढंग से लिखा नहीं गया था और इस कारण इसे ग़लत ढंग से समझा गया अथवा इस आयत में 'महाविस्फोट' का कोई उल्लेख नहीं है। मैं मानता हूं कि इसमें महाविस्फोट का उल्लेख ही नहीं है।

4. और इबादत! प्रत्येक मज़हबी व्यक्ति सोचता है कि उनके पास अल्लाह से जुड़ने का विशेष हॉटलाइन है। जब उन्हें कुछ मिल जाता है तो वे सोचते हैं कि इबादत के कारण मिला है। यदि उन्हें नहीं मिलता है तो वे सोचते हैं कि अल्लाह की इच्छा नहीं थी। डेढ़ अरब मुसलमान अल्लाह की इबादत करते हैं, किंतु साढ़े पांच अरब अन्य लोगों का क्या? ये साढ़े पांच अरब लोग निश्चित ही ग़लत ईश्वर की पूजा कर रहे हैं, पर फिर भी उनका जीवन पूर्णरूपेण आनंदयुक्त कैसे है? मज़हबी लोग यह भी सोचते हैं कि कभी इबादत स्वीकार होती है और कभी नहीं होती है। निश्चित ही यहां कुछ गड़बड़ है। आइये, एक प्रयोग करते हैं। यदि आपको कुछ चाहिये तो अल्लाह की इबादत कीजिये और देखिये कि मिलता है या नहीं। अथवा आप अल्लाह की इबादत मत कीजिये और बस इसे प्राप्त करने के लिये कठिन परिश्रम कीजिये।

देखिये, इन दोनों में से क्या काम करता है। निश्चित ही यह धरती के उन साढ़े पांच अरब लोगों के लिये काम करता है जो अरबपति हुए हैं, देशों को स्वतंत्र कराया है, लाखों लोगों का जीवन बचाया है, युद्ध जीते हैं, शासन की उत्कृष्ट प्रणाली का विकास किया है और ब्रहमाण्ड के रहस्य ढूंढ़े हैं। मुसलमान कहेंगे, 'तो, तुम्हें अभी भी कठिन परिश्रम करना है, किंतु इबादत भी करनी है।' यदि कुछ पाने

के लिये आपको कठिन परिश्रम ही करना है तो फिर इबादत की क्या उपयोगिता रह जाती है?

बहुत से लोग मुझसे पूछते हैं कि मैं अपने नास्तिक विचारों को अपने तक सीमित क्यों नहीं रखता हूं। उत्तर बहुत सीधा सा है: मैं स्वतंत्र जीवन जीता हूं जो किसी नर्क के भय से मुक्त है अथवा ऐसे किसी भी बोझ से मुक्त है जो मज़हब से आता है। मैं अपने जीवन का भोग करता हूं और जीवित रहना बड़ी बात है। मैं मदिरा पी सकता हूं, मैं समलिंगियों से घृणा करने को बाध्य नहीं हूं, मुझे यह नहीं सोचना है कि महिलाएं पुरुषों के अधीन या उनसे तुच्छ हैं, मुझे यह नहीं सोचना है कि अल्लाह द्वारा पशुओं की रचना हमारी सेवा के लिये की गयी है, मैं संगीत का आनंद ले सकता हूं, मुझे अन्य धर्मों के लोगों से घृणा करने की आवश्यकता नहीं है और मैं चित्रकारी और कला के अन्य रूपों का आनंद ले सकता हूं। यदि आप नास्तिक होते हैं तो इन सारे बोझों से मुक्ति मिल जाती है और यह संसार एक अच्छा स्थान बनने लगता है, इसलिये मेरे जैसे लोग यह संदेश व इन प्रति-तर्कों को फैलाना चाहते हैं। किसी पूर्व-मुस्लिम से यह कहना कि इस्लाम छोड़ने के बाद इस्लाम के बारे में बात मत करो, वैसा ही है जैसे कि नशे के चंगुल से मुक्त हुए किसी व्यक्ति से यह कहना कि नशा-मुक्ति व पुनर्वास के बाद वे नशे के ख़तरों के बारे में बात मत करें। मुसलमान ऐसा क्यों सोचते हैं कि वे तो अपने मज़हब का उपदेश दूसरों को दे सकते हैं, पर कोई और ऐसा नहीं कर सकता है? मुसलमानों! यदि तुम्हारा उत्तर है 'क्योंकि, हम सही हैं', तब क्षमा करना क्योंकि मैं कहूंगा कि तुम ग़लत हो।

मेरा नाम हारिस सुल्तान है और मैं तुम्हारे अल्लाह में विश्वास नहीं करता।

vè;k; 1

चिंतन कला

जिस प्रकार हमने संसार की रचना की है, वह हमारे चिंतन की प्रक्रिया है। हमारी सोच में परिवर्तन किये बिना इसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।

- अल्बर्ट आइंस्टीन

हम कोई पुस्तक क्यों पढ़ते हैं अथवा कोई पिक्चर क्यों देखते हैं? निश्चित रूप से इसके अनेक कारण हैं, जैसे आनंद, मनोरंजन और प्रेरणा, किंतु मेरे लिये इसका सबसे महत्वपूर्ण कारण है ज्ञान। मानव सभ्यता की सुंदरता यह है कि हमारा पूरा समाज सामूहिक ज्ञान पर आधारित है। ब्रह्माण्ड के ज्ञान अथवा जीव विज्ञान या कला पर किसी एक पुरुष या स्त्री का स्वामित्व नहीं है, अपितु यह वर्तमान ज्ञान को बढ़ाने के लिये हमारे साथी मानवों के सतत् प्रयास का परिणाम है।

मैं व्यक्तिगत रूप से ऐसे अनेक लोगों को जानता हूं जो अपने ज्ञान में वृद्धि न करने को यह कहकर उचित ठहराते हैं कि उनके पास एक पुस्तक जैसे कि कुरआन या बाइबिल है जिसमें सम्पूर्ण जीवन जीने का पर्याप्त ज्ञान दिया हुआ है। इस प्रवृत्ति के साथ बड़ी समस्या यह है कि ऐसे लोग उन उपलब्ध आधुनिक सुविधाओं का भोग करते हैं जिसे उन लोगों द्वारा अपने ज्ञान में वृद्धि करके तैयार किया गया है जो कुरआन नहीं पढ़ते। क्या कुरआन यह व्याख्या करती है कि ओपन-हार्ट सर्जरी कैसे की जाती है? क्या बाइबिल हमें बताता है कि रॉकेट कैसे बनायें जिससे कि हम चंद्रमा और उसके पार जा सकें? निश्चित रूप से नहीं। आज जिस संसार में हम रहते हैं, उसका अस्तित्व उन लाखों-करोड़ों लोगों के प्रयास का परिणाम है जिन्होंने अपनी क्षमतानुसार मानव सभ्यता के सामूहिक ज्ञान में अपना योगदान दिया है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि आपको वो सब कुछ सीखना चाहिये जो मानवजाति ने दिया है, क्योंकि हम सभी किसी न किसी रूप में अज्ञानी हैं। किंतु हम सभी को अधिक से अधिक सीखने को उद्यत होना चाहिये। हम अपने आसपास के संसार के ज्ञान को बढ़ाने के लिये निरंतर प्रयास कर रहे

हैं, किंतु जिस क्षण आपकी सोच यह हो जाये कि 'हमारे पास कुरआन है, अत: हमें कुछ और सीखने की आवश्यकता नहीं है', सीखने की प्रकिया थम जाती है।

मैं जो बात कहना चाह रहा हूं वह यह है कि हम सभी अज्ञानी हैं, किंतु हमें अपना ज्ञान बढ़ाने का प्रयास कभी नहीं छोड़ना चाहिये।

यह पुस्तक अपने पाठकों से पूर्वाग्रह, पहले से बने विचार व मतों से परे होकर मन खुला रखने की अपेक्षा करती है। पूरी पुस्तक में आपके सामने ऐसे तर्क आयेंगे जो आपके चिंतन के ढर्रे का विरोध करेंगे तथा आप इसे छोड़कर भाग जाना चाहेंगे। निश्चित रूप से किसी पुस्तक को पढ़ने का यह ढंग नहीं है। मैं अपने पाठकों से अपेक्षा करता हूं कि वे पढ़ें और जो निष्कर्ष मैंने प्रस्तुत किया है उसे समझें। जब आपके सामने कोई तर्क आयेगा तो दो विकल्प होंगे:

ए) आप तर्क और इसके आशय व निष्कर्ष को पढ़िये तथा गंभीर चिंतन किये बिना उसे स्वीकार कर लीजिये, क्योंकि आप पहले से ही उस पर विश्वास करते हैं अथवा आप सीधे उसे अस्वीकार कर दीजिये क्योंकि वह आपके पूर्वधारित विचारों पर सीधा प्रहार करता है।

बी) आप वह तर्क पढ़ सकते हैं, उसके आशय को समझ सकते हैं और मान सकते हैं कि इसमें दिया गया निष्कर्ष सही है, अपने विवेक का प्रयोग करते हुए निष्कर्ष का परीक्षण कीजिये अथवा उस पर प्रश्न कीजिये और फिर अपने निष्कर्ष पर पहुंचकर उसे स्वीकार कीजिये या अस्वीकार कीजिये।

मैं अपने पाठकों से यह पुस्तक पढ़ते समय बी पद्धति अपनाने की अपेक्षा करता हूं। मैं समझ सकता हूं कि ऐसे विचारों को सुनना कितना कठिन व कुढ़न भरा होगा जो आपके उस विश्वास पर प्रहार करता है जिसे जीवन भर आपने माना है। पर किसी को यह प्रश्न पूछना चाहिये, 'क्या मैं वास्तव में असहिष्णु, अधीर और अहंकारी मानव होना चाहता हूं? क्या मैं वास्तव में ऐसा व्यक्ति होना चाहता हूं जो किसी निश्चित मत को मानता है और यह नहीं चाहता कि कोई उसके मत पर प्रश्न उठाये या उसके विषय में बोले?' मेरा विश्वास है कि जब तक आप आईएसआईएस या तालिबान के सदस्य नहीं हो जाते, आपका उत्तर होगा नहीं। मैं नहीं चाहता कि जो मैं कह रहा हूं उस पर आप आंख बंद कर विश्वास करें, इसकी अपेक्षा मैं आपको प्रोत्साहित करूंगा कि इस पुस्तक को तटस्थ भाव से पढ़िये और इसमें दिये गये किसी तर्क को पकड़कर उस पर अपने आलोचनात्मक

विवेक का प्रयोग कीजिये और उस पर प्रश्न कीजिये।

आलोचनात्मक विवेक सामान्य विवेक के विपरीत होता है। यद्यपि सामान्य विवेक तथ्यों को देखने का अच्छा ढंग है, किंतु आलोचनात्मक विवेक इससे अधिक महत्वपूर्ण है। आलोचनात्मक विवेक का अर्थ आपके समक्ष आयी किसी व्याख्या पर नीर-क्षीर विवेकी दृष्टि से चिंतन करना है। आलोचनात्मक विवेक कहीं अधिक महत्वपूर्ण इसलिये होता है, क्योंकि सामान्य विवेक केवल वर्तमान ज्ञान पर काम करता है। सामान्य विवेक का आशय होता है कि आज जो ज्ञान हमारे पास है वही अंतिम सत्य है, जबकि प्राकृतिक संसार ऐसी परिघटनाओं से भरा पड़ा है जिन्हें हम नहीं समझते और ऐसी अज्ञात परिघटनाओं पर सामान्य विवेक का प्रयोग करना व्यर्थ होता है।

उदाहरण के लिये, एक समय ऐसा भी था कि हम मानते थे धरती चपटी है तो सामान्य विवेक यह कहता था कि संसार के अंतिम छोर की यात्रा नहीं करनी चाहिये, अन्यथा हम गिरकर मर जायेंगे। उस समय के आलोचनात्मक चिंतकों ने इस विचार में कुछ समस्या देखी और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि धरती वास्तव में गोल है। स्पष्ट रूप से सामान्य विवेक ने इस परम सत्य के साथ न्याय नहीं किया। ऐसे में लोगों ने साक्ष्य ढूंढना प्रारंभ किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि धरती वास्तव में गोल है। जो साक्ष्य उन्होंने एकत्र किये वो अंततः अन्य लोगों को पर्याप्त विश्वास दिलाने में सफल भी रहा और अब धरती का गोल होना सामान्य विवेक बन चुका है। पद्धति ए की अपेक्षा पद्धति बी के महत्व पर बल देने के लिये आइये कल्पना करें कि हम छठी शताब्दी के यूनान में हैं, जब चपटी धरती का विचार अत्यंत लोकप्रिय था। अब एक ही समय पर दोनों अवधारणाओं पर विचार करें और सत्य जानने में अपने आलोचनात्मक विवेक का प्रयोग करें।

अवधारणा 1: धरती चपटी है, क्योंकि यह चपटी दिखती है।

पद्धति 'ए' की सोच इस अवधारणा को बिना किसी संदेह के सीधे स्वीकार कर लेती है। किंतु पद्धति 'बी' यह मांग करती है कि हम यह मानें कि यह सिद्धांत सही है, पर फिर भी इस पर प्रश्न उठायें और साक्ष्य को ढूंढें। उदाहरण के लिये ऐसे भी मनुष्य हैं जिन्होंने धरती के अंतिम छोर तक यात्रा की है, पर वे कभी उस बिंदु पर क्यों नहीं पहुंचे जहां धरती के किनारे से सीधा पात (गिरावट) होता है? आइये, इसके दो संभावित कारणों पर विचार करते हैं:

ए) धरती का कोई किनारा ही नहीं है और यह सदा सतत् रहती है अथवा

बी) कोई अन्वेषक किनारे तक पहुंच ही नहीं सका है और जो वहां तक पहुंचे वे किनारे से गिरकर मर गये।

हम पहली संभावना को नकार सकते हैं, क्योंकि हम प्रतिदिन सूर्योदय और सूर्यास्त देख सकते हैं तथा धरती कितनी भी बड़ी क्यों न हो, पर यह निश्चित है कि यदि सूर्य इसके चारों ओर चक्कर लगाता है तो यह धरती अनंत रूप से बड़ी नहीं हो सकती है। इस स्थिति के पक्ष में दूसरी संभावना यह हो सकती है कि सूर्य पश्चिम सागर में डूब जाता है, किंतु तब इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता है कि फिर यह पूर्वी सागर से उदय क्यों होता है। यह संभावना कभी वास्तव में ग्राह्य नहीं रही।

अब हम दूसरी संभावना पर ध्यान केंद्रित करेंगे। मस्तिष्क में उन सभी अनुसंधानों को रखा जाये जो लोगों ने किये हैं तो यह मानना विश्वसनीय होगा कि ऐसा कोई बिंदु है ही नहीं।

स्पष्ट है कि यह अनुमान परम सत्य नहीं है, किंतु यह हमें सत्य के निकट अवश्य लाता है और उस अवधारणा पर संदेह को जन्म देता है। सत्य के और निकट जाने के लिये हम सागर तट के किसी ऊंचे टीले पर खड़े होकर तट की ओर आ रहे जलपोत (जहाज) को देखें। जब हम पोत को दूर से आता देखेंगे तो पायेंगे कि सर्वप्रथम जलपोत का शीर्ष भाग दिखता है और जैसे-जैसे यह निकट आता जाता है उसका शेष भाग भी दिखने लगता है। यदि धरती चपटी होती तो पूरा जलपोत एक बार में दिखता, परंतु ऐसा होता नहीं है।

सहस्त्रों वर्षों से लोग चंद्रग्रहण का प्रेक्षण कर रहे हैं और एक विचारधारा के अनुसार चंद्रग्रहण ही वह परिघटना थी जिसने लोगों को यह प्रश्न करने पर विवश किया कि धरती चपटी है या नहीं। चंद्रग्रहण तब होता है जब सूर्य और चंद्रमा के मध्य पृथ्वी आ जाती है तथा पृथ्वी चंद्रमा पर अपनी छाया डालती है। यदि आप अपनी परछाई पर दृष्टि डालें तो आपको अपने आकार का अच्छा आभास हो सकता है। नीचे दिये गये चित्र पर विचार कीजिये। यह चित्र अगस्त 2010 के चंद्रग्रहण का है। इसमें आप स्पष्ट रूप से चंद्रमा पर धरती की छाया देख सकते हैं और यह भी देख सकते हैं कि यह छाया एक चाप (अर्द्ध वृत्त) जैसा है जो प्रत्यक्ष रूप से धरती के आकार को प्रकट कर रहा है।

इसके अतिरिक्त हम कई मास तक अथवा वर्ष भर तक के लिये आवश्यक भोजन व पानी के साथ अनुसंधान मिशन भेज सकते हैं। यदि वे सागर में पूरब की ओर बढ़ते हैं और पश्चिम की ओर से वापस होते हैं तो इसका अर्थ यह होगा कि धरती चपटी नहीं है। वास्तव में फ़र्डिनैंड मैगेलन व जुआन सेबस्टियन इलांको द्वारा 1519-1522 में इसी विधि से यह सिद्ध किया गया था। यदि आप अपने चक्षुओं से साक्ष्य देखना चाहते हैं तो आप अकेले नहीं हैं। कुछ लोग अपनी आखों से यह देखने के लिये दृढ़निश्चयी रहे हैं। जैसे कि जब मैं यह पुस्तक लिख रहा हूं तो अमरीकी फ़्लैट-अर्थर माइक हफ़्स एक देसी रॉकेट में 1800 फीट ऊपर जाने का प्रयास कर रहे हैं जिससे कि वे देख सकें धरती में वक्रता अर्थात गोलाई है या नहीं। 1800 फीट की ऊंचाई से (जो लगभग 550 मीटर होगी इससे अधिक ऊंचे भवन विद्यमान हैं) उन्हें धरती की कोई वक्रता नहीं दिखने वाली है। पिछली बार मैंने पता किया तो ज्ञात हुआ कि स्थानीय सरकार ने सुरक्षा कारणों से उन्हें ऐसा करने से रोक दिया था।

तो यदि हमें धरती के चपटे होने पर संदेह होने लगा है तो अब यह हमारी उस अवधारणा की परीक्षा के योग्य है कि धरती गोल है।

अवधारणा 2: धरती उसी प्रकार गोल है, जैसा कि हम आकाश में खगोलीय पिंडों को देख सकते हैं।

इस अवधारणा के परीक्षण के लिये हमें अब यह मानना होगा कि यह सही है और प्रश्न पूछना होगा। यदि धरती गोल है तो चपटी क्यों प्रतीत होती है?

कल्पना कीजिये आप किसी अन्य ग्रह की सतह पर चल रहे हैं तो क्या यह भी चपटा प्रतीत होगा अथवा ये गोल दिखेगा? आइये, एक मानसिक प्रयोग करने का प्रयास करें: यदि आप मानते हैं कि हमारे शरीर के आकार की तुलना में सूर्य का आकार बहुत बड़ा है तो स्पष्ट रूप से उत्तर होगा कि यह चपटा प्रतीत होगा। अच्छा हम पूछें कि यदि धरती गोल होती तो यह कैसी दिखती? क्या यह चपटी दिखती अथवा ऐसा अनुभव होता जैसे कि हम किसी बड़ी गेंद पर चल रहे हों? अब आप जिस गेंद पर चल रहे हैं उसका आकार बढ़ाते जाइये तो आप पायेंगे कि गेंद जैसे-जैसे बड़ी होती जायेगी, वैसे-वैसे आपको यह चपटी प्रतीत होगी। यदि यह मानसिक प्रयोग आपके लिये काम नहीं कर रहा है तो इसी प्रकार का भौतिक प्रयोग कर सकते हैं, जैसे कि हमने तब किया था जब पहली अवधारणा का परीक्षण कर रहे थे: यदि धरती गोल है तो पूर्व की ओर जा रहे जलपोत पश्चिम की ओर से आयेंगे। चूंकि ऐसा हुआ है तो हम अपनी उस अवधारणा से सहमत हो सकते हैं कि धरती गोल है। आशा है अब मैंने प्रदर्शित कर दिया है कि हमें किसी सिद्धांत, अवधारणा अथवा किसी तर्क का भी परीक्षण पद्धति बी को चुनकर कैसे करना चाहिये।

धरती चपटी है या गोल, यह सत्य जानने की अपेक्षा कुछ परम सत्य को जानना निस्संदेह कठिनतम है। उदाहरण के लिये, हमारा वर्तमान ज्ञान यह नहीं बताता कि महाविस्फोट से पूर्व क्या हुआ और सैद्धांतिक रूप से हम लगभग सभी सिद्धांतों में अनेक प्रकार की समस्याएं पाते हैं। यद्यपि हमने कुछ परम सत्य को जान लिया है, किंतु अभी भी बहुत कुछ जानने के लिये शेष है।

चूंकि हम पूरी निश्चिंतता के साथ इस बात को झुठला नहीं सकते हैं कि ईश्वर (ईश्वरों) ने हमारे ब्रह्माण्ड की रचना की है तो मैं यह दावा नहीं करूंगा कि वैसा कोई ईश्वर नहीं है। पर इस पुस्तक में बहुत से ऐसे तर्क मिलेंगे कि हमारे ख़ुदा (मज़हबी अल्लाह) का अस्तित्व निश्चित ही लगभग नहीं है। मुझे यह तो स्वीकार करना चाहिये कि ऐसी पारलौकिक सत्ता को न मानना लगभग असंभव है जिसने समूचे ब्रह्माण्ड को रचा है, किंतु मेरा दृढ़ मत है कि अभी तक कोई ज्ञात धर्म इस सत्ता का वर्णन नहीं कर पाया है। उनका सृजनकर्ता अति लघु, अहंकारी, क्रुद्ध और अत्यंत अवैज्ञानिक है, जबकि वह देवता जिसने ब्रह्माण्ड की रचना की होगी वह अत्यंत विराट और क्रोध, प्रसन्नता, दुख, प्रतिशोध आदि भावनाओं से मुक्त

होगा। उसे उस मानव से किसी प्रामाणिकता की आवश्यकता नहीं होगी जिसको उसने बनाया है। जिस प्रकार ऊपर किये गये मानसिक प्रयोग से हमें कोई निर्णायक उत्तर नहीं मिलता है, पर इससे विमर्श के एक पक्ष को दूसरे पक्ष से अधिक समर्थन अवश्य मिलता है, उसी प्रकार इस पुस्तक में विभिन्न मानसिक प्रयोग और तर्क यह इंगित अवश्य करेंगे कि जिस अल्लाह का परिचय मनुष्य ने कराया है वह किसी वास्तविक ईश्वर से बहुत दूर है। हम अल्लाह को पूर्णत: असत्य सिद्ध नहीं कर सकते, पर यह अपने आप में कोई साक्ष्य नहीं है कि अल्लाह का अस्तित्व है। भले ही ईश्वर कितना भी असंभाव्य हो, पर चूंकि हम उसे झुठला नहीं कर सकते तो हम उसके अस्तित्व को पूर्णत: नकार भी नहीं सकते हैं।

तथापि मानव मस्तिष्क ने मज़हब का अध्ययन करके जिस अल्लाह की कल्पना अब तक की है, उसे हम पद्धति बी का प्रयोग करके पूर्णत: असत्य सिद्ध कर सकते हैं। यदि हम मज़हब का अध्ययन खुले मन से करें तो इसमें पहले से ही दिख रहे छिद्रों को पकड़ सकते हैं। इस पुस्तक का अधिकांश भाग मानव की अंधी कल्पना द्वारा निर्मित उन ईश्वरों यथा अपोलो, जीसस, याहवा, अल्लाह आदि परंपरागत ईश्वरों के विरुद्ध तर्क प्रस्तुत करेगा। यद्यपि यह पुस्तक उस आस्तिक ईश्वर की असंभाव्यता को भी रेखांकित करेगी जिसने समूचा ब्रह्माण्ड बनाया, किंतु वह ईश्वर मानव या दूसरे ग्रहों पर किन्हीं अन्य प्राणियों के जीवन में हस्तक्षेप नहीं करता है। सीधी सी बात है कि इस आस्तिक ईश्वर ने ब्रह्माण्ड बनाया और छोड़ दिया। मुझे यह स्वीकार करना होगा कि तटस्थेश्वरवादी अर्थात हमारे जीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप न करने वाले ईश्वर को झुठलाना अधिक कठिन है, बनिस्बत उस ख़ुदा के जो संभावित रूप से हमारे दैनिक जीवन में हस्तक्षेप करता है और हमारी प्रार्थनाएं सुनता है।

परंतु जिन ईश्वरों से हमारा सरोकार है वे वही हैं जिनके लिये लोग आपस में लड़ रहे हैं। ऐसे ईश्वर निश्चित ही थीस्टिक अर्थात अन्य सब के विरोधी हैं, न कि ये तटस्थ रहने वाले ईश्वर हैं।

विचार परिवर्तन

धार्मिक समर्थक और विशेष रूप से मुसलमान मज़हबी पक्षधर कहने को तत्पर रहते हैं, 'तुम नास्तिक लोग सदैव परिवर्तित होते रहते हो, क्योंकि विज्ञान सदा परिवर्तनशील होता है। किंतु हमारे पास ऐसी पुस्तक है जो कभी नहीं परिवर्तित

होती है, इस कारण हम अपने विश्वास में स्थिर रहते हैं।' यह सत्य है कि हम श्रेष्ठतर साक्ष्यों व तर्क के प्रकाश में अपने विचार परिवर्तित करते रहते हैं और यह एक अच्छी बात है जो कि हमारे पक्ष में काम करता है। जब आपको अल्लाह के शब्दों में कमियां या त्रुटियां मिल जायें तो भी आप इसे परिवर्तित नहीं कर सकते हैं। आपको अल्लाह के त्रुटिपूर्ण विचारों के साथ ही रहना पड़ेगा। कोई समझदार व्यक्ति यदि अच्छा प्रमाण व तर्क पायेगा तो उसका विचार परिवर्तित होगा, किंतु अपनी प्राचीन पुस्तक को फेंकने की अपेक्षा मज़हबी उन सदियों पुराने मिथक और विचारों से चिपका रहता है जिनका भंडाफोड़ पहले ही हो चुका है।

मानवता के सबसे बड़े लक्षणों में से एक मन-मस्तिष्क में परिवर्तन के योग्य होना है, फिर भी लोग, विशेषकर राजनेता और अधिवक्ता सदा इस बात को लेकर चिंतित रहते हैं कि कहीं वे अपने विचार परिवर्तन में पकड़ न लिये जायें। यदि आपको और अच्छे साक्ष्य व तर्क मिलते हैं तो मानस परिवर्तन में बुराई क्या है? ये लोग डरते हैं कि यदि वे किसी विषय पर अपनी वैचारिक स्थिति से हटते होते हुए पकड़े गये तो अस्थिर कहकर उनका उपहास किया जायेगा और ऐसे लोग डरते हैं कि तब लोग उनको गंभीरता से नहीं लेंगे। यह हमारे समाज की दुखद स्थिति है कि उन लोगों का उपहास किया जाता हैं जो साक्ष्यों के आलोक में अपने विचारों में परिवर्तन लाते हैं, जबकि ऐसे लोगों की सराहना की जाती है जो हठपूर्वक अपने अप्रासंगिक विचारों से चिपके रहते हैं।

यही कारण है कि मुझे 'रुढ़िवादियों' से समस्या है, क्योंकि परिभाषा के अनुसार वे परिवर्तन के विरुद्ध रहते हैं और अपने पारंपरिक मूल्यों को पकड़ कर बैठे रहते हैं। बिना परिवर्तन के आप अपनी वर्तमान स्थिति में कैसे सुधार ला सकते हैं? हमें यह अच्छा लगे या नहीं, पर हम सब परिवर्तित होते हैं, यहां तक कि रुढ़िवादी भी। यदि मुसलमानों या ईसाइयों के जैसे हम सभी अपरिवर्तित रहते तो जिस प्रकार कुरआन और बाइबिल उन्हें दास (गुलाम) रखने की अनुमति देता है, वैसे ही हम अभी भी दास रख रहे होते। हम आज दासविहीन संसार में जी रहे हैं तो यह उनके कारण है 'जिन्होंने अपना विचार परिवर्तन किया।'

मुसलमान पक्षधर तर्क देते हैं,'विज्ञान परिवर्तनशील है, अर्थात इसमें त्रुटियां हैं, किंतु हमारी पुस्तक परिवर्तित नहीं होती है।'

वे इस तर्क का प्रयोग प्रायः उद्विकास के विरोध में करते हैं, मानोकि वे

इस पर इसलिये बल दे रहे हैं क्योंकि कुछ वैज्ञानिक मत समय के साथ परिवर्तित हो जाते हैं और इसलिये एक दिन उद्विकास को भी नकार दिया जायेगा, अत: हमें आदम और हव्वा की अवधारणा पर सीधे टिके रहना चाहिये क्योंकि यह उनकी पुस्तक में लिखा है।

कुछ सत्य संदेह से परे स्थापित होते हैं, जैसे कि सूर्य चंद्रमा से बड़ा है और उद्विकास (विकासक्रम) भी इसी श्रेणी में आता है। जैसा कि डार्विन जानते थे कि उद्विकास न केवल जीवाश्म साक्ष्यों से प्रमाणित है, वरन् यह आनुवंशिकी स्तर पर भी स्पष्ट होता है। सभी जीव जीवन-वंशावली में पूर्णत: उपयुक्त बैठते हैं। उद्विकास कहीं नहीं जा रहा, अत: उद्विकास के समर्थन में जो साक्ष्य हैं उनके आलोक में अपने विचार में परिवर्तन करना उत्तम विचार है, बनिस्पद आदम व हौव्वा की उस अवधारणा से चिपके रहना जिनका कहीं कोई साक्ष्य नहीं है।

मज़हबी पक्षधरों के अन्य कई दावों के जैसा ही यह दावा भी कपटपूर्ण है कि वे इस कारण परिवर्तित नहीं होते हैं क्योंकि उनके पास अल्लाह के शब्द हैं। उदाहरण के लिये 150 वर्ष पूर्व इस्लामी दुनिया में कोई भी यौन-दासता (सैक्स-स्लेव) को उचित ठहराने वाली आयतों की पुनर्व्याख्या कोई नहीं करता था, किंतु अंतत: वे उसकी पुनर्व्याख्या करने लगे और अल्लाह के शब्दों को परिवर्तित करने लगे। जब अल्लाह के शब्दों के बारे में वे ऐसा कर सकते हैं तो उचित साक्ष्य व तर्कों के प्रकाश में वे अपने अन्य विचार भी परिवर्तित कर सकते हैं। आजकल मुस्लिम विद्वत दुनिया में यह विमर्श बहुत तेजी पर है कि इस्लाम बाल विवाह की अनुमति देता है या नहीं। ऐसा वे उन हदीसों की पुनर्व्याख्या करके कर रहे हैं जो दर्शाते हैं कि जब मुहम्मद ने आयशा से यौन सम्बंध बनाया तो वह 9 वर्ष की थी। वे स्पष्टत: इन हदीसों को नकार रहे हैं, क्योंकि वे परिवर्तन के महत्व को समझते हैं। विमर्श का एक और गर्मागर्म विषय इस्लाम में बीबी की पिटाई है। अल्लाह ने कुरआन में स्पष्ट रूप से कहा है कि तुम बात न मानने वाली बीबी की पिटाई कर सकते हो। पचास वर्ष पूर्व इस बुराई को कोई समस्या ही नहीं माना जाता था, अत: इसकी पुनर्व्याख्या अथवा इसके विषय में मत परिवर्तन की आवश्यकता ही नहीं थी। आज जब पश्चिम के लोग और विशेषकर पूर्व-मुस्लिम इसकी सतत् निंदा करने लगे, उपहास उड़ाने लगे तो वे अल्लाह के शब्दों में फेरबदल कर रहे हैं। कुछ कह रहे हैं कि 'चूंकि मुहम्मद ने अपनी बीबियों को नहीं

पीटा था तो हमें भी नहीं पीटना चाहिये। 'दूसरे कह रहे हैं, 'तुम उनकी हल्की पिटाई कर सकते हो, पर ऐसा न मारो कि अस्थियां टूट जायें।' यह अल्लाह की दुनिया के आसपास चल रही मानसिक कसरत है। वे जानते हैं कि आज के समाज में ऐसा करना अस्वीकार्य है, इसलिये वे अल्लाह के शब्दों में सुधार कर अपना और अपने लोगों का मन-मस्तिष्क परिवर्तित कर रहे हैं।

यही कारण है कि प्रगतिशील चिंतक मज़हब की निंदा करते हैं। सच यह है कि मज़हब प्रगतिशील चिंतन में बाधा पहुंचाता है। यदि आपके पास आदम और हौव्वा को प्रथम मानव बताने वाली पुस्तक नहीं है तो भी आप आधुनिक वैक्सीन के अविष्कार में पिछड़ नहीं जायेंगे और यह भी सच है कि आधुनिक वैक्सीन का अविष्कार उद्विकास को समझे बिना नहीं हो सकता था। यदि आपके पास ऐसी पुस्तक नहीं है जो कहे, 'बीबी की पिटाई करो' तो आपका ध्यान इस ओर जायेगा ही नहीं कि बीबी की पिटाई कैसे की जाये।

तो आशा है कि अब आपको समझ में आया होगा कि तर्क और साक्ष्य के साथ दृष्टिकोण परिवर्तन करने में कोई बुराई नहीं है तथा अब आप मज़हब में घुसने से पूर्व पद्धति बी को चुनेंगे और विचारों में परिवर्तन लाने से भयभीत नहीं होंगे।

vè;k; 2

मज़हब की आवश्यकता

> क्रिस्टोफर हिचेंस ने समझा कि ब्रह्माण्ड हमारे होने या न होने की चिंता नहीं करता तथा हमारे जीवन का अर्थ केवल इस सीमा तक है कि हम जीवन को सार्थक बनायें।

-नास्तिक वार्षिक सम्मेलन, 2012 में क्रिस्टोफर हिचेंस पर डॉ लॉरेंस क्रास

मज़हब के पक्षधरों का प्रिय तर्क है कि मज़हब समाज को व्यवस्थित बनाये रखने के लिये आवश्यक है। वे सोचते हैं कि यदि हमारे पास ईश्वर नहीं होता तो यह संसार एक ऐसा भयानक स्थान होता जहां बलात्कार, हत्या व लूटपाट ही समाज का प्रतिमान बन जायेगा और इस पर कोई रोक-टोक नहीं होगी। वे यह भी सोचते हैं कि मज़हब अपने अनुयायियों को आशा व सुख देता है जो कि मानसिक शांति के लिये आवश्यक है। बड़े परिमाण में ऐसे तर्क हैं जो मज़हब के पक्षकार हमें यह बताने के लिये देते हैं कि किस प्रकार मज़हब समाज की आवश्यकता है, किंतु कुछ दृष्टिकोणों को बचाने के लिये उनमें से सर्वाधिक लोकप्रिय तर्कों को ही उठाऊंगा।

मैं एक बार अपने एक ऐसे मुस्लिम मित्र के साथ बातचीत कर रहा था जिसका मानना था कि मज़हब महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह हमें नीति-सिद्धांत व नैतिकता सिखाता है। मुझे आश्चर्य हुआ, यद्यपि अच्छा भी लगा (और इस अध्याय के लाभ के लिये भी) कि उसने मज़हब की नैतिक श्रेष्ठता की व्याख्या के लिये उदाहरणों में सबसे कम गूढ़ जो था उसे उठाया। उसने कहा कि मज़हब हमें अपने भिन्न-भिन्न संबंधों को पहचानने में सहायता करता है, क्योंकि यह बताता है कि मां या बहनों के साथ संभोग नहीं करना चाहिये और यदि मज़हब नहीं होता तो हम सब ऐसे अगम्यागामी (वर्जित) संबंध बना रहे होते। मुझे यह स्वीकार करना होगा कि इस उदाहरण से मैं अपेक्षाकृत प्रभावित हुआ, किंतु मुझे प्रसन्नता है कि मैंने इस कच्चे तर्क का प्रत्युत्तर दिया। मैं जानता था कि मेरे मित्र

को उद्विकास की कोई जानकारी नहीं है, अत: मेरे लिये यह समझना सरल था कि क्यों वह कुरआन को अल्लाह के शब्द समझता है।

उद्विकास का सिद्धांत हमें 'सबसे उपयुक्त की उत्तरजीविता' की अवधारणा अर्थात प्राकृतिक चयन के माध्यम से प्राणियों का सातत्य सिखाती है।

उदाहरण के लिये, यदि चीता वृक्षों पर नहीं चढ़ सकता तो सिंहों व गैंडों से बच पाना उसके लिये कठिन होता। चीते वृक्षों पर चढ़ पाने में सक्षम होते हैं, इस कारण उनकी उत्तरजीविता की संभावना अधिक होती है और इसलिये वे अधिक संतान उत्पन्न कर पाते हैं। पशु जगत के इतिहास में हमें ऐसे भी पशु मिलते हैं जिनका स्थान उनसे तीव्र और शक्तिशाली समकक्षों ने ले लिया, क्योंकि वे अपने परिवेश के साथ सामंजस्य नहीं बिठा सके। यह आवश्यक नहीं है कि उद्विकास केवल सबसे शक्तिशाली होने के बारे में हो। डायनासोरों के लुप्त होने के पश्चात मांद में रहने वाले लघु स्तनधारी जो इस समय तक उनका भोजन हुआ करते थे, बाहर निकलने लगे और संसार की संभावना ढूंढने लगे। दूसरे शब्दों में (बाह्य संसार की कुछ सहायता से), ये लघु स्तनधारी उन (दैत्याकार डायनासोर) से अधिक उपयुक्त (फ़िट) थे और विश्व उन्हें विरासत में मिल गया। यदि ये लघु स्तनधारी धरती की सतह पर रह रहे होते तो डायनासोरों के साथ ही वे भी मर गये होते और मानव का अस्तित्व कभी न होता। अब मैं कुछ 6.3 करोड़ वर्ष पहले के समय को देखूंगा जिसके बाद पहली बार होमीनाइड (मानव से मिलते-जुलते जीव) दिखना प्रारंभ हुए। हां, मैं जानता हूं कि आप कुछ बातों को लेकर सशंकित होंगे, किंतु पद्धति बी के अनुसार आइये आगे बढ़ें।

मेरे लिये यह बताना महत्वपूर्ण है कि यद्यपि डार्विनवाद हमें बताता है कि प्रकृति सर्वाधिक उपयुक्त की उत्तरजीविता पर चलता है, पर उद्विकास के सिद्धांत के पक्षकार यह नहीं बताते कि हमें अपने समाज का संचालन ऐसा करना चाहिये जो प्रकृति का प्रतिबिंब हो। उदाहरण के लिये प्रकृति में यदि एक मां के कई बच्चे हैं तो वह अधिक शक्तिशाली बच्चों को जीवित रखने के लिये दुर्बल को मार देगी और खा जायेगी। हम अपने समाज को इसके लिये प्रोत्साहित नहीं करते कि यदि भूखे हो अथवा पालने की स्थिति में न हों तो बच्चों को मारकर खा जायें। भले ही प्रकृति इसी प्रकार कार्य करती है, पर हमें पता है कि हमारे समाज को यह नहीं करना है। नास्तिक लोग ऐसे जंगल राज (प्राकृतिक) आधारित समाज का सुझाव

नहीं दे रहे हैं, जहां कि शक्तिशाली दुर्बल को नष्ट कर दें, अपितु वे इस पर बल देते हैं कि हम तर्क आधारित श्रेष्ठ समाज का निर्माण करें।

फिर से अपने मित्र की बातचीत पर आते हुए कहता हूं कि प्रजनन (बच्चे जनना) अच्छा या बुरा है यह एक वैज्ञानिक प्रश्न है, न कि दार्शनिक प्रश्न। जैसे कि हम यहां हैं तो यह निष्कर्ष निकालना विश्वसनीय है कि आरंभिक मानवों में अन्त:प्रजनन (वर्जित संबंधों से बच्चे जनना) का चलन नहीं था, अथवा कम से कम यह कहा जा सकता है कि जो ऐसा करते थे वे बहुत लंबा नहीं जीते थे। मस्तिष्क में यह ज्ञान लेकर मैंने अपने मित्र को उत्तर दिया कि आधुनिक मानव के रूप में मैं यह जानता हूं कि यदि कोई वर्जित संबंध बनाता है तो वह व्यक्ति मानव जाति के नष्ट होने में योगदान कर रहा होगा तथा यह मानना विश्वसनीय है कि आरंभिक मानव अन्त:प्रजनन के परिणामों से अवगत था।

यदि जब पहली बार मानव को बताया गया कि अंत:प्रजनन नहीं किया जाना चाहिये तो उस समय ये मज़हब होते तो बताते कि इस्लाम, ईसाई धर्म अथवा यहूदी धर्म (जैसा कि विदित है कि मानव सभ्यता इन धर्मों से बहुत प्राचीन है) के आने से पहले हज़ारों वर्षों से अंत:प्रजनन होता आ रहा था। किंतु यदि ऐसा होता कि हज़ारों वर्षों से अंत:प्रजनन हो रहा होता तो मानव जाति बहुत पहले समाप्त हो गयी होती और ईसामसीह या मुहम्मद कभी जन्म ही नहीं लेते। यह सत्य है कि बहुत सी संस्कृतियों जैसे कि इजिप्ट या रोम में वर्जित संबंधों में यौन-संबंध प्रचलन में थे, किंतु यह प्रथा संभवत: केवल शासक वर्ग में सदा से रही, न कि साधारण जनता में।

यह समझ में आता है कि कुछ ईसाई और मुसलमान उल्लेख करें कि मैं यह कह रहा हूं कि मानव ईसा या मुहम्मद के आने के सैकड़ों हज़ारों वर्ष पूर्व से हैं। यह सही है, क्योंकि मानव का अस्तित्व सैकड़ों-हज़ारों वर्ष पहले से है और हमारे पास ऐसे जीवाश्म अंकन हैं जो इसका अनगिनत प्रमाण देते हैं। यद्यपि तर्क के लिये मैं इस कथन पर बल नहीं दूंगा कि मानव सैकड़ों-हज़ारों वर्ष पूर्व से रहा है, इसकी अपेक्षा मैं ईसाइयों की उस व्याख्या पर विचार करूंगा कि धरती का अस्तित्व लगभग छह हज़ार वर्ष पुराना है। मैं पूछना चाहूंगा कि चूंकि आरंभिक मानव जैसे कि नूह और आदम कम से कम एक हज़ार वर्ष पूर्व (ईसाई और इस्लामी मान्यता के अनुसार) धरती पर रहा करते थे और माना जाता है कि

ईसामसीह दो हज़ार वर्ष पूर्व थे तो क्या धरती और आदम की रचना और ईसामसीह के जन्म के बीच केवल चार हज़ार वर्ष का अंतर था? यदि हम इस पर थोड़ी और गहराई से सोचें तो इन चार हज़ार वर्षों में पहले दो हज़ार वर्ष आदम व नूह के जीवन में लग गये तो हमारे पास केवल 2000 वर्ष बचते हैं। क्या ये मज़हब यह बता रहे हैं कि जैकब और अब्राहम आदि सभी पैग़म्बर और समूचा प्राचीन यूनान, रोमन व मिस्र की सभ्यताओं का काल केवल दो हज़ार वर्ष का रहा? यदि आप इसके विवरण में न भी जायें तो क्या आप इस निष्कर्ष में कुछ भी गड़बड़ नहीं पाते हैं?

यहूदी-ईसाई (इस्लामी समेत) इतिहास के अनुसार, आदम और हौव्वा के बच्चे आपस में सगे भाई-बहन थे और उन सबने एक-दूसरे के साथ संभोग किया तथा अंत:प्रजनन किया। चूंकि यह अल्लाह द्वारा भेजा गया प्रथम युगल था तो प्रत्यक्ष रूप से अल्लाह ने अंत:प्रजनन अर्थात वर्जित संबंधों में यौन संबंध बनाकर बच्चे उत्पन्न करने को प्रोत्साहित किया। यदि अल्लाह को बाद में समझ में आया कि कि अंत:प्रजनन प्राणियों की उत्तरजीविता के लिये ख़तरनाक था, तब तो निश्चित ही यह अल्लाह उतना समझदार नहीं है।

यदि अल्लाह समझदार होता तो वो पहले ही मानव के वंशाणुओं अर्थात आनुवंशिकी (जिसे कथित रूप से उसी ने बनाया था) को जान लेता और उसे यह पता होता कि दो सगे भाई-बहन संबंध बनाकर संतानोत्पत्ति करेंगे तो क्या होगा। मुझे आश्चर्य होता है कि क्यों अल्लाह मानव के दो युगलों की रचना नहीं कर सका- यह तो कदाचित उसकी अल्पदृष्टि दर्शाता है? चलिये मान भी लें कि किसी कारण से अल्लाह दो जोड़ों की रचना नहीं कर सका तो उसने अंत:प्रजनन से जुड़ी आनुवंशिकी समस्याएं क्यों दीं? पुन: यह स्पष्ट है कि इस अल्लाह में न ही दूरदर्शिता है और न ही वह सबकुछ जानने वाला है।

मैं वर्जित संबंधों का पक्ष नहीं ले रहा हूं, किंतु यदि आप इस विषय में सोचें तो पायेंगे कि ऐसे संबंध केवल आनुवंशिकी समस्याओं के कारण बुरे माने जाते हैं। भारत के गीर में सिंह (शेर) हैं जो अंत:प्रजनन के कारण लुप्त होने की स्थिति में आ गये हैं। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार मुख पर होने वाले ट्यूमर के तस्मानियाई रोग का विशेष कारण अंत:प्रजनन अर्थात सगे सम्बंधों में संभोग कर संतानोत्पत्ति करना है। यदि आनुवंशिकी विविधता आवश्यक नहीं होती तो अंत:प्रजनन

स्वीकार्य होता। इस प्रकार यदि हम परिवार के निकट सम्बंधों में सहवास नहीं करते हैं तो ऐसा विज्ञान के कारण करते हैं, न कि नैतिकता के कारण। मुसलमानों की मान्यता है कि अपने चचेरे भाई-बहन के साथ संभोग करके बच्चे उत्पन्न करने में कुछ भी ग़लत नहीं है, यद्यपि पश्चिम में लोग इस प्रथा को क्षुब्ध करने वाला और घृणास्पद मानते हैं। यदि हमने अंत:प्रजनन में समस्या न पायी होती तो यह हमारे समाज में उतना ही स्वीकार्य होता जितना कि मुसलमानों के लिये अपने सगे चचेरे भाइयों-बहनों से शादी करना।

मैंने अपने मित्र से पूछा क्या केवल मज़हब ही वह कारण है कि वह अपनी बहनों या बेटियों के साथ यौन संबंध बनाने के बारे में नहीं सोचता है। वह अपने ही तर्क में फंस गया। उसने उत्तर दिया, 'हां।' उसकी अम्मी, बहन और बेटियों के लिये मैं आशा करता हूं कि वह कभी अपना मज़हब नहीं छोड़ेगा। अथवा उसे पता होता कि अंत:प्रजनन इसलिये ख़तरनाक नहीं है कि अल्लाह ने उससे ऐसा कहा है, अपितु जो वैज्ञानिक ज्ञान हमारे पास है यह उससे स्पष्ट होता है। निष्कर्ष यह है कि प्राणियों के लिये क्या अच्छा है और क्या नहीं, यह जानने के लिये आपको परी-कथाओं, पंख वाले घोड़ों और पानी पर चलने वाले जादुई व्यक्ति अथवा पानी को शराब में रूपांतरित कर देने जैसी कहानियों के बोझ से युक्त किसी प्राचीन ग्रंथ की आवश्यकता नहीं है। इसकी अपेक्षा आपको वैज्ञानिक ज्ञानकी ओर बढ़ना चाहिये और स्वयं के लिये जानना चाहिये कि धरती छह हज़ार वर्ष पहले नहीं बनायी गयी तथा यह भी जानना चाहिये कि अंत:प्रजनन उचित क्यों नहीं है। मानव जाति ने कालचक्र में पद यात्रा से लेकर कुछ घंटों में हज़ारों मील दूर विमान से उड़कर पहुंच जाने की लंबी विकास-यात्रा की है और यह सब मानव की बुद्धि व रचनात्मकता के कारण संभव हुआ है, न कि फ़रिश्तों व शैतान की कहानियों के कारण।

यह तो केवल एक उदाहरण है जहां मज़हब ने अनुचित रूप से नैतिक व्यवहार के स्वामित्व का हरण कर लिया। अनेक ऐसे व्यवहार हैं जिन पर मज़हब ने बलात् स्वामित्व ले लिया और घोषणा कर दी कि वह व्यवहार निषिद्ध है, जैसे कि बलात्कार, हत्या और चोरी आदि। क्या मज़हबी लोग वास्तव में सोचते हैं कि यदि आकाश में वह काल्पनिक पुलिस आयुक्त न होता तो धरती पर प्रत्येक व्यक्ति बलात्कार, हत्या और लूटपाट कर रहा होता? निश्चित रूप से ऐसा नहीं होता,

क्योंकि हमारे समक्ष उदाहरण हैं कि मज़हबी समाजों की तुलना में उन समाजों में अपराध दर निम्न है जो कम मज़हबी हैं और ये समाज ऐसा बिना भय व हिंसा के करते हैं।

धर्म और समाज नामक अपने जर्नल में लेखक ग्रेगरी एस. पॉल ने अठारह समृद्ध लोगों की तुलना की है और उन्होंने पाया कि जिन समाजों में मज़हब का प्रभाव कम है उनमें अपराध दर कम है, जबकि उन समाजों में अपराध दर अत्यधिक है जो किसी अल्लाह में विश्वास करते हैं। इस सूची में जापान का नाम शीर्ष पर था, जहां की 80 प्रतिशत जनसंख्या उद्विकास में विश्वास करती है और केवल 10 प्रतिशत जनसंख्या ही किसी सृजनकर्ता ईश्वर को मानती है। यद्यपि डब्ल्यूआईएनध्गैलअप 2017 के सर्वे के अनुसार जापान बौद्ध धर्म की प्रधानता वाला देश है, परंतु केवल 13 प्रतिशत जापानी लोगों ने स्वयं को 'धार्मिक' माना। आंकड़ों को देखें तो जापान विश्व के उन गिने-चुने देशों में से एक है, जहां अपराध दर बहुत कम है। जापान के बाद इस सूची में नार्वे के लोग, ब्रिटेन के लोग, जर्मन और डच लोग थे, जहां की 60 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या उद्विकास में विश्वास करती है और कुल जनसंख्या के एक-तिहाई से कम लोग ही किसी प्रकार के ईश्वर में विश्वास करते हैं। इन देशों में मानवहत्या की दर अत्यंत कम प्रति वर्ष एक या दो प्रति हज़ार है। मैं तो कल्पना भी नहीं कर सकता कि जब हत्या, बलात्कार और आत्मघाती बम विस्फोटों का पैमाना नापा जायेगा तो मेरे जन्म का देश पाकिस्तान कितना बुरा दिखेगा। क्षितिज के दूसरी ओर विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्र संयुक्त राज्य अमरीका है, जहां 50 प्रतिशत लोग ईश्वर में विश्वास करते हैं, जबकि 40 प्रतिशत से कम लोग उद्विकास में विश्वास करते हैं। ईश्वर को मानने वाली श्रेष्ठता की भावना वाले इस देश में मानव हत्या की दर उपरोक्त उल्लिखित देशों से पांच गुना अधिक है और जापान से दस गुना अधिक है।

रॉबर्ट पुटनम और डेविड कैम्पबेल के अमेरिकन ग्रेस के अनुसार: धर्म हमें किस प्रकार विभाजित करता है, अमरीका की 83 प्रतिशत जनसंख्या अपने को किसी न किसी प्रकार के देवता को मानने वाला बताती है तथा 60 से 75 प्रतिशत जनसंख्या स्वयं को ईसाई मानती है, जबकि 15 प्रतिशत जनसंख्या स्वयं को किसी भी धर्म से नहीं जोड़ती है। इस प्रकार अमरीका के राज्य व संघीय कारागारों

में 75 प्रतिशत ईसाई बंदी हैं, पर क्यों इन कारागारों के नास्तिक बंदियों की संख्या केवल 6.8 प्रतिशत है, न कि 15 प्रतिशत?

इसका अर्थ यह हुआ कि जिनका कोई धर्म नहीं है, उनकी तुलना में मज़हबी लोगों में अपराध दर दोगुना है। स्पष्ट है कि यह कहना बेतुका होगा कि अमरीका के कारागृहों में बंद लोगों ने अपने धार्मिक विश्वासों के कारण अपराध किया। चूंकि मैं इस विचार को नहीं मानता हूं कि अमरीका के कारागृहों के बंदी अपने धर्म का अवलम्ब लेकर हत्या, बलात्कार या धोखाधड़ी को उचित बताते हैं तो मैं यह कहना चाहता हूं कि धर्म लोगों को अपराध करने से नहीं रोकते हैं। यह भय कि आकाश में बैठा कोई ऊपर वाला हमारे सारे कुकृत्यों को देख रहा है, लोगों को अपराध करने से नहीं रोक पाता है।

वास्तव में ऐसे अनेक प्रकरण हैं, जहां मज़हब ने लोगों से भयानक कार्य कराये हैं। इस्लामी दुनिया में आतंकवाद की जड़ ही मज़हबी मतभेदों के कारण उत्पन्न राजनीतिक मतभेद है। जैसे कि मुसलमान अपने ऊपर ईसाई जीवन शैली नहीं चाहते हैं, अथवा सुन्नी शियाओं के इस्लाम के स्थान पर इस्लाम के अपने संस्करण को प्राथमिकता देते हैं। यह कहना महत्वपूर्ण है कि सभी राजनीतिक मतभेद मज़हब से नहीं उत्पन्न होते हैं, किंतु मज़हब राजनीतिक मतभेद उत्पन्न करने के कारणों में सबसे ऊपर रहा है। सऊदी अरब जैसे देशों का उल्लेख ही क्या करना, जिन्हें उस पड़ाव पर पहुंचने के लिये अभी बहुत लंबी यात्रा करनी है जिससे कि हम उसे उस श्रेणी में रख सकें जो 'समाज' कहा जाता है। भय व धमकी (हाथ काट देना और सिर क़लम कर देना) का प्रयोग कर आप अपराध कम कर सकते हैं, परंतु यह वो समाज नहीं है जहां मैं रहना चाहता हूं। जो कोई भी सोचता है कि सऊदी अरब जैसे देश पूर्ण हैं, उन्हें अपने कम 'मज़हब शासित' व 'अपूर्ण' समाज को छोड़कर इन देशों में रहने के लिये चले जाना चाहिये।

जब मज़हबी लोग अपराध करते हैं तो यह तर्क विफल हो जाता है कि मज़हब इसलिये आवश्यक है, क्योंकि यह लोगों भयानक कार्य करने से रोकता है। आइये, तर्क के लिये मान लेते हैं कि मज़हब वास्तव में शांति को प्रोत्साहित करता है, पर ऊपर दिये गये आंकड़े तो सिद्ध कर रहे हैं कि मज़हब अपने वचन पूरे करने में विफल रहा है और हमें ऐसी किसी भी व्यक्ति या भावना से क्या करना है जो अपने वचन न पूरे करती हो? हमें इसको छोड़ देना चाहिये और इसके स्थान

पर वह लाना चाहिये जो प्रभावकारी हो। स्पष्ट: मज़हब अपराध को कम नहीं कर रहा है, किंतु नास्तिकतावाद समाज को कम आपराधिक बना रहा है। मैंने शब्द 'कम' का प्रयोग किया है, क्योंकि कोई नास्तिक यह दावा नहीं कर सकता कि यदि सभी समाज पूर्णरूपेण नास्तिक हो जायें तो अपराध की संख्या शून्य हो जायेगी। पर उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर मैं यह निरापद रूप से कह सकता हूं कि तब आज की तुलना में कम अपराध होंगे। क्या आप ऐसे संसार की कल्पना कर सकते हैं, जहां अपराध आधे कम किये जा सकें?

मैं कभी इस तर्क को गंभीरता से नहीं लेता हूं कि मज़हब हमारे जीवन को प्रभावित नहीं करता है, इसलिये हमें लोगों को यह स्वतंत्रता देनी चाहिये कि वे जिसमें विश्वास करना चाहें करें। निश्चित ही मैं यह नहीं कह रहा हूं कि प्रत्येक मज़हबी व्यक्ति की कनपटी पर पिस्तौल रखकर उसे अपने मज़हब को छोड़ने के लिये कहना चाहिये, क्योंकि मज़हब ऐसा ही करता हैं, पर मैं यह अनुभव अवश्य करता हूं कि यह सूचना यथासंभव अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाऊं। मैं आशा करता हूं कि वह समय बहुत दूर नहीं है, जब हम आकाश में बैठे उस अनुपयोगी व अक्षम पुलिस अफ़सर (अल्लाह अर्थात ऊपर वाला) को हटा (बर्खास्त कर) सकेंगे।

मज़हब के पक्षकार यह भी दावा करते हैं कि मज़हब इस कारण उपयोगी है, क्योंकि यह लोगों एक-दूसरे के प्रति अधिक परोपकारी बनाता है। मैं इस तथ्य को अस्वीकार नहीं करता हूं कि अधिकांश परोपकारी बड़ा दान करते हैं, किंतु मेरा तर्क यह है कि परोपकार केवल धार्मिक लोगों से जुड़ा हुआ नहीं है। मेरे व्यक्तिगत विचार से यदि आप केवल शाश्वत पुरस्कार (जन्नत) के वचन के वशीभूत होकर 'अच्छा' करते हैं तो यह किसी प्रकार से प्रशंसनीय नहीं है। दान भी एक ऐसी परिघटना है जिसे मज़हब ने हड़प लिया है। विश्व के सबसे बड़े परोपकारी बिल गेट्स हैं जिन्होंने आज तक लगभग सत्ताईस अरब डालर दान दिया है और वे नास्तिक भी हैं। मैं यह दावा नहीं करता कि नास्तिकता स्वत: ही आपको दानी बना देगी, किंतु उपरोक्त दो उदाहरण दर्शाते हैं कि दान धार्मिक लोगों तक ही सीमित नहीं है। अधिकांश अरबपति जो उल्लेखनीय परोपकारी हैं, वे भी अपने पूर्वजों के उस विचार को ही मानते आये हैं कि यदि वे ईसाई परिवार में जन्म लेते हैं तो वे ईसाई बने रहेंगे। यदि कल से विश्व के सभी धर्म लुप्त हो जायें तो भी परोपकार समाप्त नहीं होगा और सच कहें तो

परोपकार पर धर्म के लुप्त होने का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

मैं अब बात करूंगा कि मज़हब मज़हबी लोगों को कितना सुख देने वाला है। तनिक कल्पना कीजिये कि जंगल में एक हिरण का बच्चा जन्म लेता है और जिस क्षण वह दौड़ना प्रारंभ करता होगा उसके मन में क्या आशा पल रही होती होगी। हिरण के इस बच्चे के लिये संघर्ष उसी समय से प्रारंभ हो जाता है, जब वह मां के गर्भ में आता है। हिरण के बच्चे को यह सोचने के लिये नहीं कहा जाता है कि यदि तुम अल्लाह में विश्वास करोगे तो जीवन अच्छे से जीने की आशा होगी। यदि कोई चीता हिरण के उस बच्चे को आसान आखेट के रूप में देखता है तो कोई भी क्षण उस उस बच्चे के जीवन का अंतिम समय हो सकता है। ऐसे में मानव ऐसा क्यों विशेष है कि उसे सुख और आशा की आवश्यकता है? प्रोफेसर रिचर्ड डॉकिंस के शब्दों में, 'ब्रह्माण्ड मानव को कोई आशा नहीं देता है!' मेरी अम्मी भी बताती है कि जब वह सोचती है कि कोई ईश्वर उसे ऊपर से देख रहा है और पीड़ा व दुख से उसकी रक्षा कर रहा है तो उसका मन अच्छा अनुभव करने लगता है।

वह मानती है कि जब जीवन समाप्त हो जायेगा तो वह जन्नत जायेगी और सदा के लिये आनंद में जियेगी। हमें 'मन को सुख' देने वाली ऐसी कथाएं स्वाभाविक रूप से प्रिय होती हैं जो हमें प्रेरित करती हैं। उदाहरण के लिये एसिल्स की कथा ने अलेक्जेंडर महान को महान योद्धा बनने को प्रेरित किया। यद्यपि एसिल्स की कथा के प्रति प्यार अलेक्जेंडर के बहुत काम आया, किंतु मुझे नहीं लगता कि इस कथा से उन लोगों का भी उतना ही भला हुआ जिन्हें उसने जीता था। इसी प्रकार अल्लाह में ओसामा बिन लादेन के विश्वास ने उसे ऐसे लोगों की भर्ती के लिये प्रेरित किया जो वायुयान लेकर विश्व व्यापार केंद्र में घुस जायें, किंतु इस विश्वास ने उन निर्दोष नागरिकों का कोई भला नहीं किया जो इसलिये मारे गये, क्योंकि कुछ उन्मादी व्यक्ति अपने किसी काल्पनिक मित्र में विश्वास करते थे। आशा और प्रेरणा का संचार करना अच्छा प्रतीत हो सकता है, किंतु यह तब अच्छा नहीं होता जब लोग इसका उपयोग अपने भयानक कार्यों को न्यायोचित ठहराने के लिये करें।

स्पष्ट है कि यदि मानव के लिये आशा का विचार अद्वितीय है, तो फिर धरती के अन्य लाखों प्राणियों को इसका कोई भान क्यों नहीं है? कोई तर्क दे सकता

है कि वे सोचते नहीं इसलिये उनको सुख की आवश्यकता नहीं है, पर क्या यह सच नहीं है कि एक मादा भालू अपने बच्चे के जीवन की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये अंतिम सीमा तक प्रयासरत रहती है? शेरनियां अपने नवजात बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये क्या अपने आपको भूखी नहीं रखती है और क्या वे अपना अपना स्वाभिमान नहीं छोड़ देती है?

मानव अद्वितीय इस कारण से हैं, क्योंकि हम मृत्यु को आता देख सकते हैं और इस भय से हमने जीवन के पश्चात एक जीवन की कल्पना रच ली। यह विश्वास कुछ लोगों को एक प्रकार का सुख देता है और मृत्यु को पराजित करने का एक प्रकार का मार्ग देता है। मैं सबके बारे में नहीं कह सकता हूं, किंतु मुझे लगता है कि मज़हबी व्यक्तियों को भी मृत्यु से भय लगता है। अमरीकी कॉमेडियन व राजनीतिक टिप्पणीकार बिल माहेर द्वारा एक वृत्तचित्र बनाया गया है। यद्यपि यह वृत्तचित्र अपेक्षाकृत कॉमेडी है, पर यह आंख खोलने वाला है। इस वृत्तचित्र में उन्होंने एक मज़हबी से पूछा कि यदि मृत्यु के बाद का जीवन इतना सुंदर है तो वह स्वयं अपनी हत्या क्यों नहीं कर लेता जिससे कि उस श्रेष्ठ स्थान पर जा सके। स्पष्ट है कि उस व्यक्ति के पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं था, यद्यपि यह प्रश्न सीधा और समझने में सरल है। यदि हम वहां जाना चाहते हैं, जहां लगता है कि सुंदर जीवन होगा तो क्या हम वहां पहुंचने की तत्परता में नहीं होंगे? जब मैं पाकिस्तान में बड़ा हो रहा था तो मेरी सदा इच्छा होती थी कि मैं किसी पश्चिमी देश में जाऊं और वहीं रहूं। मैंने अमरीका का वीज़ा प्राप्त करने के लिये आवेदन किया, किंतु दुर्भाग्य से उस सितम्बर 11 के आतंकवादी हमले के कारण किसी युवा मुसलमान के लिये अमरीका में प्रवेश करना अपेक्षाकृत कठिन था। यद्यपि आस्ट्रेलिया मुझे प्रवेश देने पर सहमत हुआ और मुझे आस्ट्रेलिया को अपने दत्तक देश के रूप में चुनने के निर्णय के लिये कभी दुख नहीं हुआ। मैंने किसी पश्चिमी देश में जाने का स्वप्न देखा और इस स्वप्न को पूरा करने के लिये दिन-रात परिश्रम किया और अंततः इस सपने को साकार किया तो फिर एक मज़हबी व्यक्ति जो सोचता है कि मृत्यु के बाद जन्नत में जीवन इतना सुंदर है तो उसे वहां जाने की शीघ्रता क्यों नहीं होती है?

मैंने यही प्रश्न अपनी अम्मी और उन सभी मज़हबी व्यक्तियों से पूछा जिन्हें मैं जानता हूं, किंतु मुझे कोई स्पष्ट तार्किक उत्तर नहीं मिला।

तो क्या यह निष्कर्ष निकालना तार्किक है कि मज़हबी लोग मरने से डरते हैं और जन्नत जाने के लिये बहुत उत्सुक नहीं रहते हैं। यदि वे सोचते हैं कि जन्नत का जीवन यहां से अच्छा है तो उन्हें तत्परता से जन्नत जाने का प्रयास करना चाहिये। (जन्नत ही वह लोभ है जिसे उन युवा मुसलमान बच्चों को बेचा जाता है जो आत्मघाती हमलवार बनकर स्वयं को विस्फोटकों से उड़ा लेते हैं, यद्यपि यह मुस्लिम जनसंख्या की बहुसंख्या का सामान्य मत नहीं है।) मज़हबी लोग वास्तव में जीवन के बाद की दुनिया में क्यों विश्वास करते हैं, पर हमें मज़हबी दुनिया में सामूहिक आत्महत्याएं नहीं दिखती हैं क्यों? इसके दो संभावित कारण होंगे:

1: उन्हें धरती पर अपना जीवन इतना प्रिय है कि वे इस जीवन को समाप्त नहीं करना चाहते, इस कारण वे विश्वास करते हैं कि उनकी मृत्यु के बाद यही जीवन किसी न किसी रूप में निरंतर रहेगा। यहीं जन्नत आता है।

2: वे सोचते हैं कि उन्होंने अपने मज़हबी ग्रंथ के अनुसार जीवन नहीं जिया है। यहीं दोज़ख़ (नर्क) आता है।

मन में इन दोनों संभावनाओं को सोचकर मैं दोनों में से किसी को भी 'सुख' कहने में कठिनाई का अनुभव करता हूं। पहली संभावना चेताती है कि ऐसे व्यक्तियों को मानसिक रोग परीक्षण कराने की आवश्यकता है, क्योंकि इन्होंने धरती पर अपने जीवन को चलाने और बचाने के लिये एक विभ्रम तैयार कर लिया है। कोई कल्पना तब तक ग़लत नहीं होती, जब तक कि यह एक कल्पना रहे, पर जब ये वास्तविकता के साथ गड्डमड्ड होने लगती है तो समस्याएं आने लगती हैं। जब मैं बच्चा था और पहली बार जुरासिक पार्क देखा। मुझे यह इतना अच्छा लगा कि मैं सोचने लगा कि संसार में कोई ऐसा स्थान भी है जहां डायनासोर अभी भी हैं। मुझे यह विचार इतना प्रिय था कि सच कहूं तो एक प्रकार से मैंने एक ऐसा काल्पनिक संसार रच लिया जहां एक शक्तिशाली दैत्याकार डायनासोर मेरे पीछे दौड़ रहा था और मेरे प्राणों के पीछे पड़ा हुआ था। इस पुस्तक को लिखते समय मैं आज 34 वर्ष का हूं और मैं आज भी अपने साथी से कौतुक (मज़ाक़) करते हुए कहता हूं, 'भागो, तेज़ी से भागो! कूदकर कार में बैठ जाओ! वह दैत्याकार डायनासोर हमारा पीछा कर रहा है! उसकी प्रतिक्रिया देखना भी अत्यंत विनोदपूर्ण होता है क्योंकि वह भी तेज़ी से भागती है और कूदकर चीख़ती हुई कार में बैठ जाती है और कार तेजी से भगा देता हूं। मेरे मन में क्यों एक दैत्याकार डायनासोर

की ही कल्पना आती है, किसी अन्य ग्रह के प्राणी की क्यों नहीं? स्पष्ट है कि इसका कारण डायनासोरों के प्रति मेरा सम्मोहन है। चूंकि मैंने जान लिया कि कैसे ठीक से चिंतन किया जाये, इसलिये अब मैं यह विश्वास नहीं करता कि संसार का कोई भाग ऐसा है जहां दैत्याकार डायनासोर आज भी घूम रहे हैं और वाहन चालकों को आतंकित कर रहे हैं। पर इन प्रौढ़ लोगों का क्या, जो आज भी उस दुनिया में विश्वास करते हैं जो उनके मन द्वारा गढ़ी गयी है? क्या वे अपने काल्पनिक मित्र की छवि से निकलकर अभी बड़े नहीं हो पाये हैं?

निश्चित रूप से वे यह नहीं मानते कि वह एक काल्पनिक संसार है, ठीक वैसे ही जैसे कि मैं नहीं मानता था कि डायनासोरों वाला मेरा संसार काल्पनिक था। यदि हम सीधी भाषा में कहें तो इसका कोई प्रमाण नहीं है कि कोई जन्नत है तो इसका अर्थ हुआ कि जन्नत का कोई अस्तित्व नहीं है, ठीक उसी प्रकार जैसे कि धरती के कुछ अज्ञात क्षेत्रों में डायनासोर के होने का कोई साक्ष्य नहीं है। इस प्रकार मैं पहली संभावना को एक सुख नहीं, अपितु एक मानसिक स्वास्थ्य समस्या के रूप में देखता हूं। यदि आप इस समस्या से ग्रस्त हैं तो आपको निकटतम मनोवैज्ञानिक को यथाशीघ्र दिखाना चाहिये। यह इस पर निर्भर करेगा कि कितने लोग मेरे संदेश को वास्तव में गंभीरता से लेंगे तो मैं विश्व भर से बड़ी संख्या में मनोवैज्ञानिकों के 'धन्यवाद' पत्र की अपेक्षा करूं।

दूसरी संभावना भी सुख से बहुत दूर है। एक बच्चे को बताया जाता है कि यदि तुम विकल्प ए चुनोगे तो जन्नत जाओगे और यदि तुम विकल्प बी चुनोगे तो दोज़ख़ (नर्क) में जाओगे। स्पष्ट है कि यदि यह इतना ही सीधा होता तो कोई भी दोज़ख़ के लिये चिंतित नहीं होता, पर चूंकि मज़हब इतने बोझ के साथ आता है कि बिना जन्नत-दोज़ख़ की चिंता के जीना असंभव है। उदाहरण के लिये सभी अब्राहमिक मज़हबों में कहा गया है कि यदि आप ख़ुदा में विश्वास नहीं करेंगे तो दोज़ख़ में जायेंगे। इस्लाम में यदि आप मदिरा पान करते हैं, समलिंगी हैं अथवा अ-हलाल ख़ाना खाते हो तो दोज़ख़ में जायेंगे। शादी से परे यौन संबंध भी नर्क का त्वरित पासपोर्ट है, यद्यपि आप यौन-दासियां (सैक्स-स्लेव) रख सकते हैं। ऐसे मज़हबी लोग हैं जो इन सब वर्जित कार्यो को करते हैं और यह सोचकर वे चिंतित हो जाते हैं कि वे दोज़ख़ जा रहे हैं। यदि वे दोज़ख़ जाने के विचार से दुखी नहीं होते हैं तो वास्तव में वे अपने मज़हब में बहुत गंभीरता से विश्वास नहीं करते हैं।

मुझे यह स्वीकार करना होगा कि चूंकि मैं एक मुसलमान के रूप में बड़ा हुआ और जब मैंने पहली बार इस्लाम की कहानियों पर प्रश्न उठाना प्रारंभ किया तो मैंने अपने विचार को दबा लिया, क्योंकि मुझे दोज़ख़ की आग से भय लगता था। रिचर्ड डॉकिंस इसकी तुलना बच्चों के साथ दुर्व्यवहार के रूप में करते हैं और मुझे जिस अनुभव व भय के साथ जीना पड़ा था उसके वर्णन के लिये इसके अतिरिक्त कोई शब्द नहीं मिलता है। यह सोचकर मैं आज भी सिहर उठता हूं कि एक मज़हबी बच्चे के ऊपर क्या बीतती होगी जब वह सोचता होगा कि चूंकि वह लेडी गागा या किसी अन्य संगीतकार को सुनता है, इसलिये अनंत काल तक दोज़ख़ में आग में जलाया जायेगा। ऐसा कौन है, जो उनकी इस मन:स्थिति को सुख कह सके? यह कुछ भी हो सकता है, पर सुख तो नहीं हो सकता। यहां तक कि मुसलमानों ने भी इस सीमा तक अपना मज़हब परिवर्तित कर लिया है कि उन्होंने अपने जीवन में संगीत व कला को स्थान दिया है। कम से कम पाकिस्तान व तुर्की जैसे कम चरमपंथी समाजों में तो ऐसा है।

मैं इस प्रकार के मुसलमानों के बारे में बाद में लिखूंगा, पर इस तथ्य को झुठलाया नहीं जा सकता कि लगभग सभी मज़हबी बच्चों और वयस्कों में दोज़ख़ की आग का बड़ा भय है।

मैं जिस फ़ेसबुक पेज (एक्स-मुस्लिम एथीस्ट नाम से) को चलाता हूं, उस पर मैं अपने मज़हब पर प्रश्न उठाने वाले ऐसे बहुत से लोगों से मिल चुका हूं जो दोज़ख़ की आग के भय से निरंतर तनाव में रहते हैं। एक ऐसी ही महिला ने मुझसे सम्पर्क किया और (चूंकि वह महिला अपने ऊपर हमला होने के जोखिम से पहचान उजागर नहीं करना चाहती) मैं इस महिला को एक छद्म नाम 'होप' दूंगा। यह महिला तार्किकता और उस मज़हब को लेकर इतनी उलझन में थी जिसे उसके मन-मस्तिष्क में बचपन से ही भर दिया गया था। यह महिला इतनी उलझन में थी कि दोज़ख़ की आग के बारे में सोचकर भयभीत व व्यथित थी।

यहां उसका एक संदेश है:

मैंने उसकी सहायता के लिये एक विशेष वीडियो बनाया जिससे कि वह इस पूर्णत: अतार्किक दुविधा से बाहर आ सके।

यहां देखिये कि मैंने कैसे उत्तर दिया।

मैं देख सकता हूं कि होप भयभीत अनुभव कर रही थी और दुखी थी, क्योंकि

वह इस विचार के साथ सामंजस्य बिठाने के लिये जूझ रही थी कि ऐसा ही जीवन वहां भी है। मज़हबी पक्षकार प्राय: बताते हैं कि यदि जन्नत या दोज़ख़ न हो तो जीवन का कोई उद्देश्य नहीं रह जायेगा। जब तक यह नहीं जाना कि कुछ लोगों पर इस दावे का प्रभाव वास्तव में है, मैंने इसे गंभीरता से कभी नहीं लिया।

आख़िर हम यहां किसलिये हैं? हम किसी देश, किसी धर्म और किसी जाति में जन्म लेते हैं और इस पर हमारा कोई वश नहीं होता। हमें हमारे अभिभावक नाम दे देते हैं और वह भी हमसे बिना कुछ पूछे। इसके बाद हम विद्यालय जाते हैं और यदि हम भाग्यशाली रहे तो बड़े होते हैं, बच्चों को जन्म देते हैं, वृद्ध होते हैं और मर जाते हैं। हां भई, पर यह तो सर्वथा व्यर्थ काम प्रतीत होता है, विशेषकर तब जबकि हम कभी ये सब मांगते नहीं हैं। कम से कम मज़हबी लोग तो जीवन को लेकर हम नास्तिकों के विचार के बारे में ऐसा ही सोचते हैं।

नास्तिकता हमें जो एक बात सिखाती है वह है मानवता। कुछ क्षण के लिये सोचिये। यह ब्रह्माण्ड हमारे लिये नहीं बनाया गया था। हम कोई विशेष नहीं हैं। हम एक ऐसी आकाशगंगा (ग्रह-मण्डल) के बाह्य क्षेत्र में एक साधारण तारे के आसपास छोटे से ग्रह में रहते हैं जो सौ अरब या इससे भी अधिक संख्या वाले तारों के समूह में से एक है। यदि यह विचार आपको दीनता का अनुभव नहीं कराता है तो फिर मुझे नहीं पता कि और किससे आप में यह भाव आयेगा।

हम मर जाते हैं- तो क्या हुआ? ऐसा कोई बिग ब्रदर नहीं है जो ऊपर से हमें देख रहा है- तो क्या हुआ? यदि हमारे अच्छे कार्यों का पुरस्कार नहीं मिलता है तो क्या हुआ और यदि कुछ लोग भयानक और बुरे कार्यों को छोड़ देते हैं तो क्या हुआ?

हमें हर समय स्वयं को विशेष क्यों समझते रहना है? किसी जेब्रा के बारे में सोचिये जो भय के संसार में ही जन्म लेता है। जिस क्षण वह इस सुंदर ग्रह पर पांव रखता है, उसे शेर व चीते से बचने के लिये भागने लगना होता है। उनमें से अधिकांश अपना पहला जन्मदिन देखने से पूर्व ही खा लिये जाते हैं। उनका जन्म लेना भी तो उनके वश में नहीं था। वे भी तो उस प्राणि वर्ग में जन्म पाये जिसे उन्होंने नहीं चुना, पर वे जीना चाहते थे। दुर्भाग्य से वे मर जाते हैं और बचने का विकल्प पाये बिना वे खा लिये जाते हैं। सैकड़ों हज़ारों वर्ष तक मानव भी ऐसे ही जिया है। मैं चुनौती के साथ कहता हूं कि हम सौभाग्यशाली हैं जो ऐसे दिन

और ऐसे युग में जीवित हैं कि अब हम 70-80 वर्ष की आयु तक जीने की आशा कर सकते हैं, संबंधों, मित्रता, अच्छा भोजन, विश्व-भ्रमण का आनंद ले सकते हैं और संगीत व कला का आनंद ले सकते हैं।

क्या मित्रता, अच्छा भोजन, संगीत, कला, भ्रमण आदि के लिये नहीं जिया जा सकता है?

जो लोग भी इस कारण नैराश्य का अनुभव करते हैं कि उन्हें लगता है उनके जीवन का कोई उद्देश्य नहीं है, वे यदि आकाश के उस काल्पनिक मित्र को अपने मन-मस्तिष्क से निकाल दें तो अंततः मुक्त हो जायेंगे। यह ठीक वैसा ही है जैसे कि आप बच्चे से वयस्क हो गये। अब आपको हाथ थामकर चलने के लिये माता-पिता की आवश्यकता नहीं होगी। आप यह छोड़ सकते हैं और बाहर जाकर स्वतंत्रता के साथ इस विशाल संसार देख सकते हैं, समझ सकते हैं, उसमें जी सकते हैं। आपके माता-पिता का वास्तव में अस्तित्व है, अतः आपको उन्हें भूलना नहीं है, किंतु यही बात आकाश के उस काल्पनिक पिता के बारे में नहीं कहा जा सकता है जिसने अपने होने का कोई प्रमाण नहीं दिया है। इसलिये उसके काल्पनिक हाथों को छुड़ाकर निकल जाना आनंद और स्वतंत्रता की अपार अनुभूति करायेगा।

हां, हम सब मरने जा रहे हैं। क्या कोई ऐसा है जो यह कह सके कि आगामी तीस-चालीस वर्षों में विज्ञान हमारे जीवन काल को 80 वर्ष से बढ़ाकर 200 वर्ष नहीं कर पायेगा अथवा यह भी तो हो सकता है कि विज्ञान जीवन को अमर बना दे? अनंत काल तक जीना जीवन के उद्देश्य को परिभाषित नहीं करता है, तो फिर आप को क्यों मानना है कि जब धरती पर आपकी मृत्यु हो जायेगी तो इसके बाद आप ऐसी किसी जन्नत में जायेंगे, जहां आप सदा के लिये सुखमय जीवन व्यतीत करेंगे? वहां क्या करेंगे आप? सोकर उठेंगे, भोजन करेंगे, संभोग करेंगे और सोने चले जायेंगे और ये सारे काम तब करोड़ों वर्ष तक करते रहेंगे? मैं इस कल्पना को ही अवसाद में लाने वाला मानता हूं। इस कल्पना का यदि किसी बात से कुछ लेना-देना है तो वह यह है कि एक दिन वृद्धावस्था में मर जाने की अपेक्षा अनंतकाल तक जीना अधिक उद्देश्यहीन है।

हमें संयोग से प्रकृति द्वारा जीवन का यह असाधारण उपहार दिया गया है और यह उपहार हमें हमारी इच्छा या अनिच्छा के बिना मिला है, तथापि यह उपहार

है। हम प्रतिदिन जग सकते हैं, काम पर जा सकते हैं और यह हमें उद्देश्य प्रदान करता है। आप एक डॉक्टर हो सकते हैं और पीड़ा में जी रहे लोगों का दुख कम करने में सहायक बन सकते हैं अथवा आप एक परोपकारी बन सकते हैं और वह जीवन जिसका हम मोल नहीं जानते, जिनके पास उस जीवन की सुख-सुविधाएं नहीं हैं उनके कष्ट को कम कर सकते हैं। आप अपने जीवन को वह उद्देश्य दे सकते हैं जो आप चाहते हैं। आप चालक की सीट पर बैठे हैं! व्यक्तिगत रूप से जब मैं किसी बेघर और भूखे को गर्म कंबल या गर्म बर्गर देकर सहायता करता हूं, तो मैं आनंद व संतोष का अनुभव करता हूं। मैं उन दिनों के बारे में सोचकर अच्छी अनुभूति करता हूं, जब मैं किसी व्यक्ति की सहायता करता हूं। मैं यह इसलिये कर रहा हूं, क्योंकि मैं आप जैसे लोगों से बात करने, आपकी समस्याएं सुनने और यथासंभव व यथासामर्थ्य उनका समाधान देने का प्रयास करने में अच्छा अनुभव करता हूं।

इस पेज का महत्व केवल आप जैसे लोगों की सहायता भर के लिये नहीं है, अपितु इससे कहीं बढ़कर है। आप हमें जब इच्छा हो लिख सकते हैं। आप में से कुछ लोग मेरे व्यक्तिगत प्रोफ़ाइल से जुड़े हैं तो हम किसी न किसी रूप में अपने जीवन के अनुभव साझा कर सकते हैं। हमारे पेज पर लिखने में कभी भी संकोच न करें। हमारे पेज के तीन एडमिन हैं जो अपने समय का बड़ा भाग देते हैं, जिससे कि हम अपने उन नास्तिक बंधुओं के साथ बात कर सकें जो कष्ट में हैं। हम सबकुछ तो नहीं कर सकते, किंतु हम आपकी बात सुन सकते हैं।

एक बात निश्चित है। विशालकाय तारे से लेकर सूक्ष्माकार अणु तक कुछ भी अनंत काल तक नहीं रहता है। अणु सामान्यत: मरते नहीं हैं, किंतु जब सैकड़ों करोड़ों वर्षों में इस ब्रह्माण्ड का अंत होगा तो अणुओं का भी अंत हो जायेगा। हमें कोई विशेष नहीं होना है। हम सदा जीवित नहीं रहने वाले हैं। आनंद, क्रोध, ईर्ष्या सदैव नहीं टिकेगी। कुछ लोग इन भावनाओं को दूसरों से अधिक समय तक ग्रंथि बनाकर रखते हैं, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि वे अनंतकाल तक रहेंगे। क्रोध और उन सभी चीज़ों का त्याग जो आपको दुखी करते हैं, निष्पक्ष होने की ओर जाने का प्रथम चरण है। हम अनेक कारणों से प्रसन्न होते हैं, किंतु ये कारण भी एक दिन दूर हो जाते हैं और तब मन की तटस्थ स्थिति में प्रवेश करते हैं। हम अनेक कारणों से दुखी होते हैं, यथा प्यार या मित्रता में असफलता, वित्तीय संकट,

करियर का अभाव आदि। भले ही आपको उस समय लगता होगा कि इस दुख से उबरने का कोई मार्ग नहीं है, पर विश्वास कीजिये समाधान का उपाय सदा होता है। बस आपको संघर्ष करते रहना है और कभी हार नहीं मानना है!

जब मैंने यह वीडियो बनाया और इसे होप को समर्पित किया तो इसके बाद हम एक-दूसरे के घनिष्ठ मित्र हो गये और अब वह अच्छा कर रही है। उसे अब तनिक भी अनुभव नहीं होता कि जीवन को उद्देश्य देने के लिये उसे किसी अल्लाह की आवश्यकता है। उसके बाद उसने नये देशों की यात्रा की है, नये मित्र बनाये हैं और जीवन का पूरा आनंद ले रही है।

जब मेरी अम्मी ने कहा कि वह जन्नत जायेगी ऐसा सोचकर उसे सुखदायी अनुभूति होती है तो मैनें उनसे कहा कि ऐसा भी तो हो सकता है कि वह दोज़ख़ में जायें क्योंकि वो फ़िल्में देखती हैं, संगीत सुनती हैं और ऐसा नहीं सोचती हैं कि समलिंगी व नास्तिकों आदि की हत्या कर दी जानी चाहिये। तब मैंने देखा कि भय की छाया से उनका मुखमंडल परिवर्तित हो गया और मुझे ग्लानि हुई कि मैंने अपनी अम्मी को ऐसी चिंता में डाल दिया। जब मैं इस रुढ़ि की जकड़ से बाहर आ गया तो प्रायः जन्नत व दोज़ख़ के विचार पर अचंभित हो उठता था।

मैं समझता हूं कि हम अपने बच्चों को कुछ करने से रोकने के लिये उन्हें काल्पनिक भूत या दंड से भयभीत करते हैं और मन ही मन हम सोचते हैं कि बच्चे वह काम करना बंद कर देंगे और हमारी बात सुनेंगे। जैसा कि मेरी अम्मी प्रायः कहा करती थी कि बाहर मत जाओ और आवारा बच्चों जैसे मत दौड़ो-भागो, नहीं तो रात में अल्लाह आयेगा और तुम्हारा पैर उठा ले जायेगा, पर मुझे पता है कि मेरे ऊपर यह धमकी कभी काम नहीं आयी। मैं भयभीत होता था, पर अंत में मैं वही करता था जो मुझे करना होता था यथा बाहर जाना, खेलना और ऐसे दौड़ना जैसे कि अब कल होगी ही नहीं। ऐसे ही छोटे बच्चों को बताया जाता है कि यदि वे अल्लाह में विश्वास नहीं करेंगे तो दोज़ख़ की आग में सदा के लिये जलाये जायेंगे। यह विडम्बना है कि मेरे और मेरी अम्मी की धमकी के जैसे ही मज़हबी लोग अपने अल्लाह की चेतावनी की उपेक्षा करते हैं और सभी प्रकार के अपराध व पाप करते हुए अपने में व्यस्त रहते हैं। पर मेरे ठीक विपरीत, ये लोग इसी में बड़े होते हैं और आज भी जन्नत व दोज़ख़ की आग में विश्वास करते हैं। मैं पुनः कहूंगा, यह कोई सुख नहीं है। मुझे स्वीकार करना होगा कि मेरे प्रकरण

में समझना सरल था, क्योंकि मरने के बाद क्या होगा यह जानने से अधिक सरल है यह देख पाना कि जगने पर दोनों पैर हैं या नहीं। किंतु दैनिक जीवन में हमें तार्किक अनुभव होते हैं उनका क्या? जब हमारी कार का ब्रेक बिगड़ जाता है तो हम यह आशा नहीं करते हैं कि अल्लाह आयेगा और ठीक कर देगा, अपितु हम कार ठीक कराने मैकेनिक के पास जाते हैं। ऐसे अनुभव भी लोगों को अपने जादू और फ़रिश्तों वाले मज़हब पर प्रश्न उठाने पर विवश नहीं करते हैं।

इस्लामी मज़हब कहता है कि जो इस संसार में हराम कार्य करेगा उसे दोनों दुनिया अर्थात इस संसार में भी और इस संसार से जाने के बाद दूसरी दुनिया में भी दंडित किया जायेगा। फिर बड़ी संख्या में दुष्ट लोग इस धरती पर दंड पाये बिना क्यों मर जाते हैं? हमें कैसे पता कि ऐसे लोग दोज़ख़ में आग में जल रहे हैं? मैं एक बार क्यू एंड एं धारावाहिक की एक कड़ी देख रहा था जिसमें कॉर्डिनल जॉर्ज पेल ने रिचर्ड डॉकिन्स को बताया कि यह सुनना सुहावना लगता है कि हिटलर अब नर्क की आग में जल रहा है। कॉर्डिनल ने सोचा कि चूंकि हिटलर इस संसार से बड़ी सरलता से छुटकारा पा गया था तो यह उन 5 करोड़ लोगों के साथ न्याय नहीं था जो उसके अत्याचार से पीड़ित हुए थे। स्पष्ट है कि इस कल्पना में जीना सुहावना ही होगा कि हिटलर और स्टालिन अपराध करने के सात-आठ दशक बाद अभी भी उसका दंड भोग रहे हैं, पर क्या धरती हमें वास्तव में कोई सुख का भाव प्रदान करती है? हिटलर अभी भी नर्क में जल रहा है, ऐसा सोचना अच्छा लगता है, पर क्या इसका कोई प्रमाण है कि वह वास्तव में अभी भी नर्क में जल रहा है? सिंह के उस नवजात बच्चे का क्या, जो तुरंत एक नर सिंह द्वारा इसलिये मार डाला गया, क्योंकि वह सिंहनी को अपने लिये चाहता है? क्या वह सिंह बच्चे को मारने के लिये सदा के लिये नर्क की आग में जलाया जायेगा?

क्यों मनुष्य स्वयं को इतना विशेष समझते हैं कि वे प्राकृतिक अन्याय की प्रतिक्रिया में सुख की मांग करते हैं, विशेष रूप से जबकि इस धरती पर दसियों लाख की संख्या में ऐसे प्राणी हैं जिनके पास उस प्राकृतिक क्रूरता से बचने का कोई उपाय नहीं है जिस पर उनका कोई नियंत्रण नहीं होता है? नहीं, मैं नहीं मानता कि कोई दोज़ख़ (नर्क) है।

तो उस जन्नत के बारे में क्या, जहां दूध व शराब की नदियां बहती हैं और हम पुरुषों की सभी प्रकार की सेवा के लिये 72 कुंवारी सुंदरियां हैं और जहां हम

कभी नहीं मरेंगे और जो भी चाहेंगे वो हमारे पास होगा? (बता दें कि जो औरतें जन्नत जाएंगी उन्हें केवल एक मर्द अर्थात शौहर ही मिलेगा। अहा, कितना सुंदर सपना है न? पर इस सपने का कोई आधार या प्रमाण है? शून्य। इसकी कोई संभावना है? शून्य। क्या आप अपना पूरा जीवन इस पूर्णत: असंभव सपने के लिये व्यर्थ कर देंगे और संगीत नहीं सुनेंगे, कला का आनंद नहीं लेंगे या महिलाओं को समान अधिकार नहीं देंगे? आप विश्व की 50 प्रतिशत अर्थात आधी जनसंख्या को उसके मूल अधिकारों से केवल इसलिये वंचित कर देंगे, क्योंकि जन्नत वास्तिवकता हो सकती है? मैं निश्चित रूप से अपना जीवन ऐसे कभी नहीं पूरा किये जा सकने वाले सपने के लिये नष्ट नहीं करना चाहता हूं। यही कारण है कि मज़हब को एक सद्गुण बताया जाता है, परंतु जन्नत और दोज़ख़ की असंभाव्यता के कारण आप इनके अस्तित्व पर प्रश्न तो खड़ा ही करते होंगे, भले ही इसमें कितना भी अंधा विश्वास करते हों। मज़हबी लोगों के मन में चल रहे इस निरंतर संघर्ष को सुख की संज्ञा देना तो कठिन है।

अंत में, भले ही कोई मान्यता मन को कितनी भी शांति देने वाली हो, पर वह मान्यता तथ्यपूर्ण कब होती है? जैसे कि विश्व के किसी अज्ञात भाग में डायनासोर आज भी है, मेरा यह विश्वास मुझे अतीव आनंद देता था, पर यह विश्वास सत्य नहीं था। इसी प्रकार जीवन के बाद के बारे में आपका जो विश्वास शांति देता है, वह अनिवार्यत: सच भी हो ऐसा नहीं है।

ये विचार मानव जाति की प्रगति के लिये ख़तरनाक हैं। अंधकार युग में कैथोलिक चर्च इतना शक्तिशाली संगठन था कि इसने विज्ञान व वैज्ञानिकों को अपनी व्यक्तिगत संपत्ति के रूप में बंधक रखा था। यह संगठन मानता था कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केंद्र में हैं। यह सहचर धरतीवासियों के बीच कैथोलिक चर्च को विशेष स्थान देता था। उस चर्च के लिये यह जानना सुखकर था कि धरती ब्रह्माण्ड के केंद्र में है और ब्रह्माण्ड में सब कुछ वास्तव में हमारे चारों ओर कक्षा में स्थित है। क्या यह एक सुंदर अनुभव नहीं है कि हम इतने विशेष हैं जो कि खरबों तारों से युक्त तारामण्डल हमारे लिये ही बनाया गया है? एक और आनंददायी विचार है कि धरती एकमात्र वह ग्रह है जहां जीवन है और यह विचार हममें अत्यंत विशेष होने का भाव भरता है।

यह विचार इतना सुविधाजनक था कि जब होनहार दार्शनिक गिआर्डानो

ब्रूनो ने कहा सूर्य के जैसे ही अन्य तारे भी कहीं हैं और उन तारों के पास धरती जैसा अपना ग्रह भी हो सकता है तो उसे जीवित ही जला दिया गया। वह निश्चित रूप से सही था और 1 जनवरी, 2018 तक 3,727 ग्रह ढूंढ़े जा चुके हैं। जोहानस कॉपरनिकस और उनके बाद गैलीलियो गैलिली ने इसकी पुष्टि की कि धरती ब्रह्माण्ड का केंद्र नहीं है। चर्च ने इन तीनों होनहार मानवों को ब्रह्माण्ड के रहस्यों के अन्वेषण के लिये सताया और वास्तव में मानव प्रगति की गति को धीमी किया। यह चर्च आज भी समलिंगियों के साथ वैसा ही भेदभाव कर रहा है और गर्भनिरोधक उपायों का विरोध कर रहा है। यद्यपि कैथोलिक चर्च ब्रूनो के समय से बहुत आगे आ चुका है और अब आधिकारिक रूप से उद्विकास को स्वीकार करता है, पर इस्लाम के लिये यह बात नहीं की जा सकती है। क्या सांत्वना देने वाला कोई विचार जैसे कि मानव इतना विशेष हैं कि ब्रह्मण्ड की प्रत्येक वस्तु उनके चारों ओर परिक्रमा करती है, सत्य होता है? स्पष्टत: नहीं। सत्य कड़वा हो सकता है और यह सुख या दुख के बीच भेद नहीं करता है। किसी अमहत्वपूर्ण तारामण्डल में किसी लघु ग्रह पर निवास करने वाले नन्हें जीवों को सांत्वना देने वाले विचार की तुलना में सत्य कहीं अधिक विशाल होता है। क्या जब मानव समाज को समझ में आयेगा कि उनका सांत्वना वाला विचार वास्तव में झूठा था तो उसका अंत हो जायेगा? नहीं। तो फिर वैसे ही इन मज़हबी लोगों की क्या वैधता है जो कहते हैं, 'अरे, लोगों को मज़हब की आवश्यकता है, क्योंकि यह उन्हें सांत्वना देता है?' आइये एक भविष्यवाणी करते हैं (जो कि वास्तव में भविष्यवाणी नहीं, अपितु इतिहास की पुनरावृत्ति है) कि जब हम आकाश में किसी प्रकार का अल्लाह होने के विचार को नकार देंगे तो न तो मानव जाति का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा और न ही हमारा समाज अराजकता में आ जायेगा।

एक सुविख्यात चिकित्सीय परिघटना है जिसका नाम 'प्लेसबो इफ़ैक्ट' है। यह 'प्लेसबो इफ़ैक्ट' लोगों को तब अच्छा अनुभव कराता है जब उनसे यह कहा जाता है कि उनके रोग का उपचार कर दिया गया है। यदि कैंसर के किसी रोगी को गोलियां दी जायें और कहा जाये कि उनका कैंसर ठीक हो चुका है तो वह वास्तव में अच्छा अनुभव करने लगता है और सोचने लगता हैं कि उसने कैंसर को हरा दिया है। किंतु रोगी अच्छा अनुभव कर रहा है, इसका अर्थ यह नहीं है कि उसके कैंसर का वास्तव में निदान हो गया है। भले ही मज़हब लोगों को सुख देने वाला प्रतीत होता हो, किंतु

हम यह नहीं मान सकते हैं कि यह वास्तव में सुख दे ही रहा है, तो तर्क यह है कि अल्लाह और मृत्यु के बाद जीवन में विश्वास शांति देने वाला प्रतीत तो होता है, परंतु इसे सत्य के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है।

एक भौतिकविद् हैं डॉ. मिशिओ काकू जिनका मैं सर्वाधिक सम्मान करता हूं। डॉ. मिशिओ काकू विमर्श कर रहे थे 'क्या ब्रह्माण्ड का कोई उद्देश्य है?'

उन्होंने कहा कि ईश्वर का अस्तित्व है या नहीं, यह एक वैज्ञानिक प्रश्न नहीं है। मैं इससे अधिक और किसी बात से असहमत नहीं हो सकता। डॉ. काकू ने आगे कहा कि हम आगे भी सौ वर्षों तक इसी प्रश्न पर विमर्श करते रहेंगे, इस कारण यह प्रश्न पूछना ही व्यर्थ है। क्या मानव जाति हज़ारों वर्षों से यह पता लगाने का प्रयास नहीं कर रही है कि वह कहां से आयी? या क्या मानव जाति यह जानने का प्रयास नहीं कर रही है कि इस ब्रह्माण्ड का आरंभ कहां से है? इन प्रश्नों का उत्तर पाना कठिन है तो क्या इस कारण ही ये अन्वेषण के योग्य नहीं रह जाते हैं? इसके विपरीत, हमने अभी तक ज्ञात अल्लाह के अस्तित्व को वास्तव में शून्य सिद्ध किया है। केवल उसके ही अस्तित्व को झूठा सिद्ध करना कठिन है जो अज्ञात व तटस्थतावादी ईश्वर है अर्थात वह ईश्वर जिसके होने या न होने से कोई प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि ऐसा ईश्वर इस पर ध्यान नहीं देता है कि हम अपना जीवन कैसे जी रहे हैं।

डॉ. काकू ने विमर्श को आगे बढ़ाते हुए कहा कि कुछ लोग सोचते हैं कि हममें वास्तव में कोई 'ईश्वर की आनुवंशिकी' है और वह आनुवंशिकी हमें किसी उच्चतर सत्ता में विश्वास करवाती है। इससे पूर्व मैंने प्रदर्शित किया है कि यदि हमें किसी बात में विश्वास करना अच्छा लगता है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह बात सच्ची भी हो। किंतु हम यह प्रश्न पूछ क्यों रहे हैं? हम क्यों यह विमर्श कर रहे हैं कि अल्लाह का अस्तित्व है या नहीं, जबकि हममें सच में कोई ऐसी आनुवंशिकी है जो हमें किसी उच्चतर सत्ता में विश्वास करने को बाध्य करती है? यदि हमारे पास वह आनुवंशिकी है जो हमें किसी उच्चतर सत्ता में विश्वास करने को बाध्य कर देती है तो हमें विज्ञान के माध्यम से वह आनुवंशिकी हटा देना चाहिये। ठीक उसी प्रकार जैसे कि अब हमारे पास पूंछ नहीं होती, क्योंकि अब हमें इसकी आवश्यकता नहीं है। हमें इन व्यर्थ की आनुवंशिकी से छुटकारा पाने के लिये काम करना चाहिये।

जैसा कि मैंने वर्णन किया है कि मानव सभ्यता के लिये मज़हब की आवश्यकता नहीं है तो मैं अब तर्क प्रस्तुत करूंगा कि मज़हब से छुटकारा पाना कितना आवश्यक है। मज़हब आपको चिंतन का विकास करने से रोकता है। चूंकि मज़हबी समाज अभी भी निरंतर विकास क्रम में है तो इस विकास क्रम की गति पर ध्यान देना और कम मज़हबी समाज से इसकी तुलना करना महत्वपूर्ण है। मज़हब आपको विचारों में परिवर्तन के लिये प्रेरित नहीं करता है और विशेषकर इस्लाम में तो ऐसा ही है। विचारों का परिवर्तन बुरी बात के रूप में लिया जा सकता है और इस कारण राजनीतिज्ञ, अधिवक्ता और जनसामान्य यह दावा करने पर अड़े रहते हैं कि वे अभी भी अपनी पूर्व की स्थिति पर दृढ़ता से टिके हुए हैं। यद्यपि अपनी मान्यताओं के साथ खड़े रहना अच्छी प्रवृत्ति है, किंतु आपको विमर्श के लिये मन-मस्तिष्क सदा खुला रखना चाहिये। उदाहरण के लिये, यदि आप मृत्युदंड के पक्षधर हैं तो आपको इसके पक्ष व विपक्ष पर विमर्श के लिये तैयार रहना चाहिये। जब एक उत्तम प्रति-तर्क आये तो आपको अपनी वैचारिक स्थिति को परिवर्तित करने में लजाना नहीं चाहिये। मज़हब इस विमर्श को रोकता है और आपको बाध्य करता है कि मान्यताओं पर टिके रहकर इसे सही ठहरायें तथा यह आपको प्रगति के विरोध में खड़ा करता है।

उदाहरण के लिये, इस्लाम में समलैंगिकता, नारी समानता और दूसरों के साथ संभोग कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता है, किंतु मुस्लिम देश धीरे-धीरे इन बातों को स्वीकार करने की ओर बढ़ रहे हैं। दो सौ वर्ष पूर्व मुस्लिम दुनिया में कोई भी दासप्रथा अर्थात गुलाम रखने की प्रथा की निंदा नहीं करता था क्योंकि इस्लाम में इसकी अनुमति है, किंतु जिन समाजों ने दास प्रथा से छुटकारा पा लिया उन्होंने मुस्लिम देशों को इस प्रथा को बंद करने के लिये विवश किया। आज जब प्रगति के लिये अभी भी निरंतर प्रयास हो रहे हैं तो यदि मज़हब नहीं होता तो यह प्रगति और तेज़ी से होती।

मेरी साथी की मां एलन एक आस्थावान कैथोलिक थीं और बहुत अच्छी मनुष्य भी थीं जिन्होंने लंबा और स्वस्थ जीवन जिया। वह एक सबल स्वतंत्र महिला थीं जिन्होंने परिचारिका के रूप में कठिन परिश्रम किया और रोगियों की देखभाल करते हुए अपने चार सुंदर-सुंदर बच्चों को पाला तथा ये बच्चे अच्छे नैतिक मूल्यों वाले नागरिक के रूप में बड़े हुए। 2015 में वो संवेदी तंत्रिका रोग से ग्रस्त हो

गयीं और चिकित्सकों ने कहा कि उनका जीवन अधिकतम दो से तीन वर्ष का है। कभी सबल और स्वस्थ रही इस महिला को हमने अपनी आंखों के सामने कुछ ही माह के भीतर क्षीण होते देखा। यह एक कठिन समय था और विशेष रूप से उनके उन बच्चों के लिये जो इस सबल स्वतंत्र मां को अपनी छोटी-छोटी गतिविधियों व आवश्यकताओं तक के लिये बच्चों पर आश्रित हो जाने की स्थिति देखने के अभ्यस्त नहीं थे।

एलन यूथैनेशिया (विष की सुई लगवाकर) स्वतंत्र व सम्मानजनक ढंग से मृत्यु का वरण करना चाहती थीं। यद्यपि हमारे महान देश में अभी भी ऐसे लोग हैं जो अपने धार्मिक विचारों को दूसरे पर थोपते हैं। स्वैच्छिक यूथैनेशिया आंदोलन के इस काम में एकमात्र बाधा था आस्ट्रेलिया का संगठित ईसाई धर्म। जिस धर्म को एलन मानती थीं वह उनकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता व व्यक्तिगत इच्छा के मार्ग में रोड़ा बनकर खड़ा था।

एक विक्टोरियन प्रीमियर और धार्मिक रोमन कैथोलिक डेनियल एंड्रयूज स्वैच्छिक यूथैनेशिया आंदोलन के मुखर आलोचक थे। एक रोमन कैथोलिक के रूप में उन्हें स्वैच्छिक यूथैनेशिया आंदोलन का विरोध करना ही था, भले ही इस आंदोलन के पीछे कितने भी आधार व तर्क थे। स्वैच्छिक यूथैनेशिया आंदोलन पर उनका विचार एक व्यक्तिगत अनुभव के बाद परिवर्तित हो गया। उनके पिता दुर्लभ कैंसर से ग्रस्त हो गये और लंबे व पीड़ादायी संघर्ष के बाद 2016 में उनकी मृत्यु हो गयी। अपने पिता की पीड़ा को देखने के बाद उनका विचार परिवर्तन हुआ। यह स्पष्ट उदाहरण है कि किस प्रकार मज़हब आपको अच्छे परिणामों के लिये भी विचार परिवर्तन करने से रोकता है। यह कितना अनुचित है कि यदि डेनियल एंड्रयूज के पिता की मृत्यु नहीं हुई होती तो वे स्वैच्छिक यूथैनेशिया आंदोलन के मुखर आलोचक बने रहते।

स्वैच्छिक यूथैनेशिया आज भी आस्ट्रेलिया या विक्टोरिया में वैध नहीं है, यद्यपि इस पर विमर्श प्रारंभ हो चुका है। मेरा निश्चित मत है कि अंततः मानव शिष्टता व बुद्धिमत्ता रुढ़िवादी विचारों पर विजयी होगी। यह देखकर मैं अचंभित हो जाता है कि किस प्रकार मज़हब समाज को जकड़ने के लिये इतना लालायित रहता है। तार्किक रूप से कहें तो यदि आप अपने मज़हब में विश्वास के कारण स्वयं को विष की सुई लगवाकर अपना अंत करने की इच्छा नहीं रखते हैं तो मत

रखिये, किंतु उन पर भी यही विचार क्यों थोपना जिनका आपके मज़हब से कोई लेना-देना नहीं है? यदि मुझे कोई असाध्य रोग हो जाता है और मुझे पता चलता है कि आने वाले 6 माह मेरे लिये अत्यंत पीड़ादायी होने वाले हैं तो मुझे अपनी इच्छा से अपना जीवन समाप्त कर लेने का अधिकार क्यों नहीं होना चाहिये? मेरा कैथोलिकवाद या इस्लाम से कोई लेना-देना नहीं है तो फिर उनके नियम मुझ पर क्यों लगने चाहिये?

आपको लग सकता है कि मैं यह इंगित कर कि मज़हबी समाज और लोगों ने अपना विचार परिवर्तन किया है, अपने ही कथन को ग़लत ठहरा रहा हूं, किंतु मैं तो इसे मज़हब की एक और विफलता मानता हूं। यदि मुहम्मद आज आये तो उसे यह देखकर झटका लगेगा कि मुसलमान समलिंगियों, अ-मुसलमानों (ग़ैर-मुसलमानों) और विशेष रूप से नास्तिकों के प्रति सहिष्णु व मित्रवत् हो रहे हैं, अपनी औरतों को अकेले बाहर जाने दे रहे हैं। यदि आप इस बारे में सोचेंगे तो पायेंगे कि यह इस्लाम की विफलता है कि वह मुसलमानों को सातवीं सदी की मुस्लिम दुनिया में रखना चाहता है। मज़हब कितना भी रोकने का प्रयास कर ले, पर मानव की नैतिकता का विकास अभी भी निरंतर हो रहा है, किंतु इस्लाम ने ऐसी कठोर आचार संहिता दी है जिसका उल्लंघन नहीं किया जा सकता है। यदि इस्लाम, ईसाइयत व अन्य धर्मों द्वारा दासप्रथा का संरक्षण नहीं किया गया होता तो हम बहुत पहले ही इससे छुटकारा पा चुके होते, संभव है यह कुप्रथा पुनर्जागरण के समय ही समाप्त हो गयी होती। यदि इस्लामी औरतें आदमियों की दास न मानी जातीं तो सऊदी औरतों को कार चलाने की अनुमति प्राप्त करने के लिये 2017 तक प्रतीक्षा न करनी पड़ी होती। यदि समलैंगिकता घिनौना न माना गया होता तो आस्ट्रेलिया जैसे प्रगतिशील देश को विवाह समानता के लिये 2017 तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती और मुस्लिम देशों को इसके लिये और 50-100 वर्ष प्रतीक्षा करने की आवश्यकता न पड़ रही होती। ये परिवर्तन तो किसी न किसी प्रकार आयेंगे ही, किंतु मज़हब जो करते हैं उससे इन परिवर्तन की गति धीमी पड़ जाती है। यही कारण है कि सभी को एक साथ मज़हब से छुटकारा पा लेना आवश्यक है।

अवसाद

चाहे आप नास्तिक हों अथवा ईसाई या मुस्लिम, आपको यह विश्वास दिलाया जायेगा या यह दावा किया जायेगा कि नास्तिक अवसादग्रस्त लोगों का

समूह मात्र है। नास्तिकों और अ-मुस्लिमों को लेकर मुसलमानों में यह दावा अधिक लोकप्रिय है।

इस तर्क का प्रमुख आशय कुछ इस प्रकार है:

चूंकि संकट के समय नास्तिकों के पास ऐसा कोई नहीं होता जो उनको बचाये तो वे अवसादग्रस्त हो जाते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि मैंने इस अध्याय के प्रारंभ में ही स्पष्टता के साथ कहा है कि मैं आत्महत्या को मज़हब के साथ नहीं जोड़ रहा हूं। मैं ऐसे किसी विचार को तिलांजलि दे रहा हूं। किंतु जिस प्रकार ये दावे किये जाते हैं, उसको देखते हुए इनका उत्तर दिया जाना आवश्यक है। अधिकांश मुसलमान सऊदी अरब, ईरान, पाकिस्तान जैसे मुस्लिम देशों में आत्महत्या की घटनाएं कम होने का उल्लेख करते हुए अनेक विकसित देशों यथा जापान, दक्षिण कोरिया और अमरीका में आत्महत्या की घटनाएं अधिक होना दिखाते हैं और अपने इस दावे का समर्थन करते हैं। आइये, इनमें से कुछ देशों का आंकड़ा देखें:

देश :	आत्महत्या प्रति लाख
• क़ज़ाक़िस्तान	27.5
दक्षिण कोरिया	24.1
जापान	15.4
• नाइजीरिया	15.1
अमरीका	12.6
• सूडान	11.4
आस्ट्रेलिया	10.4
दक्षिणी सूडान	9.6
• सऊदी अरब	3.9
• ईरान	3.6
• पाकिस्तान	2.5

तारांकित देश उन देशों को इंगित करता है जहां मुसलमान बहुसंख्यक हैं। क़ज़ाक़िस्तान एक मुसलमान बहुसंख्या वाला देश है और आत्महत्या की घटनाओं में श्रीलंका, गुयाना और मंगोलिया के बाद क्रमश: चौथे स्थान पर आता है। शीर्ष के तीन देशों में से कोई भी नास्तिक बाहुल्य नहीं है। यह सही है कि सऊदी अरब,

ईरान और पाकिस्तान जैसे मुस्लिम देशों में अपेक्षाकृत आत्महत्या दर बहुत कम है, किंतु ध्यान रहे कि सऊदी अरब और ईरान दमनकारी राज्यों में आते हैं।

दूसरी ओर पाकिस्तान अपेक्षाकृत वित्तीय रूप से अत्यंत निर्धन समाज है, किंतु उन दोनों देशों जितना दमनकारी नहीं है। फिर इन दोनों मुस्लिम राज्यों में आत्महत्या की दर कम क्यों है? इस्लाम में आत्महत्या को हतोत्साहित किया जाता है और संभवतया यह एक कारण हो सकता है, पर यह पूरा चित्र नहीं है। एक पाकिस्तानी होते हुए मैं इस बात से अवगत हूं कि वहां आत्महत्या को जानबूझकर छिपाया जाता है, क्योंकि यह परिवार के लिये एक कलंक व अपमानजनक माना जाता है। आत्महत्या और बलात्कार दो ऐसी परिघटनाएं हैं जो पाकिस्तान में बड़े पैमाने पर सामने नहीं आने दी जाती हैं और इसका विशुद्ध कारण सामाजिक दबाव है। जिस प्रकार आप सऊदी अरब और ईरान से आने वाली मानवाधिकार प्रतिवेदन पर विश्वास नहीं करते होंगे, वैसे ही हम इन देशों से आत्महत्या पर आने वाले प्रतिवेदन पर विश्वास नहीं कर सकते हैं। आत्महत्या किसी व्यक्ति के ईश्वर में विश्वास या कमी की अपेक्षा उसकी मन: स्थिति से जुड़ी हुई होती है। बहुत सारे कारक होते हैं जो आत्महत्या की ओर ले जाते हैं। यदि अल्लाह में विश्वास करना भर ही आत्महत्या की रोकथाम में प्रभावकारी होता तो क़ज़ाकि़स्तान जो कि मुसलमान बाहुल्य देश है, वहां आत्महत्या दर इतनी अधिक न होती।

अवसाद लंबे समय तक दुख की स्थिति में रहने से होता है। यह दुख वित्तीय समस्याओं, करियर संबंधी समस्याओं अथवा किसी प्रियजन के विछोभ आदि सभी प्रकार के कारणों से उपज सकता है। यह जैविक-रासायनिक असंतुलन से भी उत्पन्न हो सकता है जिस पर किसी का तनिक भी वश नहीं होता है। चूंकि हम उस अवसाद पर विमर्श कर रहे हैं जो भौतिक वस्तुओं अथवा व्यवहार के कारण उत्पन्न होता है तो हम इसे दीर्घकालिक दुख के रूप में मानकर विमर्श करेंगे, न कि रासायनिक असंतुलन मानकर। प्रसन्नता, क्रोध, प्रेम, घृणा और ईष्या के जैसे ही हम दुख का भी अनुभव करते हैं। दुख बस जीवन के सह-उत्पादों में एक है। हमें इसे उन सब सुख के साथ स्वीकार करना होगा जो जीवन के साथ मिलते हैं। नबील कुरैशी एक अमरीकी मुसलमान थे जिन्होंने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था और मुसलमान उन पर टूट पड़े थे। इन मुसलमानों ने इस बात को लेकर आनंद भी मनाया कि उन्हें 30 वर्ष की अति युवावस्था में पेट का कैंसर हो गया। इंटरनेट

मुसलमान पक्षकारों से भरा पड़ा था जो कह रहे थे कि उनके पेट का कैंसर सच्चा मज़हब इस्लाम छोड़ने के कारण अल्लाह द्वारा दिया गया दंड है।

केवल मुसलमान ही ऐसे आपराधिक पक्ष नहीं हैं जब अहमद देदात नामक एक मौलाना की मृत्यु 2005 में बहुत पीड़ादायी ढंग से हुई तो ईसाइयों ने भी इसे 'ईश्वर का दंड' बताया। उसे दौरा पड़ा और पूरा शरीर लकवाग्रस्त हो गया और वह केवल आंखों के संकेत से ही अपनी बात कह सकता था।

उसने अपने जीवन के अंतिम 9 वर्ष अस्पताल के बेड पर बिताये और वीडियो में अनेकों बार आंखों से गतिविधियां करते हुए उसका दृश्य अंकित हुआ। वह घोर पीड़ा में दिखता था, किंतु वह संभवतया उसी समय लकवाग्रस्त हुआ था और उस समय वैसा ही व्यवहार कर रहा था जैसा कि कोई लकवाग्रस्त अ-मुसलमान करता। ईसाई पक्षकारों ने किसी के दुर्भाग्य का उपयोग किया और इसे ईश्वरीय दंड बताया। मज़हबी नैतिकता का यह एक और भयानक प्रदर्शन था और देखिये इस नैतिकता ने अच्छे लोगों को भी आमनवीय व्यवहार करने पर विवश कर दिया। नबील कुरैशी या अहमद देदात के साथ जो हुआ वो किसी के साथ भी हो सकता था और ऐसा सभी मज़हबों के लोगों या किसी भी धर्म को न मानने वाले लोगों के साथ भी हुआ है। इन ढोंगियों को समझना चाहिये कि यदि ये अल्लाह की ओर से दंड है और विशेष रूप से उन लोगों के लिये जो उसे नहीं मानते तो उनके मज़हब के लोगों को ये रोग नहीं होने चाहिये थे। मैं एक नास्तिक हूं और मनुष्य हूं तथा संभव है कि जीवन में मुझे भी किसी प्रकार का रोग हो जाये, जैसे कि कैंसर, दौरा या ह्दयाघात। मैं भी एक दिन मरूंगा और यह प्रक्रिया पीड़ादायी भी हो सकती है। मैं समझता हूं कि मैं जैविक रूप से अन्य मनुष्यों से भिन्न नहीं हूं और जीवित रहने के लिये मेरे पास कोई विशेषाधिकार नहीं है। जिस प्रकार रोग किसी को भी हो सकते हैं, उसी प्रकार अवसाद भी किसी को भी हो सकता है।

तब और भयावह होता है जब मज़हबी पक्षधर किसी मरणासन्न व्यक्ति के दुर्भाग्य का उपयोग करते हैं और मृत्युशैया पर उसे यह कहकर अपने मज़हब में धर्मांतरित करने का प्रयास करते हैं कि 'ईसा मसीह की शरण में आओ और नर्क की आग में सदा के लिये जलने से अपने को बचा लो' अथवा जब आप मृत्युशैया पर हों और कोई इमाम वहां आ जाये और बोले, 'अल्लाह को सच्चे

ईश्वर के रूप में स्वीकार करो और मुहम्मद को अंतिम पैग़म्बर के रूप में स्वीकार करो।' प्रसिद्ध मुसलमान पक्षकार वलीद ऐली ने एक बार एबीसी के 'क्यू एंड ए' में कहा था कि मृत्युशैया पर अल्लाह को स्वीकार करना नितांत तार्किक है, क्योंकि आपके पास कुछ खोने को नहीं होता है। एक मज़हबी पक्षकार से आप और अपेक्षा भी क्या कर सकते हैं? यदि मैं अपना पूरा जीवन तार्किकता के सिद्धांत और साक्ष्यों पर जीता हूं तो अपने मृत्यु के क्षण में मैं उन सिद्धांतों को कैसे छोड़ सकता हूं? क्या ऐसा करना पाखंड और अनैतिकता का भोंड़ा प्रदर्शन नहीं होगा? नहीं वलीद ऐली, हममें से कुछ को सिद्धांतों के साथ जीना और सम्मान के साथ मरना प्रिय है और यदि जीवित रहते हमने तुम्हारे मज़हबी कचरे को स्वीकार नहीं किया तो उस समय तो हम उसे स्वीकार करने नहीं जा रहे जब हमारी मृत्यु हो रही है। किसी को वलीद ऐली से पूछना चाहिये था कि हमें मृत्युशैया पर पड़े रहते समय किस ईश्वर को स्वीकार करना चाहिये: याहया या अल्लाह? ईसामसीह या थोर? बुद्ध या महावीर? नहीं, किसी अल्लाह या ईश्वर में विश्वास करना तार्किक नहीं होगा, क्योंकि सच्चा ईश्वर कौन है, यह जान पाना अभी भी उतना कठिन है जितना कि दसियों हज़ार में से किसी एक सही को चुनना।

मैंने अपने साथी को बोला है कि यदि मैं मर रहा हूं और वो वहां उपस्थित है तो किसी पुरोहित या इमाम को न आने दे, उन्हें मुझे धर्मांतरित करने का प्रयास न करने दे, क्योंकि तब मेरे शरीर में इतनी सामर्थ्य नहीं होगी कि मैं उन्हें लात मारकर भगा सकूं। वास्तव में मैंने उससे कहा है कि वह मेरे अंतिम क्षण को रिकार्ड करे, जिससे कि कोई यह न कह सके कि 'उसने मरते समय इस्लाम या ईसाई धर्म स्वीकार किया था।' मैंने उसको यह भी निर्देश दिया है कि मेरा अंतिम संस्कार इस्लामी रीति से करने के परिवार के दबाव के आगे न झुके, क्योंकि मैं जब मर चुका हूंगा तो इसका विरोध करने योग्य नहीं रहूंगा।

मज़हबी पक्षकार को यह दावा अति प्रिय है कि जब वे संकट में थे तो उन्हें अल्लाह मिला। मुझे यह दावा कभी समझ में नहीं आया। हां, हम सभी कभी न कभी विषम परिस्थितियों में आते ही हैं। हम सभी समान रूप से अपने माता-पिता की मृत्यु को देखते हैं और प्रेम संबंधों में उथलपुथल से टूटते हैं, किंतु यह कहना कि 'अल्लाह ने उस संकटपूर्ण समय में उबारा', सत्य दावा नहीं है। उन्हें लग सकता है कि अल्लाह में उनके विश्वास ने अवसाद से बाहर निकाला, किंतु यह

भी नहीं कहा जा सकता है कि वे किसी और उपाय से अपने आपको अवसाद से बाहर नहीं निकाल सकते थे। नास्तिकों का भी बुरा समय आता है और वे इस अस्तित्वहीन अल्लाह को ढूंढे बिना ही स्वयं को अवसाद से बाहर निकालने का प्रयत्न करते हैं।

बहुत पुरानी बात नहीं है, जब मैं लंबे समय तक उदासी की अवस्था में रहा और मैंने अवसाद का प्रत्यक्ष अनुभव किया। यह वो समय था जब मित्रों से बात करने में मेरी रुचि समाप्त हो गयी, संगीत भी शांति नहीं देता था, पुस्तकें बोझिल लगती थीं और यहां तक कि मुझ पर पड़ने वाला सूर्य का प्रकाश भी मुझे आनंद नहीं देता था। उदासी की ऐसी भावना घेरे हुए थी और यह हट नहीं रही थी। ऐसा लगता था कि मैं इससे जितना संघर्ष करता हूं उतना ही इससे छुटकारा पाना कठिन होता जा रहा है। स्वभाव से प्रयोगधर्मी होने के कारण मैंने अल्लाह को एक और अवसर दिया और उससे बात करने का प्रयास करने लगा, पर यह काम नहीं आया तो मैंने याहया से जुड़ने का प्रयत्न किया। जब आप डूब रहे होते हैं तो तिनके का आश्रय ढूंढ़ते हैं। ठीक उसी प्रकार मैं भी जब अवसाद में था तो इससे बाहर आने के लिये किसी में भी विश्वास करता। मेरे सभी प्रयासों के बाद भी दूसरी ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं आयी। तब मुझे लगा कि मानो मैं स्वयं से बात कर रहा हूं। कोई यह नहीं कह सकता कि मेरी आस्था गहरी नहीं थी, क्योंकि मैं शत प्रतिशत विश्वास के साथ उस तथाकथित अल्लाह और याहया से जुड़ना चाहता था। चूंकि मैं टूट जाने की स्थिति में था, दुर्बल व अवसादग्रस्त था, इसलिये ऐसे किसी भी विचार को स्वीकार करने को तत्पर था जो मुझे इस मानसिक स्थिति से उबार दे।

मैं समझ सकता हूं कि जब लोग संकट में होते हैं तो अल्लाह में विश्वास करने का शिकार कैसे बन जाते हैं। **यह ब्रह्माण्ड एक विशालकाय भयानक स्थान है, जहां हमारी आकाशगंगा (तारामण्डल) में ही करोड़ों की संख्या में तारे हैं। कौन जानता है कि उन तारों के चारों ओर अन्य ग्रहों पर क्या हो रहा है? क्या उन ग्रहों पर भी लोग हैं? क्या उन लोगों में भी प्रसन्नता व उदासी आती है? क्या वे भी जिन परी-कथाओं में विश्वास करते हैं उनके लिये एक-दूसरे की हत्याएं कर रहे हैं? ये सामान्य से प्रश्न हैं, किंतु इनके उत्तर उतने सरल नहीं हैं।** हमारे पास ऐसी तकनीकी

क्षमता नहीं है कि इन प्रश्नों का उत्तर पा सकें और इससे मानव में निराशा उपजती है। इस निराशा में से हम ऐसी कथाएं व मिथक गढ़ लेते हैं जो हमें बैंड-एड (सांत्वनापूर्ण) समाधान दें। किसी क्षण कोई भटकता हुआ कृष्णविवर (ब्लैक होल) हमारी आकाशगंगा तक आ जाये और सभी ग्रहों व सूर्य को ग्रास बना ले तो हम सब नष्ट हो जायेंगे। यदि ऐसा कोई पारग्रहीय प्राणी हो जो उस स्थान पर भटक रहा हो जहां कभी हमारा सौरमण्डल हुआ करता था तो वह हमारे बारे में जान तक नहीं सकेगा। वे नहीं जान पायेंगे कि कभी कोई शक्तिशाली जूलियस सीजर हुआ करता था जो रूबिकन नदी के पार तक जीत आया था अथवा कोई मार्टिन लूथर किंग जूनियर था जिसने नागरिक अधिकार आंदोलन प्रारंभ किया था या कोई ऐसा महान युद्ध हुआ था जिसे हमने संसाधनों और विचारधाराओं के लिये लड़ा था। फिर भी हम हैं कि यही सब कर रहे हैं। ये सभी युद्ध और आंदोलन ब्रह्माण्डीय मापदंड पर अर्थहीन दिखते हैं, है न ऐसा? हां, वास्तव में ऐसा है, किंतु यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि हम भलाई के लिये लड़ना बंद कर दें, क्योंकि यह हमारे ब्रह्माण्ड के लिये नगण्य है। हम अपने लिये महत्वपूर्ण हैं। चीटियों की बस्ती हमारे लिये उतना ही नगण्य है जितना कि हम ब्रह्माण्ड के लिये, किंतु वो चीटियां लाखों वर्षों से कार्यरत हैं और अपनी बस्ती बना रही हैं। उनको केवल इसलिये जीना नहीं छोड़ देना है कि मानव उन्हें नगण्य मानते हैं।

यह विश्वास करना सहज है कि हम सब यहां इसलिये हैं, क्योंकि बिग फ़ादर जैसा कोई पारलौकिक व्यक्ति है जो हमें देख रहा है और हमारी देखभाल कर रहा है। फिर इस विशालकाय और अपार ब्रह्माण्ड से क्यों भयभीत होना, जब आपके पास इस ब्रह्माण्ड का सुल्तान अल्लाह है जो ऊपर से आपको देख रहा है? कोई कृष्णविवर हमारे मार्ग में आ रहा है? कोई बात नहीं। आइये इबादत करें और ब्रह्माण्ड का सुल्तान इसे दूर भगा देगा। भले ही यह सच हो या नहीं, पर यह एक शांति देने वाला विश्वास प्रतीत होता है। यदि मैं युद्ध में बिना भोजन-पानी और सर्दी से बचने के लिये कपड़े के बिना भटक गया हूं तो मैं चाहूंगा कि मुझे कोई ऐसा मित्र मिल जाये जो मेरी सहायता करने में समर्थ हो तथा मुझे संकट से बाहर निकाले, किंतु मेरे जीवित रहने की संभावना सत्य पर निर्भर करेगी। यदि मेरे पास मित्र है, तब तो अच्छा है, क्योंकि वह मेरी सहायता कर उबारेगा, किंतु यदि मेरे पास ऐसा मित्र नहीं है तो केवल यह कल्पना या इच्छा करना कि मेरे पास

मित्र होता, मेरे जीवित रहने के लिये कोई सहायता नहीं कर पायेगा।

इस संकट से निकलने के लिये मुझे स्वयं ही कुछ करना होगा। स्वयं के प्रयास से ही मैं अपने कठिन समय से बाहर आ पाया। मैंने अल्लाह से संवाद किया और चूंकि अल्लाह का अस्तित्व ही नहीं है तो उससे मुझे कोई सहायता नहीं मिली। मैंने संघर्ष किया और लड़ा तथा अपने अवसाद से बाहर आया। चूंकि मैं कठिन स्थितियों से बाहर आने की तकनीक में दक्ष नहीं हूं, इसलिये मैं ऐसी कोई तकनीक नहीं बताऊंगा, पर यदि आप अवसाद की स्थिति में आ गये हैं तो इस विधा के किसी प्रोफ़ेशनल की सहायता लीजिये, क्योंकि अवसाद से उबरने का उपाय सदैव किसी की सहायता और व्यक्तिगत प्रयास से मिलता है, न कि इबादत करने से। यदि हम अपने प्रयत्न से अवसाद से बाहर आ सकते हैं, न कि इबादत से तो फिर हम झूठी आस्थाओं का सहारा क्यों लें? भले ही हम कभी-कभी स्वयं के नगण्य होने का अनुभव करते हैं, पर हम यही सोचकर बैठे क्यों रहें? क्यों न उत्तरदायित्व लें और कुछ कार्य करें? नास्तिक अवसादग्रस्त लोगों का समूह नहीं है, अपितु ये लोग भी वैसे ही मनुष्य हैं जैसे कि अन्य लोग। हमें भी वैसे ही रोग होते हैं, जैसे कि अन्य लोगों को। हम भी वैसे ही उदास होते हैं, जैसे कि अन्य लोग। बस अंतर इतना है कि हम उन समस्याओं पर वास्तविकता के आधार पर विजय प्राप्त करते हैं, न कि किसी अदृश्य मित्र की इबादत करके। नोबल पुरस्कार विजेता फ्रेंच लेखक अंतोले की इस महान फ्रांसीसी उक्ति के साथ मुझे यह अध्याय समाप्त करने दीजिये: 'यदि 50 करोड़ लोग भी कोई मूर्खतापूर्ण बात कहते हैं तो भी वह बात मूर्खतापूर्ण ही होती है।'

vè;k; 3

मज़हब का बोझ

प्रश्न खड़ा होता है कि हमें मज़हब की आवश्यकता क्यों है? जैसा कि पिछले अध्याय में उल्लिखित है कि मज़हब व्यक्ति को नैतिक नहीं बनाता है, क्योंकि समाज में ऐसे महान व नैतिक रूप से सही लोगों के उदाहरण बड़ी संख्या में मिलते हैं जो किसी मज़हब को नहीं मानते थे। यदि मज़हब की कोई नैतिकता है भी तो वह अप्रासंगिक हो चुकी है। जो समाज अपनी नैतिकताएं कुरआन या ओल्ड टेस्टामेंट से निर्धारित करते हैं, उन समाजों में समस्याएं हैं और यह स्पष्ट दिखता है। तथापि, इस अध्याय में मैं न केवल कुछ बड़े मज़हबों की नैतिकताओं की समस्याओं को इंगित करूंगा, अपितु उस सामान्य बोझ को भी दिखाऊंगा जो मज़हब के साथ आता है।

मैं बहुधा अचंभित होकर सोचने लगता हूं कि यदि हम अंधविश्वास में न होते, हमने वो कहानियां न गढ़ी होतीं जो हमने तब गढ़ लीं जब हमारी समझ में कुछ नहीं आया तो हमारा संसार कैसा होता। मैं कौतुहल में सोचने लगता हूं कि यदि हम जिन कहानियों में विश्वास करते हैं उनके आधार पर एक-दूसरे की हत्या न कर रहे होते तो हमारा संसार कैसा होता। निस्संदेह, मानव जाति के बीच विभाजन का कारण केवल मज़हब नहीं है। हमें विभाजित करने के और भी कारण हैं यथा जाति, लिंग, राष्ट्रीयता, लालच, हमारी प्रिय स्पोर्ट्स टीम आदि, किंतु आपको यह स्वीकार करना होगा कि इन सबमें रक्तपात का सबसे बड़ा कारण मज़हब है। मैं यह विश्वास कर पाने में अत्यंत कठिनाई का अनुभव करता हूं कि किसी नास्तिक समाज में लिंग या यौन प्राथमिकता के आधार पर सुनियोजित ढंग से भेदभाव होता होगा। क्या कोई अ-मुसलमान पाकिस्तान में देश का मुखिया हो सकता है? निश्चित रूप से नहीं। पाकिस्तान का संविधान वास्तव में सार्वजनिक रूप से मज़हब के आधार पर भेदभाव करता है। यदि पाकिस्तान एक धर्मनिरपेक्ष मानववादी देश होता अथवा यदि विश्व में कोई मज़हब नहीं होता तो मुझे नहीं लगता है कि

सरकारें यह आदेश पारित करतीं कि कोई अ-मुसलमान राज्य का मुखिया नहीं हो सकता है।

नवंबर, 2017 में पाकिस्तानी सरकार ने सांसदों के लिये एक शपथ लाने का प्रयास किया। शपथ की भाषा में इस तनिक से परिवर्तन से मुस्लिमों के एक संप्रदाय अहमदियाओं को धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में आरक्षित सीटों की अपेक्षा सामान्य सीटों पर भी चुनाव लड़ने की अनुमति मिल जाती।

वैसे इस्लाम के अन्य समूह सुन्नी व शिया अहमदियाओं को मुसलमान नहीं मानते हैं। शपथ में इस परिवर्तन को मुल्ला व चरमपंथियों ने ऐसे लिया कि मानों इससे यह भाव निकलता है कि सांसदों के लिये मुहम्मद को अंतिम पैग़म्बर मानने की बाध्यता नहीं है। ये लोग सड़क पर आ गये और उस मंत्री का सिर कलम किये जाने की मांग करने लगे जिसने यह परिवर्तन लाने का प्रयास किया था। इसको लेकर देशव्यापी विरोध-प्रदर्शन हुए जिसमें अनेक लोगों को प्राण गंवाने पड़े तथा सरकारी व निजी संपत्ति की क्षति हुई। यदि मज़हब नहीं होता तो ये नहीं हुआ होता।

मैं मज़हब को न केवल ख़तरनाक मानता हूं, वरन् नितांत अनुपयोगी भी मानता हूं। किसी मज़हबी व्यक्ति से ऐसा क्या अच्छा मिलने की संभावना होती है, जो कोई अ-मज़हबी मनुष्य नहीं दे सकता है? दान या प्रेम, नवोन्मेष या निष्ठा? मैं अपनी शुचिता से सोचता हूं तो पाता हूं कि ऐसा कुछ भी नहीं है जो मज़हब से नहीं जुड़ा हुआ मनुष्य अपने लोगों के लिये नहीं कर सकता हो। नास्तिक बड़े स्तर पर दान करते हैं और वैसे ही प्रेम बांटते हैं जैसे कि कि कोई और। वे अविष्कार करते हैं और नवोन्मेष करते हैं। हत्याओं की ऊंची दर, अन्य धर्मों के लोगों व समलिंगियों के साथ भेदभाव आदि के अतिरिक्त मज़हबी लोगों के पास कुछ भी अद्वितीय नहीं होता है। जब तक कोई प्रामाणिक साक्ष्य न उपलब्ध करा दे कि नास्तिक नैतिक रूप से बुरे लोग होते हैं, तब तक मैं यहां यही कहता रहूंगा कि हम मज़हब के बिना अच्छे से रह सकते हैं।

मज़हब के पक्षधर मज़हब के औचित्य के पीछे नैतिकता का कारण बताने के साथ और जो कारण बताते हैं उसमें यह है कि चूंकि अल्लाह ने सबकुछ रचा है तो हमें उसके नियमों पर चलना चाहिये और इन नियमों में एक नियम उसकी इबादत करना एवं उसको स्वीकार करना है। कई-कई पृष्ठों की नियमावली और

जीने के नियम बताने वालीं मार्गदर्शिकाएं देकर भी उनकी बातें समाप्त नहीं होती हैं। ध्यान रखिये, ये सभी नियम व जीवन जीने की पद्धतियां उस कल्पना के बाद आयी हैं कि अल्लाह ने ही सबकुछ बनाया है, किंतु पद्धति बी के लिये हम उनकी कल्पना को भी स्वीकार कर लेते हैं। हम कैसा यौन व्यवहार करते हैं, हम अपने बच्चों व पत्नियों के साथ कैसा आचरण करते हैं, इन सब पर वह (अल्लाह) कठोर नियम लगाता है। (मैं यहां शौहरों का उल्लेख नहीं करूंगा, क्योंकि मज़हब में शौहरों को नियंत्रित करने के लिये औरतों को अधिक अधिकार नहीं दिये गये हैं।) हम देश का शासन कैसे करेंगे, हम अपने आसपास प्राकृतिक संसार को कैसे देखते हैं, यहां तक कि हम अपनी अर्थव्यवस्था कैसे चलाते हैं, इन पर भी अल्लाह नियम थोपता है। अब आगे मैं इन नियमों को 'मज़हब का बोझ' कहूंगा, क्योंकि मज़हब के समर्थकों को प्रश्न उठाने या अपना विचार परिवर्तित करने की अनुमति नहीं है। चूंकि हमने पद्धति बी को चुना तो अब हम इस 'मज़हब के बोझ' पर प्रश्न उठायेंगे और अल्लाह का अस्तित्व है या नहीं, इस पर प्रश्न उठाने की अपेक्षा यह देखेंगे कि क्या उन नियमों व क़ानूनों में कुछ समस्या है।

मैं अब सातवीं सदी के इस प्राचीन तर्क को पुन: प्रस्तुत करना चाहूंगा जिसमें फ्रेंच गणितज्ञ व दार्शनिक ब्लैस पॉस्कल ने एक पहेली दी जिसे पॉस्कल पहेली या पॉस्कल गैम्बिट कहा जाता है। पॉस्कल ने विचार दिया कि ईश्वर में न विश्वास करने से अच्छा है कि ईश्वर में विश्वास किया जाये, क्योंकि ईश्वर का अस्तित्व हो या नहीं, पर यदि आप ईश्वर में विश्वास करते हैं तो आपका कुछ जायेगा नहीं। किंतु यदि आपका यह विश्वास ग़लत सिद्ध होता है कि ईश्वर नहीं है तो आपको अनंत काल तक नर्क की आग में जलना पड़ेगा। प्रोफेसर रिचर्ड डॉकिन्स ने अपनी पुस्तक द गॉड डिलूजन में इस पहेली की कमियों का वर्णन करते हुए कहा है कि हम विश्वास करना या विश्वास न करना सचेतन रूप से नहीं चुन सकते हैं या हम किसी बात पर तभी विश्वास कर सकते हैं जब उसके पीछे कोई साक्ष्य हो। उदाहरण के लिये, मैं विश्वास करता हूं कि धरती चपटी नहीं गोल है, क्योंकि इसका प्रमाण है। यदि ईसामसीह धरती पर आये और बोले कि तुम्हें इस पर विश्वास करना ही होगा कि धरती चपटी है, अन्यथा तुम अनंत काल तक नर्क में जलोगे तो यह कोई पर्याप्त साक्ष्य नहीं है कि उनकी बात में विश्वास किया जाये। पॉस्कल का तर्क लगायें तो हमें विश्वास करना चाहिये कि धरती चपटी है

और यदि हम इसमें ग़लत भी हैं तो इससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा, किंतु यदि हम सही हैं तो भी हम धरती के किनारे से नीचे नहीं गिर पड़ेंगे, क्योंकि धरती तो वास्तव में गोल है। दूसरी ओर यदि हम विश्वास नहीं करते कि धरती चपटी है और हम सही हैं तो इससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा, किंतु यदि हम ग़लत हैं तो हमारे सामने धरती के किनारे से नीचे गिरकर मर जाने का ख़तरा बना रहेगा। यदि धरती के गोल होने का विचार मानने वालों ने अतीत में पॉस्कल के तर्क का अनुसरण किया होता तो जब तक अंतरिक्ष से धरती का चित्र नहीं लिया जाता, संभवत: हमें पता ही न चलता कि धरती गोल है। यद्यपि ईसामसीह ने कभी नहीं बताया कि धरती चपटी है या गोल, पर आप देख सकते हैं कि किसी बात में अंधविश्वास करने की प्रवृत्ति हमें सत्य से और दूर ले जाती है।

पॉस्कल के कथन का विस्तार करते हुए मैं इस तर्क पर और प्रश्न उठाना चाहूंगा: पॉस्कल दावा करते हैं कि यदि हम ईश्वर में विश्वास करते हैं और हम सही सिद्ध होते हैं तो अनंत काल तक दंड भोगने से बच जायेंगे, किंतु यदि हम ग़लत सिद्ध होते हैं तो इससे कोई हानि नहीं होगी। पॉस्कल कैसे दावा कर सकते हैं कि अपने प्रिय मज़हब की विचारधारा में विश्वास करने में आप ग़लत सिद्ध होते हैं तो इससे कोई हानि नहीं होगी? पॉस्कल की पहेली वास्तव में विचारधारा पर प्रकाश नहीं डालती है, किंतु उन लोगों का क्या जो अल्लाह में विश्वास करते हैं और अपने मज़हब से प्रेरित होकर सभी प्रकार के अपराध करते हैं? मुझे नहीं लगता कि मज़हब के पक्षकारों के लिये यह बता पाना कठिन है कि आत्मघाती हमलावरों के मन में लोगों को बम से उड़ा देने की प्रेरणा कहां से आ रही है। मैं यह दावा नहीं करता कि कुरआन आत्मघाती विस्फोट के विचार को प्रोत्साहित करती है, क्योंकि मुहम्मद के समय मुसलमानों के पास आत्मघाती विस्फोट की क्षमता नहीं थी, पर मैं यह अवश्य कहूंगा कि कुरआन और बाइबिल अपने मज़हब के लिये मरने को प्रोत्साहित तो करते हैं।

निस्संदेह, हमारे पास ऐसे साहसी नायक हैं जो अपने देश की रक्षा करते हुए वीरगति को प्राप्त होते हैं, किंतु आप किसी मज़हब की तुलना देश से नहीं कर सकते। आपका देश यथार्थ है और आपकी रक्षा करता है, आपको आश्रय देता है, पर मज़हब ऐसा नहीं करता है। हम उन भयावहताओं को स्पष्ट देख सकते हैं जो मज़हबी मान्यताओं के साथ आती हैं, जैसे कि मज़हबी ग्रंथ की प्रेरणा से

व्यापक स्तर पर मानवाधिकारों का उल्लंघन। मुझे लगता है कि इसका प्रभाव तो पड़ता है या जब आपकी मृत्यु हो जायेगी तो भले इसका कोई प्रभाव नहीं पड़े, पर जब तक आप जीवित हैं तब तक आप पर और आपके आसपास के लोगों पर इसका भयानक प्रभाव पड़ता है।

इसके अतिरिक्त, पॉस्कल का तर्क अनुपयुक्त है, क्योंकि इस तर्क के अनुसार उनका ईश्वर एकमात्र सही ईश्वर है। कुछ अनुमानों के अनुसार, विभिन्न सभ्यताओं व इतिहास में मानव ने 10 हज़ार के आसपास ईश्वरों का अविष्कार किया है। यह उतनी सीधी कल्पना नहीं है, जितना कि पॉस्कल ने की है। यदि सम्पूर्ण विश्व एक ही ईश्वर और एक ही धर्म में विश्वास करता तो उनकी यह पहेली अधिक उत्तम होती। यदि हम पॉस्कल के तर्कों को मानें तो वह कह रहे हैं कि 'दस हज़ार ईश्वरों में एक ईश्वर पर विश्वास करो और आशा करो कि तुम सही हो। अन्यथा तुम नर्क में जाओगे।' मुझे यह स्वीकार करना होगा कि यदि कोई ईश्वर है तो नास्तिक के पास नर्क से बचने का कोई अवसर नहीं होगा, क्योंकि किसी नास्तिक के सही होने की संभावना दस हज़ार में शून्य होगी। यदि आप पॉस्कल के कथन पर चलते हैं और अपने ईश्वर के साथ जुड़े रहते हैं, पर पता चले कि वास्तविक ईश्वर गुरु अर्थात ज्यूपिटर हैं, तब तो पॉस्कल के साथ ही आप भी नर्क में जा रहे हैं। अत: पॉस्कल का तर्क यहां विफल हो जाता है। आप किसी अंधी पहेली पर जीवन नहीं जी सकते, क्योंकि आपके पास सही होने की संभावना दस हज़ार में केवल एक है और आपको पूरा जीवन नियमों व सिद्धांतों के समूह के साथ जीना पड़ेगा, जबकि संभव है कि ये नियम व सिद्धांत सही भी न हों और व्यर्थ भी हों।

आइये मज़हब के बोझ को समझते हुए 'कोई प्रभाव नहीं पड़ता' जैसे दावे की पड़ताल थोड़ा विस्तार से करें। यदि हम पद्धति बी लेते हैं और मानते हैं कि पॉस्कल की यह पहेली सही है कि ईश्वर में विश्वास हमें अनंत काल तक नर्क में जलने से बचाता है तो हमें उस ईश्वर के नियमों से बंधना होगा। मैं आगे के विमर्श में केवल इस्लामी ईश्वर अल्लाह के बारे में बात करूंगा, यद्यपि यह इस्लामी अल्लाह यहूदी-ईसाई ईश्वर से भिन्न नहीं है। इस्लामी ईश्वर में विश्वास करते हुए मुझे इस पर भी विश्वास करना होगा कि मुझे संगीत नहीं सुनना चाहिये, कुरआन की शिक्षाओं में जो वैज्ञानिक त्रुटियां हैं उन पर प्रश्न नहीं उठाना चाहिये,

परिवार की महिलाओं को बिना पुरुष संबंधी के अकेले बाहर जाने की अनुमति नहीं देनी चाहिये, समलिंगियों के साथ भेदभाव करना चाहिये, चोरों का हाथ काट देना चाहिये आदि।

अधिकांश मुस्लिम विद्वान इससे सहमत हैं कि संगीत व सजीव प्राणियों के चित्र बनाना शैतान का काम है और ये सब अल्लाह को प्रिय नहीं है। आधुनिक मुसलमान इससे सहमत नहीं होते हैं और मैं अब इन आधुनिक मुसलमानों को ढोंगी और सच्चे मुसलमानों को तालिबान पुकारूंगा। तालिबान वास्तव में इस्लाम के सही रूप का पालन करता है: उन्होंने संगीत, फ़िल्में और चित्र प्रतिबंधित कर दिये, दूसरों के साथ यौन संबंध रखने वालों, समलिंगियों और यहां तक कि बलात्कार की पीड़ित औरतों को मार डाला। आप बड़ी संख्या में आधुनिक मुसलमानों को देखेंगे जो तालिबान की निंदा करते हैं और यह कहते हुए इस्लाम का बचाव करते हैं कि तालिबान का इस्लाम सच्चा इस्लाम नहीं है। इन ढोंगी मुसलमानों के लिये मैं बस इतना कहूंगा कि उन्हें नीचे दी गयी हदीसों को पढ़ना चाहिये:

हमारे अनुयायियों में से कुछ ऐसे लोग होंगे जो दूसरों के साथ संभोग, सिल्क के वस्त्र पहनने, मादक पेय पदार्थ का सेवन करने और संगीत के वाद्ययंत्रों के प्रयोग को विधिसम्मत मानेंगे। (बुख़ारी, अंक 7, पुस्तक 69, संख्या 494)

यद्यपि कुछ मुसलमान विद्वान हैं जो कुछ विषयों पर विमर्श करते हैं, जैसे कि किस प्रकार के वाद्ययंत्रों के प्रयोग की अनुमति है, किंतु ये सभी विद्वान इस पर सहमत हैं कि एक औरत को मर्द के सामने गाने की अनुमति नहीं है। जिस गीत में अ-मज़हबी रोमांस हो उसकी अनुमति नहीं है, क्योंकि यह कुफ्र को बढ़ावा देता है। आज के संसार में जिसने भी प्रसिद्ध पाकिस्तानी गायिका नूरजहां को सुना है वो सीधे दोज़ख़ में जायेगा, क्योंकि उन्होंने पुरुषों के सामने रोमांस वाले गाने गाये थे। तथापि, चूंकि मैं पॉस्कल के ईश्वर और उसके नियमों पर विश्वास वाले विचार पर चल रहा हूं तो मुझे जीवन में ऐसे किसी संगीत से दूर रहना होगा, जो किसी महिला ने रचा अथवा गाया हो और मुझे ऐसा कोई प्रेम गीत भी नहीं सुनना होगा जो किसी पुरुष ने गाया हो।

पॉस्कल की पहेली के कारण मैं अब अल्लाह और उसके सारे नियमों में विश्वास करता हूं तथा जानता हूं कि अन्य 9,999 ईश्वर मिथ्या हैं। मैं ऐसे किसी चल या स्थिर चित्र की ओर नहीं देखूंगा जिसमें किसी सजीव प्राणी को दिखाया

गया है। निम्नलिखित हदीस पर विचार कीजिये:

चित्र बनाने वालों को क़यामत के दिन कठोरतम दंड दिया जायेगा। (सही मुस्लिम और सहीह बुख़ारी)

जो भी चित्र उसने बनाया है उसमें से प्रत्येक के लिये एक रूह तैयार की जायेगी जो दोज़ख़ की आग में जलाते हुए उसे दंड देगी। (सहीह मुस्लिम)

चित्र बनाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को आग में झोंका जायेगा। (सहीह बुख़ारी)

यही वो कारण है कि मुसलमान मुहम्मद के कार्टून पर इतने उत्तेजित हो गये थे। मुहम्मद चित्र बनाने की अवधारणा का पूर्णतया विरोधी था और ऐसे लोगों को उसने दोज़ख़ की आग में कठोर दंड देने को कहा। हो सकता है कि मुहम्मद ऐसा कुरूप रहा हो कि वह चित्रणयोग्य नहीं था। कुछ मुसलमान विद्वानों ने यह तर्क देते हुए इन सीधे निर्देशों में सुधार किया है कि कैमरा से लिये गये चित्र को उसी श्रेणी में नहीं रख सकते हैं जिस श्रेणी में रेखाचित्रों द्वारा बनाये जाने वाले चित्र को रखा जाता है, क्योंकि वह हाथ से चित्र बनाये जाने के विपरीत किसी आकृति का प्रतिबिम्ब होता है।

वैसे सलफ़ी विद्वान किसी भी प्रकार के चित्र को निषिद्ध मानते हैं, चाहे वह हाथ से बनाया गया हो अथवा कैमरे से खींचा गया हो। इन प्रकरणों में और किसी विमर्श की आवश्यकता नहीं बचती है और निर्णायक रूप से यह स्पष्ट होता है कि चल अथवा स्थिर, बनाया गया अथवा खींचा गया, सजीव प्राणी का किसी भी प्रकार का चित्र इस्लाम में प्रतिबंधित है। एक सच्चा और ढोंगरहित मुसलमान होते हुए मैं दा विंसी की चित्रकारी अथवा हॉलीवुड के स्टीवन स्पेलबर्ग की किसी फ़िल्म को नहीं देखूंगा। यदि आप पद्धति बी का अनुसरण करते हैं तो आप यह प्रश्न उठा सकते हैं कि चित्र बनाने अथवा देखने में ग़लत क्या है। हां, आप ऐसा प्रश्न उठाने के लिये स्वतंत्र हैं, किंतु चूंकि मैं पॉस्कल के सुझाव पर चल रहा हूं तो मैं पद्धति एक चुनूंगा और मैं गुण-अवगुण पर विचार करने वाली किसी सोच को नहीं पालूंगा, अन्यथा मैं सदा के लिये दोज़ख़ में आग में जलाया जाता रहूंगा।

एक सच्चा मुसलमान होते हुए मैं अब अल्लाह के क़ानून शरिया को थोपूंगा। मैं इस कल्पना से भी भयभीत हो उठता हूं कि किसी ऐसे देश में रहना कितना भयावह होगा जहां शरिया क़ानून प्रभावी किया जाता है, पर चूंकि अब मैं अल्लाह में विश्वास करता हूं तो मुझे अपना भय व व्यक्तिगत रुचि अल्लाह और

उसके क़ानून के समक्ष समर्पण करना होगा। मुझे उस औरत को पत्थरों से मार डालने में भाग लेना चाहिये जो यह दावा करती है कि उसके साथ बलात्कार हुआ है। स्पष्ट है कि आज के संसार में विधि अन्वेषण विज्ञान (फ़ोरेंसिक साइंस) के विकास के साथ यह सिद्ध करना अत्यंत सरल हो गया है कि बलात्कार हुआ है, किंतु शरिया क़ानून का पालन करते हुए बलात्कार पीड़िता को ऐसे चार स्वतंत्र गवाह चाहिये जो यह सिद्ध करें कि उस पीड़िता का वास्तव में बलात्कार हुआ है। मैं अचरज करता हूं कि अल्लाह सीधे क्यों नहीं कहता कि यदि यह नहीं पता चल पाता है कि बलात्कार हुआ है या नहीं तो पत्थरों से मार-मार कर किसी की हत्या मत करो? यदि चार स्वतंत्र पुरुष गवाह अथवा आठ महिला गवाह (एक महिला की गवाही पुरुष की आधी मानी जाती है) घटनास्थल पर होते तो निश्चित ही वे बलात्कार की घटना को रोकते। **चार गवाहों की आवश्यकता का प्रावधान तब से किया गया जब मुहम्मद की बीवी आयशा पर मुहम्मद से छिपाकर किसी और से सम्बंध बनाने का आरोप लगा था।**

तीन गवाहों ने आयशा के अवैध प्रेमप्रसंग की पुष्टि की पर मुहम्मद इस पर विश्वास नहीं करना चाहता था तो उसने चार गवाह मांगे। चूंकि केवल तीन ही गवाह थे तो उसने पत्थर मार-मार कर आयशा की हत्या नहीं की। जब मुहम्मद अवैध प्रेम संबंधों के आरोप पर आयशा के भाग्य का निपटारा कर रहा था तो उस शुष्क शीत ॠतु में भी अचानक उसे (मुहम्मद को) पसीना आने लगा। उसने कहा कि उस पर अल्लाह की आयत आयी है और बोला, 'हे आयशा, अल्लाह ने तुम्हें निर्दोष घोषित किया है!'(सही बुख़ारी, अंक 5, पुस्तक 59, संख्या 462)

तथा जो पाक औरतों पर व्यभिचार का आरोप लगायें, फिर चार गवाह न लायें, तो उन्हें अस्सी कोड़े मारो और आगे से उनका साक्ष्य कभी भी न स्वीकार करो और वे स्वयं अवज्ञाकारी हैं। (कुरआन 24:4)

मुहम्मद ने अपनी प्रिय बीवी आयशा के प्रकरण में एक नया नियम बनाया और चूंकि वह पत्थर मार-मार कर उसकी हत्या नहीं करना चाहता था तो उसने उस औरत (आयशा) का पक्ष लेने के लिये चार गवाह लाने के बहाने का उपयोग किया। आप सोच रहे होंगे यह घटना किसी औरत के पक्ष में स्पष्ट: काम आती

है, किंतु मुख्य बिंदु यह है कि संबंधित पुरुष से पूछा ही नहीं गया कि इस अवैध प्रेमप्रसंग में उसकी संलिप्तता है या नहीं। यदि कोई मर्द बलात्कार के अपराध को स्वीकार करता है तो वह दंडित किया जायेगा, किंतु यदि कोई औरत किसी व्यक्ति पर बलात्कार का आरोप लगाती है और वह व्यक्ति कहता है कि उसने सहमति से यौनसंबंध बनाये हैं तो दोनों को दंडित किया जायेगा। भले ही पीड़िता के पक्ष में तीन लोग साक्ष्य (गवाही) दे रहे हों, पर वह साक्ष्य पर्याप्त नहीं माना जायेगा। पीड़िता द्वारा बलात्कार स्वीकार करने के साथ ही इस बात की पुष्टि हो जाती है कि यौनसंबंध बनाये तो उन्हें उसी के अनुसार दंडित किया जाना चाहिये। यदि घटना के समय दोनों शादीशुदा थे तो वादी (पीड़िता) और प्रतिवादी (अभियुक्त) दोनों की पत्थर मार-मार कर हत्या कर देनी चाहिये। चूंकि मैं अल्लाह और उसके क़ानून में विश्वास करने वाला हूं तो मुझे इस पर प्रश्न नहीं उठाना चाहिये और इन लोगों की हत्या पत्थर मार-मार कर करने में सक्रियतापूर्वक भाग भी लेना चाहिये। भले ही बलात्कार न हुआ हो, पर यदि दो लोगों के एकांत में संभोग करने में इतना बुरा क्या है? यदि संभोग इतना बुरा काम था तो अल्लाह ने इस प्रक्रिया को क्यों बनाया, वह मानव में अयौनिक प्रजनन प्रक्रिया की रचना कर देता? मैं अल्लाह को न मानने वाले अपने साथ के उन लोगों की भी हत्या कर दूंगा जो यदि निम्नलिखित काम करते हैं:

ए. वे मेरे देश पर आक्रमण करते हों।

बी. वे किसी ऐसे समाज का विचार फैला रहे हैं जो अल्लाह के प्रिय समाज से मेल नहीं खाता है और इस कारण मेरे मज़हब पर ख़तरा बन रहे हैं।

जब कि मैं पहली स्थिति को समझ सकता हूं, क्योंकि अपने देश के लिये मर-मिटना सभी समाजों में प्रोत्साहित किया जाता है, किंतु स्थिति बी में बड़ी समस्या है। कुरआन की निम्नलिखित आयतों पर विचार कीजिये:

उनसे उस समय तक जंग करते रहो जब तक कि फ़ित्ना समाप्त न हो जाये और समस्त संसार में केवल अल्लाह का दीन रह जाये। और यदि वे युद्धविराम कर लें, तो वास्तव में, अल्लाह सब देख रहा है कि वो क्या कर रहे हैं। (8:39)

यह आयत इतनी ख़तरनाक है कि तालिबान जैसे कट्टरपंथियों को भी इसका अनुपालन कराने में कठिनाई आती है। मुस्लिम विद्वानों में इस आयत पर मतैक्य नहीं हैं, पर चूंकि मैं एक पक्का मुसलमान हूं तो यह मुझे लुभाता है कि मैं इस्लाम

की रक्षा करूंगा और उसका प्रसार करूंगा, इसके लिये चाहे जो भी करना पड़े।

इस आयत के बारे में क्या कहेंगे?

उनसे जंग करो, जो न तो अल्लाह को मानते हैं और न क़यामत में विश्वास करते हैं और न जिसे अल्लाह और उसके रसूल ने हराम (वर्जित) किया है, उसे हराम (वर्जित) समझते हैं, न उनके सच्चे मज़हब को अपना मज़हब बनाते हैं- उनसे तब तक जंग करते रहो जब तक कि वे इच्छानुसार जज़िया कर देने को न तैयार हो जायें, जब तक कि वे पराजित न हो जायें, और वे अपमानित होकर न रहें। (कुरआन 9:29)

जज़िया काफ़िर कर जैसा होता है। यदि आप मुसलमान नहीं हैं और मुस्लिम दुनिया में रह रहे हैं तो आपको जज़िया कर देना होगा। तनिक कल्पना कीजिये यदि आस्ट्रेलिया मुसलमानों के लिये अ-ईसाई कर देना अनिवार्य करने का नियम प्रभाव में ला दे तो क्या होगा। मैं एक ऐसे व्यक्ति के बारे में अपने बचपन की एक कहानी साझा करना चाहता हूं जो अपनी आतंकवादी गतिविधियों के लिये कुख्यात था। मैं लगभग 15 वर्ष का रहा हूंगा और मैं मस्जिद भी जाने लगा था, यद्यपि उस समय मैं उस विचारधारा में कुछ भयानक कमियां देखने लगा था जिस पर विश्वास करने के लिये मैं बाध्य किया जा रहा था। मेरे पिता एक उदारवादी मुसलमान थे और उन्होंने मोअज़्ज़म नामक एक व्यक्ति से मित्रता की। मोअज़्ज़म भी अपेक्षाकृत उदारवादी प्रतीत होता था, किंतु बाद में हमने पाया कि उसके विचार उन लोगों से भिन्न नहीं हैं जो तालिबान को मानते हैं।

उसने छल से मेरे पिता को पाकिस्तान में आज़ाद कश्मीर जाने को तैयार कर लिया। हमने इस स्थान के सौंदर्य के विषय में बहुत सुना था तो हम सौ अन्य यात्रियों के साथ वहां जाने के लिये तत्परता से तैयार हो गये। मेरे पिता ने भोलेपन में सोचा कि यह कोई आमोद-प्रमोद के लिये अवकाश-यात्रा होगी, किंतु जब हम बस में सवार हुए तो लगा कि कुछ ठीक नहीं है। जब हम इस यात्रा में आगे बढ़े तो पता चला कि ये कोई अवकाश-यात्रा नहीं थी, अपितु यह तो एक मज़हबी शिक्षा की यात्रा थी, या यूं कहें कि यह एक जिहादी भर्ती का प्रयास था।

अंतत: हम जोखिम भरी पहाड़ियों और सुंदर घाटियों से होते हुए आज़ाद कश्मीर पहुंच गये। जब हम अपने गंतव्य पर पहुंचे तो सभी यात्रियों को पहाड़ियों से घिरे एक ऐसे सुंदर सुरम्य स्थान पर एकत्र किया गया जहां पर सैकड़ों की

संख्या में हथियार लिये हुए दाढ़ी वाले व्यक्ति भरे हुए थे। चूंकि हमारे पास कोई जीपीएस या मानचित्र था नहीं तो हमें ठीकठीक पता नहीं चल सका कि हम कहां हैं, पर हमें बताया गया कि हम लोग भारत और पाकिस्तानी कश्मीर के बीच स्थित 'नियंत्रण रेखा' के अति समीप हैं। उस जिहादी समूह के साथ यह मेरा पहला और सौभाग्य से अंतिम अनुभव था जिसे लश्कर-ए-तैयबा कहा जाता है। इस संगठन का एकमात्र शत्रु भारत है और यद्यपि मैं भारत का कोई बड़ा प्रशंसक नहीं था, पर भारतीय मीडिया पाकिस्तानी मीडिया जो घटनाएं प्रचारित करवा रही थी, वो घटनाएं पाकिस्तान द्वारा बतायी जाने वाली बातों से कहीं अधिक सही लगने लगीं। अब जाकर मेरे पिता को स्थिति की गंभीरता सही में समझ आयी और उन्होंने अपने मित्र से कहा कि वे अपने बेटे को लाहौर वापस ले जाना चाहते हैं, क्योंकि उन्हें एक 15 वर्षीय बालक के लिये यहां का वातावरण उपयुक्त नहीं लग रहा है। मोअज़्ज़म ने मेरे पिता को आश्वस्त किया कि सबकुछ ठीक हो जायेगा और जब तक अगले दिन नयी बस नहीं जायेगी, वापस जाने का कोई उपाय नहीं है।

हमने गर्मियों के मौसम के अनुसार वस्त्र पहन रखे थे, पर वहां तापमान अभी भी लगभग शून्य डिग्री सेल्सियस तक पहुंचा जा रहा था। मुझे स्वीकार करना चाहिये कि मुझे उनका स्वागत अच्छा लगा और उन आदमियों ने सीमित साधन होने के बाद भी मेरे साथ अच्छा व्यवहार किया, मुझे गर्म वस्त्र व भोजन दिया। हमने एक बड़े प्लेट जिसे परात कहा जाता है, उसमें एक साथ ख़ाना खाया। एक ही परात में तीन-चार आदमी अपने हाथों से ख़ाना खाते। प्रत्यक्ष रूप से एक विशाल प्लेट में एक साथ ख़ाना ख़ाने से बंधुत्व की भावना बढ़ती है, पर मैं इसमें स्वयं को असहज पा रहा था और मैंने अगले दिन तक कुछ नहीं खाया। हमने एक कक्ष में रात काटी। वह कक्ष इतना बड़ा नहीं था कि 100 लोग सो पाते। फिर भी हम सभी फर्श पर ही रजाई में एक साथ सोये। मुझे यह अनुभव तनिक भी अच्छा नहीं लगा और मैंने अपने पिता से कहा कि अब मैं किसी भी स्थिति में वहां नहीं सोऊंगा।

मेरे विकल्पहीन पिता जानते थे कि उनका बेटा इस प्रकार के क़बीलाई स्थिति में रहने का तनिक भी अभयस्त नहीं है, पर वो विशेष कुछ कर नहीं सकते थे। उन्होंने मुझे आश्वस्त किया कि हम अगले दिन यहां से निकल जाने वाले हैं।

अगले दिन हमारी आंख खुली तो पट्टा पीटने की कुछ भयानक आवाज़ें

सुनाई दे रही थीं। हमें लगा कि कुछ व्यक्ति सो रहे लोगों को फ़ज्र की नमाज़ पढ़ने के लिये जगा रहे हैं। मेरे पिता तेज़ी से उठे और मुझे भी उठने को बोला। मैं अपेक्षाकृत छोटे डीलडौल का था तो मैंने पिता से कहा कि मैं बस किसी रजाई में छिप जाता हूं। मेरे पिता नहीं चाहते थे कि मुझसे तर्क-वितर्क करें और किसी का ध्यान उनकी ओर जाये तो वह चुपचाप मस्जिद की ओर चले गये।

जब मैं सोकर उठा तो हमें बताया गया कि लश्कर-ए-तैयबा के बड़े नेता हमको संबोधित करेंगे तथा हमारे प्रश्नों का उत्तर दिया जायेगा। विधिक कारणों से मैं उस नेता के नाम का उल्लेख नहीं कर सकता, पर आप अनुमान लगा सकते हैं कि वो कौन है। वह नेता एक सैन्य हेलीकॉप्टर में आया और मीठा बोलने वाले कुछ विनम्र लोगों ने हमारा अभिवादन किया। चूंकि यह बहुत पहले की बात है तो मैं उस व्यक्ति का पूरा भाषण नहीं सुना पाऊंगा, किंतु उसने जो कहा उसका सार बता रहा हूं।

युवा व बुज़ुर्ग व्यक्तियों को संबोधित करते हुए उसने हमें बताया कि किस प्रकार पाकिस्तान व इस्लाम को हमारी आवश्यकता है। यही वो समय था जब मेरे पिता को न केवल यह समझ में आया कि यह धन-एकत्र करने की युक्ति है, अपितु उनको यह भी पता चला कि लश्कर वास्तव में युवा मुसलमान लड़कों की भर्ती कर रहा है। उसने हमें पहले बताया कि किस प्रकार काफ़िर (मूर्तिपूजक) हिंदू सैनिक भारत में मुस्लिम लड़कियों का बलात्कार कर रहे हैं, मुस्लिम लड़कों की हत्याएं कर रहे हैं और बताया कि कैसे उनकी सहायता करना हमारा मज़हबी व राष्ट्रीय कर्तव्य है। उसने हमें बताया कि इस्लाम में अत्यंत पवित्र लड़ाकों का सम्मान किया जाता है और यदि हम अल्लाह के लिये जंग करते हुए मारे जाते हैं तो सीधे जन्नत जायेंगे, जहां हमारी सेवा के लिये सुंदर कुंवारी लड़कियां हैं। जैसा कि मैंने पहले ही कहा, मैं मज़हब पर संदेह करने लगा था, पर अल्लाह की अवधारणा को लेकर कोई ठोस मत नहीं बना पाया था। फिर उसने दिखाया कि रॉकेट-प्रक्षेपित ग्रेनेड (आरपीजी) कैसे चलाया जाता है। हमें निर्देश दिया गया कि हम अपने मुंह खुले रखें जिससे कि आरपीजी की आवाज से हमारे कानों के पर्दे न फटें। इसके बाद हमें मुजाहिद्दीन कहे जाने वाले पवित्र लड़ाकों के सजीव प्रशिक्षण अभ्यास को दिखाया गया। उस अभ्यास में दिखाया गया कि कैसे शैतान हिंदू भारतीय सैनिकों के अपहरण से अपने साथी मुजाहिद्दीन को बचाया जाये। इस

अभ्यास में प्रयुक्त बारूद इतने तेज धमाके की आवाज वाला था कि सच बोलूं तो यह मुझे अपनी ओर आकर्षण करने लगा था।

हमें लगता है कि हॉलीवुड फ़िल्में देखकर हम जंग और बंदूकों से लड़ाई के बारे में बहुत कुछ जान सकते हैं, किंतु यह अनुभव नितांत भिन्न था। शस्त्रों की कानफाड़ू ध्वनि किसी को भी लगभग मूर्छा की अवस्था में ला देने के लिये पर्याप्त होती है। इसके बाद उसने हमें अंतिम बार संबोधित किया और श्रोताओं से गुहार की कि वे भर्ती हों और भारत के विरुद्ध इस पवित्र जंग में भाग लें। अब तक मेरे मन-मस्तिष्क को भरा जा चुका था और मैं अपने देश व नये-नये समझे मज़हब के लिये जंग करने और मरने को तैयार था।

जब एक व्यक्ति एक पंजीयन-पुस्तिका लेकर मेरे पिता के पास आया तो उन्होंने उससे कहा कि इस बारे में वो अभी सोचेंगे। जब भर्ती करने वाले ने बार-बार आग्रह किया और यह पूछने का प्रयास करने लगा कि इस सीधे से निर्णय के लिये उन्हें इतना क्या सोचना है तो मेरे पिता ने कहा कि उन्हें अपने बेटे को भारतीय सेना से जंग करने के लिये यहां भर्ती करने के अपेक्षा पाकिस्तान की फ़ौज में भेजना अधिक अच्छा लगेगा। उस महान नेता ने दूर से यह सुन लिया और मेरे पिता को उपदेश देने लगा कि कैसे पाकिस्तान की फ़ौज देशद्रोही, कायर, अ-इस्लामी, मद्यपान करने वाले फौजियों से भरी पड़ी है। उसने हमें बताया कि कैसे 70 हज़ार पाकिस्तानी फ़ौज के जवानों ने 1971 में आज के बांग्लादेश में भारतीय सेना के समक्ष आत्मसमर्पण किया था। मेरे पिता को उसकी यह बात विचित्र लगी, क्योंकि वह व्यक्ति सैन्य हेलीकॉप्टर में आया था तो निश्चित ही उसको पाकिस्तानी फ़ौज का समर्थन प्राप्त था, पर फिर भी वह पाकिस्तानी फ़ौज के बारे में सार्वजनिक रूप से बुरा बोल रहा था। उसने अंत में कहा कि यदि पाकिस्तान को कश्मीर भारत से वापस छीनना है तो पाकिस्तानी फ़ौज यह काम नहीं कर पायेगी, पर मुजाहिद्दीन कर सकते हैं। अब मैं अपने पिता से तर्क-वितर्क करने लगा कि मैं भर्ती होना चाहता हूं और यहां रहना चाहता हूं। इससे मेरे पिता क्रोधित हो उठे। वहां ऐसा पहली बार हुआ कि जब मेरे पिता ने साहस दिखाया और कहा कि पाकिस्तानी क़ानून के अंतर्गत मैं वयस्क नहीं हूं इसलिये मुझे उनकी निगरानी में दे दिया गया। वो वहां से चले गये और मुझ पर और कोई दबाव नहीं डाला, किंतु मैंने देखा कि भर्ती करने वाले लोगों में से कुछ मुझ पर निगरानी रखे

हुए थे। जब तक हमने वह स्थान छोड़ नहीं दिया, मेरे पिता ने मुझे अपनी दृष्टि से एक क्षण के लिये भी ओझल नहीं होने दिया।

जब मैं लाहौर वापस आया तो पुन: संगीत व फ़िल्मों की ओर झुकाव हुआ। इससे मुझे उस सम्मोहन से बाहर निकलने में अधिक समय नहीं लगा जो उसने मुझ पर किया था, किंतु मैं अब भी सोचता हूं कि यदि मैं वहां भर्ती हो गया होता तो क्या आज जीवित होता। अभी भी मैं अचरज में पड़ जाता हूं कि कैसे एक बच्चा जिसका मन-मस्तिष्क स्वच्छ होता है और जिसके पास आधुनिक शिक्षा है, वह भी कुछ मिनटों में पवित्र जंग लड़ने के लिये प्रेरित हो ही जाता है। मदरसा (मज़हबी स्कूल) में पढ़े बच्चे को पवित्र जंग में अपने आपको बम बांधकर उड़ा लेने के लिये तैयार करना कितना सरल होता होगा न? मैंने इसका प्रत्यक्ष अनुभव किया है, अत: जब मैंने लगभग दो वर्ष बाद विश्व व्यापार केंद्र (डब्ल्यूटीओ) को वायुयान भेदकर नष्ट करते हुए देखा तो मुझे आश्चर्य नहीं हुआ।

उस समय मेरे अनेक मित्र प्रश्न किया करते थे कि कैसे कोई व्यक्ति किसी उद्देश्य के लिये लोगों की हत्याएं कर सकता है, जबकि उस उद्देश्य का अंतिम परिणाम वे संभवत: देख भी नहीं पायेंगे। पर मैं इस स्थिति को समझ सकता था। मेरा एक चचेरा भाई अपनी इच्छा से अमरीका के विरुद्ध पवित्र जंग में भाग लेने के लिये घर से भाग गया था। बाद में हमने सुना कि उसने लाहौर में अपनी अम्मी को फ़ोन किया और बताया कि घर से भागने पर वह दुखी है और लौट आना चाहता है। वह कभी वापस नहीं आया। लश्कर-ए-तैयबा के वह महान नेता अब अमरीका व भारत द्वारा वांछित घोषित किये गये हैं और उनके सिर पर एक करोड़ अमरीकी डालर का पुरस्कार है। उस नेता को प्रत्यक्ष देखने-सुनने के बाद अब जब मैं पाकिस्तान के सम्मानित विचारकों या बुद्धिजीवियों को उसे अति शांतिप्रिय मुसलमान कहते हुए देखता हूं तो अत्यंत दुखी अनुभव करता हूं।

सौभाग्य से मेरे पिता और मैंने पॉस्कल की पहेली के विषय में नहीं सुना था, नहीं तो अल्लाह में अंधा विश्वास करते हुए मैं भर्ती हो जाता और संभवतया आज से दो दशक पहले कहीं मार दिया जाता। बिना प्रमाण के किसी भी बात में विश्वास विकट समस्याओं को जन्म देता है। जब आप किसी मज़हब में विश्वास करते हैं तो स्वयं को किसी भी ऐसी बात में विश्वास करने के लिये तैयार रखते हैं जिसके पीछे वास्तव में कोई साक्ष्य नहीं होता है। पूर्वी सभ्यताओं में 'बुरी दृष्टि'

की मान्यता है। यह एक प्रकार से शिकार के प्रति ईर्ष्या या द्वेष जैसा है और (यदि यह एक निर्जीव वस्तु है) इसका परिणाम क्षति, चोट अथवा मृत्यु के रूप में सामने आता है। विभिन्न संस्कृतियों में इस बुरी दृष्टि से बचने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के समाधान हैं, जैसे कि इस्लाम में दुआ पढ़ना और हिंदू संस्कृति में कुछ अनुष्ठान करना आदि।

मान्यता यह होती है कि यदि आप कोई कार क्रय करते हैं और वह अत्यंत सुंदर दिखती है तो आपको इसकी बहुत अधिक प्रशंसा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि जो लोग आपसे जलते हैं या जिन्हें आप अच्छे नहीं लगते हैं वे लोग इस वस्तु पर बुरी दृष्टि डालेंगे तथा इसका परिणाम यह होगा कि या तो यह चोरी हो जायेगी अथवा क्षतिग्रस्त हो जायेगी। इस मान्यता के अनुसार आपका कोई प्रिय भी अनजाने में आपकी नयी संपत्ति पर 'कुदृष्टि' रख सकता है, अतः यदि आप मुसलमान हैं तो आपको माशाअल्लाह (अल्लाह की इच्छा से) कहना होगा अथवा आपको सूरा अल-नस्र या अल-फलक की दुआ पढ़नी होगी। दूसरी ओर यदि आप हिंदू हैं तो आपको आरती करनी होगी। मनुष्यों के लिये भी इसी प्रकार की दुआ या मज़हबी गतिविधियां की जाती हैं।

हिंदू संस्कृति में इस मान्यता के अनुयायी अपनी नयी वस्तु के सामने कुरुप से दिखने वाला कुछ टांग देते हैं। इसके पीछे सोच यह है कि यह 'कुरुप' वस्तु मुख्य लक्ष्य (कोई सुंदर व्यक्ति या वस्तु) से बुरी दृष्टि हटाकर अपनी ओर कर लेगी और उस व्यक्ति या वस्तु को क्षति से बचा लेगी। पाकिस्तान में ऐसी बहुत सी परंपराएं हैं जिन्हें हिंदू संस्कृति से ग्रहण किया गया है, क्योंकि हज़ारों वर्षों से वे लोग एक-दूसरे के आसपास रहते आये हैं।

मैं नहीं कह सकता कि यह बुरी बात है, क्योंकि यह जानना निश्चित ही उत्तम है कि पाकिस्तानी संस्कृति अरबी संस्कृति की तुलना में हिंदू संस्कृति से अधिक प्रभावित है। यही वह एकमात्र कारण हो सकता है कि पाकिस्तान की मुसलमान बहुसंख्यक जनता अपने देश में शरिया क़ानून नहीं चाहती है। मैं एक प्रसिद्ध पाकिस्तानी शो हस्बे-हाल देख रहा था। इसकी 3 मई 2012 की कड़ी में कार्यक्रम का प्रस्तोता उन लोगों का उपहास करने लगा जो बुरी दृष्टि से बचने के लिये हिंदू उपायों यथा नई कार के नीचे जूता टांग देने अथवा मुख पर काला टीका लगाने आदि को अपनाते हैं। फिर वह उपदेश देने लगा कि पाकिस्तानी लोग

मुसलमान हैं और उन्हें बुरी दृष्टि से बचने के लिये केवल अल्लाह की इबादत करनी चाहिये। इस पूरी घटना में विडम्बना यह है कि वह व्यक्ति जो स्वयं ही अंधविश्वास को मानता है दूसरी संस्कृति का उपहास कर रहा है तथा सोचता है कि वह औरों से स्मार्ट है। यदि प्रस्तोता ने उन सभी लोगों का उपहास किया होता जो अंधविश्वास को मानते हैं तो कुछ अर्थ भी होता, किंतु मेरा मानना है कि एक बार आप किसी ऐसी बात में विश्वास करने लगते हैं जो उतना ही अंधविश्वास है जितना कि मज़हब तो आप किसी भी बात में बिना प्रमाण के विश्वास करने के लिये स्वयं को तैयार कर लेते हैं।

> हे मोमिनो! यदि तुम्हारे बाप व भाई भी ईमान (अल्लाह और उसके रसूल के मज़हब में विश्वास) की अपेक्षा कुफ़्र (अल्लाह और उसके रसूल के मज़हब में अविश्वास) करने को प्राथमिकता दें तो उन्हें भी अपने साथ न रखो। और तुममें से जो उन्हें अपने साथ रखता है तो वो उन्हीं में से है जो ग़लत करने वाले लोग हैं। (कुरआन 9:23)

यह आयत मुसलमानों को निर्देश देती है कि जो अल्लाह में विश्वास नहीं करते उनको मित्र न बनाओ, भले ही वे तुम्हारे पिता या भाई ही क्यों न हों। मज़हब न केवल विभाजन कराता है, अपितु जो आपकी व्यक्तिगत आस्था से सहमत नहीं होता उसके प्रति घृणा भी उत्पन्न करता है। कल्पना कीजिये कि यदि मैं अपने परिवार के सदस्यों से सारे संबंध इसलिये समाप्त कर लूं कि वे पूंजीवाद की अपेक्षा समाजवाद को मानते हैं अथवा इसका विपरीत या वे उस क्रिकेट टीम के समर्थक हैं जो मुझे प्रिय नहीं है।

अधिकांश लोग परी-कथाओं में विश्वास नहीं करते, किंतु वे शैतान की कहानी में अवश्य विश्वास करते हैं। मैं आश्चर्य में सोच रहा था कि परी-कथाएं उतनी विश्वासयोग्य क्यों नहीं हैं जितनी कि उसी के समान औचित्यहीन अस्तित्व। इसका एकमात्र कारण जो लगता है कि वह भय है। आप स्वयं इस प्रयोग को कर सकते हैं और इससे बहुत पैसा बना सकते हैं। यूं ही किसी से कहिये कि वह कोई ई-मेल यथासंभव अधिक से अधिक लोगों को भेजे तो उसकी मनचाही इच्छा पूरी होगी और ईश्वर की कृपा मिलेगी।

हो सकता है कि आप अपना संदेश फैलाने में उतने सफल न हों, किंतु वहीं

दूसरी ओर आपने अपने ईमेल के अंत में कुछ इस प्रकार की एक पंक्ति जोड़ दी कि 'यदि इस मेल को आप कम से कम 20 लोगों को नहीं भेजते हैं तो आपके किसी अतिप्रिय व्यक्ति की घोर पीड़ा में मृत्यु हो जायेगी अथवा कुछ ऐसा ही अनिष्ट होगा। बस देखिये आपका संदेश कितने सारे लोगों के पास पहुंच जायेगा। हमने यहां क्या परिवर्तित किया? लोग चाहे जिस मज़हब में विश्वास करते हों, इसकी चिंता किये बिना वे वे अल्लाह की कृपा की उतनी चिंता नहीं रहती, जितना कि उसके कोप की। यह मज़हब की नंबर एक युक्ति है: मज़हब लोगों को भय दिखाकर और धमकी देकर विश्वास कराता है। मानवों ने अपने लिये इतना सुविधाजनक जीवन बना लिया है कि वे प्राकृतिक परभक्षियों से तनिक भी भय नहीं खाते, किंतु फिर भी उन्हें आज भी भयभीत होने के लिये किसी की आवश्यकता है। इस दुर्बलता का लाभ उठाने के लिये कुछ धूर्त व्यक्ति मज़हबी विचारधाराओं को लेकर आ गये। मैं सोचता हूं कि यदि दोज़ख़ की संकल्पना न होती तो बड़े मज़हब कितना सफल हो पाते।

निष्कर्ष यह है कि चूंकि अल्लाह और उसके नियमों में विश्वास करना बुद्धिमानीपूर्ण कार्य है तो मैंने कभी मैडोना या नूरजहां को नहीं सुना होता, टॉम हैंक्स को नहीं देखा होता, इसकी अपेक्षा मैंने पत्थर मार-मार कर कितने सारे आदमियों व औरतों की हत्या की होती, संभवत: किसी व्यक्ति के राजनीतिक अथवा आर्थिक लालच के लिये अन्य मनुष्यों के विरुद्ध जंग छेड़ा होता और संभवत: समय से पहले ही मर गया होता, अपने ही परिजनों से घृणा करता और उनसे दूर हो गया होता क्योंकि वे मज़हब में विश्वास नहीं करते हैं। पॉस्कल सुझाव देते हैं कि यदि आप अल्लाह में विश्वास करने की धारणा में ग़लत सिद्ध होते हैं तो इससे कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। किंतु सच यह है कि यदि अल्लाह में विश्वास करने की आपकी धारणा ग़लत सिद्ध होती है तो इससे भयानक प्रभाव पड़ेगा। अंत के कुछ पृष्ठ ईश्वर को झुठलाते नहीं हैं, पर निश्चित रूप से यह सिद्ध करते हैं कि किसी अस्तित्वहीन अथवा ग़लत अल्लाह में विश्वास करने का भयानक परिणाम भुगतना पड़ता है। क्या मुझसे अपेक्षा की जाती है कि मैं उन पुस्तकों का इतना सारा बोझ लेकर जियूं जिन्हें सैकड़ों वर्ष पूर्व मनुष्यों ने खोहों में बैठकर बिना किसी साक्ष्य के लिखा है?

इस्लाम को उपरोक्त समस्याओं के लिये कटघरे में खड़ा किया जा सकता

है, किंतु उन दूसरी समस्याओं का क्या जो केवल इस्लाम की बपौती नहीं हैं? जादू-टोना, भूतों व शैतानों जैसे विश्वासों का क्या? मेरी साथी की बहन कैथोलिक है और हम सभी लोगों को सदैव कहती रहती है कि वह 'आत्माओं' से बात करती हैं। मैंने उनकी आत्मा वाली कहानी पर उनके साथ तार्किक बात करने का प्रयास किया, किंतु किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सका। उनकी मां बहुत अच्छी मनुष्य और तर्कशील थीं, पर फिर भी इस विचारधारा की थी कि वह पुनः ईसाई धर्म में ही जन्म लें।

19 जून 2012 को रात के लगभग 8:00 बजे मेलबॉर्न में भूकम्प आया। जैसे ही भूकम्प रुका तो मेरी साथी के पास उसकी मां का फ़ोन आया। उन्होंने बताया कि पूरा भवन हिल रहा था। वह इतनी भयभीत थीं कि बेटी के कक्ष में भी नहीं जा रही थीं। जब मेरी साथी ने उनसे पूछा कि क्या वह भूकम्प के कारण भयभीत हैं तो उन्होंने कहा, 'नहीं। मुझे लगा कि आत्माओं ने मेरी बेटी के कक्ष पर आक्रमण कर दिया है।' हां, जब वो सामान्य हुईं तो उन्हें लगा कि भूकम्प ही था। सौभाग्य से पश्चिमी शिक्षा व संस्कृति ने उन्हें इस भ्रम से बाहर आने में सहायता की, किंतु इसने अंधविश्वास समाप्त नहीं किया।

कोई न कोई कारण होगा कि पश्चिम के लोग पूर्व के लोगों की तुलना में बहुत कम अंधविश्वासी होते हैं। पाकिस्तान में मेरी चाची बहुत धार्मिक हैं। मैं एक बार उनसे स्काइप पर बात कर रहा था तो उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मैंने उस औरत के बारे में सुना है जिस ने रसूल मुहम्मद की बुराई की तो सांप बन गयी। मैंने उनसे कहा कि मैंने ऐसी औरत के बारे में नहीं सुना है, पर मैं पता करूंगा। वह वीडियो आज भी यूट्यूब पर है और आप 'वूमन टर्न्स टू स्नेक डयूरिंग हज' डालकर ढूंढ सकते हैं। उस औरत के बारे में पता करने से पूर्व मैंने अपनी चाची से पूछा कि इस कहानी पर वह क्या सोचती हैं तो उन्होंने तुरंत उत्तर दिया कि जब तुम महान रसूल का अपमान करोगे तो ऐसा कुछ होने की संभावना तो होगी ही। मैंने पूछा कि उन्होंने ऐसा कहां सुना तो उन्होंने उत्तर दिया कि स्कूल में एक और शिक्षिका के मुख से ऐसा सुना। (मेरी चाची हाईस्कूल की शिक्षिका हैं)। उन्होंने कहा कि वहां की शिक्षिकाएं इतनी भयभीत थीं कि उन्होंने उन्हें उस घटना को देखने से भी मना किया। मैंने उनसे कहा कि यदि ऐसा कुछ हुआ होता तो विश्व की मीडिया इस घटना की कवरेज कर रही होती। मैंने वह वीडियो ढूंढा और अपनी चाची को

भेज दिया तथा उन्हें बताया कि यह झूठ है, परंतु वह इसकी सत्यता को लेकर 50 प्रतिशत हां और 50 प्रतिशत न की स्थिति में ही रहीं। सौभाग्य से आज स्थिति यह है कि आपको जो बताया गया है उस पर अंधा विश्वास करने की अपेक्षा आप स्वयं अन्वेषण कर सकते हैं।

जैसे कि कल मेरी अम्मी 'नर्क का कुआं' नामक एक प्रवाद (अफ़वाह) के फेर में पड़ गयीं। यह प्रवाद 90 के दशक के आरंभिक वर्षों में किसी रूसी ईसाई द्वारा नास्तिकों को डराने के लिये तैयार की गयी थी। इसमें प्रत्यक्ष रूप से कहा गया कि साइबेरिया में एक 'वैज्ञानिक परियोजना' चल रही है, जिसमें 14 किलोमीटर गहरा छिद्र किया गया और जब वैज्ञानिक छिद्र के अंतिम छोर पर पहुंचे तो पीड़ा में कराहते लाखों लोगों की चीख़ें सुनायी दीं। इस परियोजना की अगुवाई मिस्टर अजाकोव कर रहे थे जिन्होंने इन दंडित की जा रही आत्माओं के स्वर को रिकार्ड करने के लिये ताप-संवेदी माइक्रोफ़ोन डालकर आगे का अनुसंधान किया। स्पष्ट ही है कि अजाकोव जो एक नास्तिक थे वो तुरंत नर्क में विश्वास करने वाले ईसाई बन गये।

यह निश्चित रूप से एक प्रवाद था, क्योंकि न तो किसी अजाकोव का कोई पता था और न ही साइबेरिया में 14 किलोमीटर गहरा कोई छिद्र था। इस वीडियो में जो ध्वनि व स्वर रिकार्ड किये गये थे वे बैरन ब्लड फ़िल्म से लिये गये थे जिसमें थोड़ा-बहुत कुछ इधर-उधर जोड़ दिया गया था। निश्चित ही मेरी अम्मी ने मुझे वह वीडियो मुस्लिम परिप्रेक्ष्य से दिखायी और मुझे वापस इस्लाम स्वीकार करने को कहा, क्योंकि उनके अनुसार निश्चित रूप से कहीं दोज़ख़ है। उस प्रवाद की सच्चाई बताने से पूर्व मैंने अपनी अम्मी से पूछा कि चूंकि मिस्टर अजाकोव ईसाई हो गये तो क्या मुझे भी ईसाई हो जाना चाहिये। मुझे आश्चर्य हुआ कि उन्होंने कहा, 'क्यों नहीं। कम से कम तुम ईश्वर में विश्वास तो करने लगोगे।' मैंने उनसे पूछा कि क्या उनको भी ईसाई हो जाना चाहिये तो प्रत्याशित रूप से उन्होंने ऐसा करने से मना कर दिया। मुझे उन्हें बताना पड़ा कि वह एक प्रवाद था और जो चीख़ें उसमें सुनाई दे रही थीं वो बैरन ब्लड मूवी की थी। उन्हें समझ में तो आया कि वह प्रवाद था और उन्होंने यह तथ्य स्वीकार भी कर लिया, किंतु जन्नत और दोज़ख़ में उनका विश्वास अभी भी पहले जैसा ही सुदृढ़ था।

यदि आज कोई व्यक्ति दावा करे कि वह एक पंख वाले घोड़े पर कूदकर

चढ़ा और उड़कर मक्का से जेरूसलम पहुंच गया अथवा यह दावा करे कि वहां कोई ऐसा था जिसने पानी को शराब बना दिया और मरे हुए लोगों को जीवित कर दिया तो ये अंधविश्वासी लोग भी हंसेंगे। फिर भी ऐसे लोग प्रमाण के विषय में सोचे बिना कुछ ऐसी बातों पर विश्वास करना चाहते हैं जो कथित रूप से हज़ारों वर्ष पहले हुईं। जिस प्रकार आप विसंगति, विरोधाभासी तर्कों और सतत परिवर्तनशील सिद्धांतों को विज्ञान के साथ जोड़ सकते हैं, उसी प्रकार आप अंधविश्वास, स्वतंत्रता के अभाव और आनंद के अभाव को मज़हब से जोड़ सकते हैं। विज्ञान का बोझ हमें नये अविष्कार और श्रेष्ठतर जीवन की ओर ले जाता है, किंतु मुझे मज़हब के बोझ से कुछ अच्छा मिलता नहीं दिखता है।

पॉस्कल के पहेली की विषयवस्तु दोज़ख़ के अस्तित्व के काल्पनिक भय के मुख्य दावे के आसपास घूमती है। हां, एक बार हम यह प्रामाणिक रूप से जान जाएं कि अल्लाह के पास उनके लिये दोज़ख़ है जो उससे सहमत नहीं होते तो फिर अल्लाह के सिद्धांत से सहमत होना तार्किक होगा, किंतु सच यह है कि अल्लाह के होने का कोई भी प्रमाण नहीं है। काल्पनिक भय के आधार पर किये गये किसी निर्णय की कोई उपयोगिता नहीं होती और न ही अनंत काल तक दोज़ख़ में आग में जलाये जाने के काल्पनिक भय से अल्लाह में विश्वास करने का निर्णय लेना विचारयोग्य है। हम कार दुर्घटना में मारे जाने के काल्पनिक भय से घर पर तो नहीं बैठेंगे और न ही कोई महत्वपूर्ण बैठक या परीक्षा छोड़ेंगे, पर फिर भी पॉस्कल की पहेली कह रही है कि हमें दोज़ख़ में जलाये जाने के भय से अपना पूरा जीवन हज़ारों वर्ष पुराने उन मिथकों के अनुसार जीना चाहिये।

vè;k; 4

अल्लाह की कल्पना

अल्लाह या तो इस विनाश को रोकने के लिये कुछ कर नहीं सकता, अथवा उसे कोई चिंता नहीं है, या फिर अल्लाह का अस्तित्व ही नहीं है। अत: अल्लाह अक्षम, बुरा अथवा काल्पनिक है। इसमें से आपको जो अच्छा लगे वह मान लीजिये, परंतु अपना पक्ष बुद्धिमानी से चुनिये।

- सैम हारिस

अरबों लोग भिन्न-भिन्न ईश्वर को मानते हैं और वे मानते हैं कि उनके ईश्वर ने ही यह ब्रह्माण्ड बनाया है। मज़हबी जिस सामान्य तर्क का सर्वाधिक प्रयोग करते हैं वह यह है कि 'वास्तव में, आप बहुत सी बातें नहीं जानते हैं, अत: मान लीजिये कि अल्लाह ने यह किया है।' यह तर्क 'गॉड आफ द गैप्स' कहा जाता है। प्राचीन यूनानी नहीं जानते थे कि समुद्री अंधड़ कैसे आता है तो उन्होंने समुद्री मौसम के लिये एक ईश्वर गढ़ लिया जिसे वो पॉसेडॉन कहते थे। तत्पश्चात रोमन आये जो नहीं जानते थे कि समुद्र कैसे काम करता था तो उन्होंने एक ईश्वर नेप्च्यून गढ़ लिया। आज हमें पता चल चुका है कि समुद्री अंधड़ कैसे आता है तो पॉसेडॉन और नेप्च्यून की अब आवश्यकता नहीं रह गयी। वे अपने पूर्ववर्तियों के जैसे ही मृत-ईश्वर हो चुके हैं।

आधुनिक विज्ञान के महानतम मस्तिष्कों में से एक सर इसाक न्यूटन ईश्वर में विश्वास करते थे। वो विलक्षण प्रतिभा वाले व्यक्ति थे और ग्रहों की गति पर काम करना चाहते थे तो उन्होंने कैलकुलस का अविष्कार किया। वो इस काम में सफल भी हुए। किंतु जब कैलकुलेशन जटिल हो गया और वो अनेकों अज्ञात ग्रहों के गुरुत्व के कारण ग्रहों के पथ को समझ नहीं सके तो उन्होंने अपना शोध वहीं छोड़ दिया और कहा कि उसे ईश्वर ने बनाया है। आज हमारे पास उच्चकोटि के भौतिकविद् व गणितज्ञ हैं तथा हम सभी ग्रहों के गुरुत्वाकर्षण प्रभाव पर काम कर सकते हैं तो हमें अब न्यूटन के ईश्वर की आवश्यकता नहीं है। मैं सोचता हूं कि

यदि न्यूटन ने उस समस्या का समाधान कर लिया होता तो वे इस निष्कर्ष पर नहीं आते कि ईश्वर ने किया।

आज के संसार में दूसरों के ईश्वर को नकारने वाले मज़हबी कहते हैं कि आप जीवन के उद्‌गम का पता नहीं लगा सकते हैं, अत: यह अल्लाह ने बनाया है। इतिहास बताता है कि कुछ होनहार मानवों की मेधा अंतत: कठिन प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़ ही लेती है तो सौ-दो सौ वर्ष में (अथवा इससे भी अधिक समय लगे) कोई न कोई वैज्ञानिक जीवन के उद्‌गम का वर्णन करेगा ही और तब क्या होगा?

तब आपके अल्लाह की आवश्यकता नहीं रह जायेगी। अल्लाह में विश्वास आपको उत्तर पाने से रोकता है या जब आप किसी बात का समाधान नहीं निकाल पा रहे हों तो सही उत्तर ढूंढने की अपेक्षा यह कह देना सबसे सरल है कि ईश्वर ने किया है। आपको सोचना है कि डेढ़ अरब मुसलमान हमें अपने में से कोई नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक क्यों नहीं दे सके। अब्दुस सलाम एकमात्र मुसलमान भौतिकविद् हैं जिन्हें नोबल पुरस्कार मिला है। शेष मुसलमान कहां हैं? सबसे रोचक बात यह है कि अब्दुस सलाम अहमदी थे। इस्लाम के प्रभावशाली फ़िरक़े सुन्नी व शिया अहमदियों को मुसलमान नहीं मानते हैं। मैं आपको बता रहा हूं कि वे चिकित्सा में कोई नोबल पुरस्कार नहीं पा सकते, क्योंकि जब आप यह सोचेंगे कि आदम व हौव्वा की कहानी सही है और उद्विकास का सिद्धांत ग़लत है तो आप कभी बड़ी खोज कर ही नहीं सकते। आइये, अब दूसरों के ईश्वरों को नकारने वाले मज़हबी की मानसिकता का विश्लेषण करें। वे मानते हैं कि सबकुछ अल्लाह द्वारा बनाया गया है और वह भी जादू से। हम जानते हैं कि ब्रह्माण्ड का जन्म 13.8 अरब वर्ष पूर्व महाविस्फोट (बिग बैंग) के साथ हुआ। कुरआन कहती है:

> वही है जिसने आकाश और धरती को छ: दिनों में बनाया, फिर
> स्वयं को अर्श (सिंहासन) पर आसीन किया। (57:4)

तो आइये उस छह दिन की भ्रांति को कुछ क्षण के लिये भूल जायें और एक दिन के लिये मान लें कि अल्लाह का एक दिन उतना ही लंबा है जितना कि मुसलमान दावा करते हैं अर्थात अल्लाह का एक दिन डेढ़ अरब वर्ष के बराबर है (यद्यपि ऐसा कहीं कहा नहीं गया है)। तो अल्लाह और लगभग 9 अरब वर्ष तक प्रतीक्षा करता रहा और तब उसके बाद धरती दिखी। मुझे अचंभा होता है कि

अल्लाह उन 9 अरब वर्षों में क्या कर रहा था। निश्चित ही वह तारों को जन्मते और मरते हुए, ग्रहों को एक-दूसरे से टकराते हुए, कृष्णविवर (ब्लैकहोल) को तारों को निग़लते हुए और आकाशगंगाओं (गैलेक्सियों) को टकराते हुए देखते-देखते बहुत ऊब गया होगा। उसके पास वह सब देखने के लिये बहुत समय था। फिर हमें 4.6 अरब वर्ष पूर्व अथवा ब्रह्माण्ड की रचना के 9 अरब वर्ष पश्चात धरती मिली। इसके पश्चात सूक्ष्मजीव के अस्तित्व में आने में और 80 करोड़ वर्ष लग गये। इन सूक्ष्मजीवों में अगले 1.8 अरब वर्षों तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ और फिर इसके पश्चात प्रथम बहुकोशिकीय सुकेंद्रिक जीव आये। ये जीव उन साधारण एककोशिकीय जीवों से श्रेष्ठ थे। अल्लाह ने अभी भी इन 1.8 अरब वर्षों में कोई गंभीर काम नहीं किया था तो वह बहुत ऊब रहा होगा। वह संभवतः सोच रहा होगा, 'चलो, संसार को और थोड़ा चटपटा बनायें!' वह और एक अरब वर्ष तक तक प्रतीक्षा करता है और तब यौनिक-प्रजनन से उत्पन्न होने वाले जीव आये।

वह अगले 50 करोड़ वर्ष तक केवल जीवों का पॉर्न देखता रहा और वह इससे भी ऊब जाता कि इससे पहले ही उसने कुछ जटिल पशुओं की रचना करने का निर्णय लिया। वह फिर और 50 करोड़ वर्ष चुप मारकर बैठा रहा और फिर पैरों वाले प्राणियों का विकास किया। कुछ मुसलमान और ईसाई सोचते होंगे कि 'ये सब झूठ है।'

अब हम 50 करोड़ वर्ष पूर्व की बात कर रहे हैं, पर मानव (उस परोपकारी अल्लाह की अंतिम योजना) अभी भी कहीं दिख नहीं रहा था। अब इसके आगे के 50 करोड़ वर्ष तक अल्लाह इन पशुओं को जन्मते, एक-दूसरे को खाते और मरते हुए देखता रहा। डायनासोर आये और गये, दैत्याकार डायनासोरों ने त्रिशृंगसरटों (डायनासोरों के जीन से निकले पशु) को असंख्य बार भयभीत किया और तभी कोई उल्का पिंड धरती से टकराया और सभी डायनासोरों को समाप्त कर दिया। यह जुरासिक पार्क का एक भ्रांत विस्तारित संस्करण है जो लगभग 50 करोड़ वर्ष पहले चला।

जैसा कि उसने अभी तक किया है, वैसे ही वह अंत में इन सब से ऊब गया और फिर अगले 6.5 करोड़ वर्ष तक सोचता रहा कि और क्या रुचिकर किया जाये। यही कोई दो से तीन हज़ार वर्ष पूर्व अफ्रीका महाद्वीप में पहला मानव दिखा। असंख्य मानव जन्मे और मर गये, उन्होंने जानवरों का शिकार किया और कभी-कभी वे भी शिकार बने। असंख्य स्त्रियां प्रसव के समय मरीं। असंख्य मनुष्य

शिकार करते समय मर गये। औसत जीवन काल 30 वर्ष का रहा। फिर 295 हज़ार वर्ष ऐसे ही निकल गये और अचानक नूह और अब्राहम जैसे लोग, फिर मूसा व जीसस और फिर मुहम्मद का आना प्रारंभ हो गया। मुसलमान यह भी दावा करते हैं कि बड़े पैग़म्बरों के बीच में और भी अनेक पैग़म्बर आये, किंतु हमारे पास उनका कोई प्रमाण नहीं है। किंतु **14 अरब वर्ष लंबी कहानी को बीच में छोड़कर यह अल्लाह अचानक इसमें रुचि लेना प्रारंभ कर देता है कि हम क्या खाते हैं, क्या पीते हैं, किसके साथ संभोग करते हैं, कैसे संभोग करते हैं, शौच आदि से निवृत्त होने के बाद अपने निजी अंगों को साफ कैसे करते हैं। यह अल्लाह, करोड़ों आकाशगंगाओं का रचयिता, धरती पर सभी के जीवन का स्वामी, सभी समुद्रों व आकाशों का सुल्तान इतना तुच्छ है कि जब हम उसकी महानता को नहीं मानते हैं या उसके अस्तित्व को भुला देते हैं तो वो इतना क्रोधित हो उठता है कि एक नीच व्यक्ति जैसा बनकर अपमानित करने लगता है और हमारे बारे में अपशब्द कहने लगता है।** वह पुस्तकें भेजता है और ये पुस्तकें उसी प्रकार लज्जित-अपमानित करती हैं जिस प्रकार तानाशाह हिटलर की लिखी पुस्तक मीन कैम्फ़। वह अपनी प्रिय पुस्तक कुरआन में काफ़िरों (अ-मुस्लिमों) को कैसे देखता है, आइये तनिक अवलोकन करते हैं।

> अल्लाह के अनुसार, काफ़िर (अ-मुस्लिम) असभ्य जीव होते हैं जो पशुओं जैसे खाते हैं 91या वे व्यवहारिक रूप से लंगूर होते हैं 92या केवल लंगूर ही नहीं- उन्हें सुअर कहना चाहिये। 93 नहीं, नहीं इतने से ही अल्लाह संतुष्ट नहीं होता है, वह काफ़िरों को अन्य पशुओं के नाम से भी बुलाना चाहता है। हां, वे गधे होते हैं। 94 अब जब उसके पास और अपशब्द नहीं बचा तो वह हमें अर्थात काफ़िरों को पशुओं में भी सबसे अधम (नीच) कहता है। 95 यह ठीक वैसा ही है जैसे कि स्कूल जाने वाला कोई छोटा बच्चा जब पिछड़ जाता है तो अपने अन्य साथी प्रतिद्वंदियों को निकम्मा बताने लगता है। 96 काफ़िरों का हृदय कलुषित होता है। 97 काफ़िर क्रूर और हृदयहीन होते हैं। 98 उनका मन गंदा होता है। 99 काफ़िर बहरे होते हैं 100 और अंधे होते हैं। 101

> वे मूर्ख और कड़वी जिह्वा वाले होते हैं। 102 वे गंदे और अशुद्ध होते हैं। 103 इतना ही नहीं काफ़िर वास्तव में हेय मनुष्य होते हैं। 104 वे क्रूर भी होते हैं और अन्यायी भी। 105 काफ़िर मूलत: मनुष्यों में सबसे बुरे मनुष्य होते हैं। 106 वे नीचों में भी नीच होते हैं। 107 वे पापी झूठे होते हैं और वे सदा मिथ्या बोलते हैं। 108 वे उसको मानते हैं जो इस संसार में असत्य है। 109 निर्बलों को प्रेम करने वाले अल्लाह को वे प्रिय नहीं होते। 110 वास्तव में अल्लाह उन्हें त्याग देता है। 111 दयावान अल्लाह उनका विनाश कर देता है। 112 अल्लाह काफ़िरों को कोप देता है 113 और उनसे घृणा करता है। 114, 115

यदि कोई व्यक्ति अपने शत्रु, पूर्व-साथी, पूर्व-मित्र अथवा जिससे उसे घृणा हो उसके प्रति इस प्रकार का व्यवहार करे तो भले ही इस व्यक्ति के साथ जो कुछ भी हुआ हो, पर ऐसे व्यक्ति को कुछ भी कह लें, पर अच्छा तो नहीं ही कहेंगे। काफ़िरों को इस अल्लाह से कोई लेना-देना नहीं है या उन्होंने इस अल्लाह या इसके बच्चों का न तो बलात्कार किया है और न इनकी हत्या की है, फिर भी वह उनके प्रति घृणा से भरा हुआ है और नष्ट करने पर उतारू है, चाहे कोसकर अथवा सीधे दंड देकर। इस अल्लाह का क्या चरित्र है कि डेढ़ अरब लोग इसकी इबादत करते हैं? मैं मानता हूं कि अधिकांश मुसलमान अरबी नहीं समझते हैं और इस कारण वे इस अल्लाह के उन संदेशों को नहीं समझते हैं जो विरोधाभास और घृणा से भरा हुए हैं। पर अरब के मुसलमानों का क्या? हो सकता है कि वे इन आयतों को पृथक-पृथक पढ़ते हों और जहां अच्छे और बुरे का घालमेल होता है वहां वे बुरे की उपेक्षा कर देते हों। इसलिये यह महत्वपूर्ण है कि मज़हब की बुरी बातों को चुन-चुन कर दिखाया जाये जिससे कि समझा जा सके कि यह वास्तव में कितना बुरा है। कोई सिद्धांत कितना बुरा हो सकता है, यह जानने के लिये हमें बस उस सिद्धांत के बुरे अंशों में झांकने की आवश्यकता होती है। यदि कुरआन अल्लाह के शब्द हैं तो हमें इसमें कोई भी बुरी बात नहीं मिलनी चाहिये, पर हमें इसमें बड़ी मात्रा में बुरी बातें मिलती हैं।

अल्लाह का चरित्र

कुरआन द्वारा वर्णित अल्लाह और इस्लाम का संस्थापक मुहम्मद यहूदी-

ईसाई ईश्वर से अधिक भिन्न नहीं हैं। इन दोनों अब्राहमिक धर्मों के जैसे ही यह अल्लाह भी बात-बात पर क्रोधित हो उठता है और उसे महिलाओं की स्वतंत्रता (उनके पुरुष समकक्षों को उनका स्वामी बताकर) अच्छी नहीं लगती। इसका परिणाम यह होता है कि कम पढ़े-लिखे मुस्लिम समाजों में औरतों के साथ दुर्व्यवहार होता है। वह दंड देने में चरमपंथी और अत्यधिक अलोकतांत्रिक हो जाता है। मेरे तर्क आपको आहत कर सकते हैं, किंतु खुले मस्तिष्क के साथ पढ़ते रहिये और पढ़ते समय तर्क के आशयों पर पद्धति बी अपनाइये तथा तब अपने स्वयं के निष्कर्ष पर पहुंचिये। अब आइये एक-एक करके अपने अति प्रिय अब्राहमिक अल्लाह के लक्षणों को जांचें।

क्रोध

क्या मेरा अल्लाह एक क्रुद्ध खुदा नहीं है? क्या आपका अल्लाह क्रोधित नहीं हो उठता है, जब कोई उसकी वो बातें नहीं मानता जो उसने अपनी पुस्तक के माध्यम से करने को कहा है? मैं इस पर तर्क नहीं करूंगा कि शादी से बाहर यौन संबंध बनाना सही है अथवा ग़लत, परंतु मैं यह तर्क अवश्यक करूंगा कि क्या लाखों-करोड़ों आकाशगंगाओं वाले करोड़ों-करोड़ तारा युक्त सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड रचने वाले अल्लाह के लिये यह सही है कि वह शादी से बाहर यौन संबंध बनाने वाले छोटे से प्राणी पर इतना क्रोधित हो जाये कि धरती पर पत्थर मार-मार कर किसी की हत्या कर देने जैसे सबसे बर्बर व हिंसक दंड को चुने तथा फिर मरने के बाद भी दोज़ख़ में आग में जलाये। कैसे कोई तर्क दे सकता है कि अल्लाह क्रोधित नहीं होता है? वैसे भी शादी से बाहर यौन संबंध बनाने में इतना भी ग़लत क्या है कि उसे इस प्रकार के बर्बर दंड के योग्य मान लिया जाये? एक पत्रक (काग़ज़) के टुकड़े से क्या अंतर पड़ता है कि इससे अल्लाह इतना अधिक क्रोधित अथवा अस्तव्यस्त हो जाता है? निस्संदेह जब दो व्यक्ति शादी से बाहर यौन संबंध बनाते हैं तो इसमें कुछ ग़लत नहीं है, इससे कोई ज्वालामुखी नहीं फूट पड़ती है, कोई भूकम्प नहीं आ जाता है कि धरती पर भवन हिल जायें, आसमान टूटकर नहीं गिरने लगता है। ये भूगर्भीय अथवा ब्रह्माण्डीय घटनाएं प्रलय लाने से पूर्व किसी का विवाह प्रमाण पत्र नहीं देखती हैं। ऊपर से कुरआन में एक प्रसिद्ध आयत है जो कहती है,

> मैं तुम्हें बताऊं क्या कि ऐसी बुरी बात क्या है जिसका दंड (बदला) अल्लाह के पास इससे भी बुरा है? वे हैं, जिन्हें

> अल्लाह ने धिक्कार दिया और उन पर उसका प्रकोप हुआ तथा उनमें से बंदर और सूअर बना दिये गये तथा जो तागूत (शैतान, इस्लाम विरोधी ताक़तों) को पूजने लगे। ऐसे ही लोगों का स्थान सबसे बुरा है तथा ये ही लोग सर्वाधिक ग़लत मार्ग पर हैं। (कुरआन 5:60)

अब स्पष्ट है कि अल्लाह यहूदियों पर क्रोधित है, क्योंकि उन्होंने मुहम्मद को पैग़म्बर के रूप में स्वीकार नहीं किया। अल्लाह को कुछ लाख यहूदियों (और जब मुहम्मद ने यह आयत पढ़ी होगी, तब तो कुछ सौ हज़ार यहूदी ही बचे रहे होंगे) में इतनी रुचि क्यों है कि वह क्रोधित हो उठता है और उनको अपने कोप की धमकी देने लगता है, जैसे कि वह डींगें हाकता है कि उसने यहूदियों की पिछली पीढ़ियों को सुअर व लंगूर बना दिया था? इन यहूदियों ने ऐसा क्या किया है जो इतना बुरा था? यहूदियों ने मुहम्मद को मदीना में उस समय शरण दी, जब वह मक्का से भागकर आया था। यहूदी धर्म और इस्लाम में मुख्य भेद यही है कि यहूदी मुहम्मद को पैग़म्बर नहीं मानते। मैं एक प्रश्न पूछना चाहूंगा कि यदि मैं मुहम्मद को पैग़म्बर नहीं मानता हूं तो इससे कौन प्रभावित होगा? स्पष्ट है कि इससे प्रभावित होने वाला मुहम्मद और उसकी विचारधारा होगी, क्योंकि इससे उसके पास अनुयायी कम होंगे और विरोधी अधिक होंगे। क्या यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा कि मुहम्मद ने अपनी विचारधारा को फैलाने के लिये यह आयत लिखी थी? यदि मुहम्मद ने यह आयत नहीं गढ़ी होती तो क्या तब मुहम्मद को अंतिम पैग़म्बर नहीं मानना इतना बुरा माना जाता? जब लोग किसी ऐसे राजनेता का अनुसरण करने लगते हैं जिन्हें हम नहीं मानते तो क्या हम उन्हें बुरा-भला कहने लगते हैं? ऐसे संसार की कल्पना कीजिये जहां हिलैरी क्लिंटन के समर्थक ट्रम्प समर्थकों की हत्याएं करना प्रारंभ कर दें अथवा एक ऐसी दुनिया की कल्पना कीजिये जहां इमरान ख़ान के समर्थक उन्हें हत्या की धमकी देने लगें जो उन्हें वोट न दे। निस्संदेह यह भयानक व भयभीत करने वाला विचार है और (ताबिलान व आईएसआईएस को छोड़कर) हममें से कोई भी ऐसे समाज में नहीं रहना चाहेगा, फिर भी लगभग सभी आधुनिक, उदारवादी मुसलमान 1400 वर्ष पूर्व के उन यहूदियों व ईसाइयों से अपेक्षा करते हैं कि वे उसी अलोकतांत्रिक दुनिया में जियें तथा वे उनके लिये दोज़ख़ की आग की कामना करते हैं। कुछ मुसलमान

कहते हैं कि मुहम्मद ने उन लोगों की हत्या नहीं की और उनकी हत्या का आदेश दिया जो उसमें विश्वास नहीं करते थे। आगे जब मैं मुहम्मद के बारे में बात करूंगा, तब मैं मुसलमानों के इस दावे का उत्तर दूंगा, क्योंकि यहां हमारे विमर्श का बिंदु केवल अल्लाह है।

स्त्रियों के प्रति घृणा

इस्लामी परंपराओं में आपको जो सबसे प्रसिद्ध शब्दाडंबर मिलेगा, वह यह है कि 'इस्लाम एकमात्र ऐसा मज़हब है जो औरतों को समानता प्रदान करता है।' मुसलमान मानते हैं कि जब एक अच्छा, पवित्र व्यक्ति मरता है तो वह जन्नत जाता है और वहां उसे 72 कुंवारी लड़कियां अर्थात हूरें मिलती हैं, किंतु जब एक अच्छी, पवित्र स्त्री की मृत्यु होती है और वह जन्नत जाती है तो उसे केवल उसका अपना शौहर ही मिलता है। मेरी साथी ने एक बार हंसी-हंसी में कहा (या कम से कम मैं आशा करता हूं कि उसने हंसी में कहा था) कि उसे प्रसन्नता है कि वह मुसलमान नहीं है, क्योंकि वो इस जीवन में तो मुझे झेल नहीं पा रही है, अनंत काल की तो बात ही छोड़ो।

यदि कोई व्यक्ति सोचने-समझने वाला होगा तो वह प्रश्न उठायेगा कि क्यों, जन्नत में भी, मर्दों के साथ विशेष व्यवहार किया जाता है- और थोड़ा-बहुत नहीं, अपितु उन्हें वहां 72 गुना अधिक मिलता है।

चूंकि सच तो यह है कि पुरुषों को भी कोई 72 हूर नहीं मिलने जा रही तो मैं इस प्रकरण को खींचूंगा नहीं, किंतु इस्लाम में स्त्रियों के अधिकारों को लेकर इससे भी अधिक समस्याएं हैं और इन समस्याओं का वास्तव में स्त्रियों पर प्रभाव पड़ता है। इस्लाम में मर्दों को औरतों का स्वामी घोषित किया गया है। यहूदी धर्म और ईसाई धर्म भी उतना ही भेदभावपूर्ण है, किंतु पश्चिम के लोगों ने उन आदिम मूल्यों से मुक्ति पा ली। हमें इसके लिये पश्चिम के उन आधुनिक धर्मनिरपेक्ष मानवों को धन्यवाद देना चाहिये जिन्होंने महिला अधिकारों की लड़ाई लड़ी और जीती। परिणामस्वरूप हमारे पास ऐसी महिलाएं हैं जो पुरुषों के साथ-साथ काम करती हैं, जहां उन्हें (कम से पहले से अधिक) समान रूप से महत्वपूर्ण मनुष्य के रूप में मान्यता दी जाती है और उन्हें दाल-रोटी के लिये पुरुषों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है। दुर्भाग्य से मुस्लिम देशों में हमें उतने धर्मनिरपेक्ष मानववादी नहीं मिले हैं जितने कि पश्चिम के देशों में हैं और इसका परिणाम यह है कि मुस्लिम देशों में महिलाएं अपने पुरुष समकक्षों की दास बनी रहती हैं। यद्यपि पश्चिमी देशों की तुलना में

मुस्लिम देशों की महिलाओं की स्थिति अत्यंत बुरी है, पर मुझे विश्वास है कि यह स्थिति परिवर्तित हो रही है और जैसे-जैसे शिक्षा मज़हबी अंधविश्वास व रूढ़ियों का स्थान लेगी, यह स्थिति और अच्छी होती जायेगी।

मैं समझ सकता हूं कि क्यों एक आदमी को मुसलमान होना अच्छा लगता है। मैं चार बीवियां रख सकता हूं जो मेरी आज्ञा का पालन करेंगी, मुझे बिना किसी आपत्ति के भोजन परोसा जायेगा और मेरे साथ एक सुल्तान के जैसा व्यवहार होगा। दूसरी ओर औरतों को अपने शौहरों की आज्ञा का पालन करना है, उसे यह सुनिश्चित करना है कि शौहर कभी कुपित न हो, औरतें मर्दों से कम बुद्धिमान भी मानी जाती हैं और यदि वे अपनी सीमा लांघती हैं तो उनकी पिटाई की जाती है। औरत होते हुए इस्लाम से जुड़ने होने की इच्छा रखना या उसका समर्थन करना वैसे ही है, जैसे कि किसी काले व्यक्ति का गोरे श्रेष्ठतावादी समूह से जुड़ना या उसका समर्थन करना। काले व्यक्ति गोरे श्रेष्ठतावादी समूह से नहीं जुड़ते हैं तो इसका कारण यह है कि वह विचारधारा मानव के रूप में उनके अधिकारों के विरुद्ध है और औरतों को इस्लाम का समर्थन या उससे जुड़ना नहीं चाहिये, क्योंकि यह उनके मूल मानव अधिकारों के विरोध में है।

आइये कुरआन की इन आयतों में कुछ से प्रारंभ करें:

आदमी औरतों का संरक्षक और देखरेख करने वाले हैं, क्योंकि अल्लाह ने उनमें से एक को दूसरे पर प्रधानता दी है तथा क्योंकि वे (उन पर) अपना कमाया हुआ धन व्यय करते हैं। अत:, सदाचारी औरतें वो हैं, जो अल्लाह और अपने शौहरों के प्रति आज्ञाकारी हैं तथा उनकी (शौहरों की) अनुपस्थिति में उसकी (अपनी) पवित्रता, अपने शौहर की संपत्ति की रक्षा करती हैं, जिसकी रक्षा के लिये अल्लाह ने आदेश दिया है। फिर तुम्हें जिन औरतों की अवज्ञा का भय हो, तो (पहले) उनकी भर्त्सना करो, (इसके पश्चात) उनके साथ बिस्तर साझा करने से मना कर दो और (अंत में) उनकी पिटाई करो। किंतु यदि वे तुम्हारी बात मानना पुन: प्रारंभ कर दें तो उन पर खीझ निकालने का बहाना न ढूंढ़ो। निश्चित ही अल्लाह सबसे ऊपर, सबसे महान है।

- सूरा अन-निसा (औरत, (4:34)

तुम्हारी बीवियां तुम्हारे लिए खेत जैसे हैं। तुम्हें अनुमति है कि जब चाहो और जैसे चाहो, अपने खेत में जाओ, जुताई करो। (2:223)

मुसलमान कहते हैं कि इस्लाम पूर्णत: शाश्वत है और जब तक संसार का अंत नहीं हो जाता यह रहेगा। हमारे संसार में महिलाओं ने कर दिखाया है कि कैसे पुरुष की सहायता के बिना वो स्वतंत्र रूप से जी सकती हैं। तो या तो अल्लाह ने अपनी आयत में झूठ बोला है अथवा पिछले 1400 वर्षों में महिलाएं इतनी बुद्धिमान हो गयी हैं और अल्लाह इसका अनुमान ही नहीं लगा सका। ध्यान दीजिये कि किस प्रकार आयत का दूसरा भाग अल्लाह और शौहरों के प्रति आज्ञाकारी होने पर बल देता है। कोई ऐसी आयत कहां है जिसमें बीवियों के प्रति आज्ञाकारी होने को कहा गया हो? मुझे तो ऐसी कोई आयत नहीं मिली। संभवत: इसलिये ऐसी आयत नहीं है, क्योंकि अल्लाह सोच ही नहीं पाया कि 21वीं सदी में औरतें समान व्यवहार की मांग करेंगी। उदारता भी दिखायी तो कैसी, तनिक सोचिये कि यह आयत आदमी को निर्देश देती है कि यदि बीवी आज्ञा न माने तो वह पहले उसे कर्तव्यों अर्थात झाड़ू-पोंछा करने, भोजन बनाने और शौहर की यौन इच्छाओं की पूर्ति की चेतावनी दे। यदि बीवी ये सब करने से मना करे तो उसके साथ सोने से मना कर दे। (वैसे कुछ औरतों के लिये तो साथ सोने से मना करना दंड से अधिक कृपा होगी।) किंतु यदि बीवी पहले ही शौहर के साथ संभोग करने से मना कर रही है और वह उसका बलात्कार करने में असमर्थ है तो उसको पीटने का तीसरा क़दम उठाया जा सकता है। कुछ मुसलमान कहते हैं कि आदमी को कहा गया है कि वह अपनी बीवी को हल्के से पीटे। हल्का सा पीटना क्या होता है? क्या इसका अर्थ मुक्का मारने के स्थान पर चांटा मारना है, अथवा गला घोंटने के स्थान पर लात से मारना है? कुछ विद्वान कहते हैं कि पीटने का अर्थ है मिसवाक से पीटें। मिसवाक एक छोटी डंडी जैसी होती है जिसे पुराने समय के अरबी दातुन के रूप में प्रयोग करते थे। यद्यपि इन विद्वानों की बात पर विश्वास करने का कोई कारण नहीं है, फिर भी यदि हम उनकी बात सही भी मान लें तो अपनी बीवी को छोटी डंडी से भी पीटना आज नीचा दिख़ाने, अपमानित करने जैसा है और यह प्रथा सम्मानयोग्य नहीं है।

कुरआन में ये शब्द इतने स्पष्ट हैं कि इस्लाम में कुछ औरतें वास्तव में मानती हैं कि अपने स्वामी द्वारा पीटा जाना ठीक है। मेरा एक बार पाकिस्तान की एक लड़की हादिया से संवाद हुआ। हादिया कॉलेज से पढ़ी हुई शिक्षित युवा महिला थी।

उसने मुझे बताया कि अल्लाह ने उसके पिता या शौहर को उसके प्रति जवाबदेह बनाया है, इसलिये यदि वह सीमा लांघती है और उन लोगों को जो ठीक नहीं लगता उसे करती है तो उनके पास उसे ठीक करने का पूरा अधिकार है। मन-मस्तिष्क में मज़हबी कचरा भर देने से स्वाभिमान व गरिमा चली जाती है।

यह सीधा-सीधा स्टॉकहोम सिंड्रोम है।

दूसरी आयत नितांत स्पष्ट है और मैं इस पर उतना तर्क नहीं करूंगा। अधिकांश मुसलमान इस आयत को जानते हैं और इसे प्रकट नहीं करना चाहते हैं। यह आयत कहती है कि जब और जैसे चाहें अर्थात किसी भी स्टाइल, पोजीशन या दिन के किसी भी समय आप अपनी बीवी का उपयोग कर सकते हैं। खेती शब्द का शाब्दिक अर्थ है भूमि की जुताई। मूलत: औरतें जोते गये खेत के जैसी हैं जिसे आप बच्चा जनने की मशीन के रूप में उपयोग में ले सकते हैं, वैसे ही जैसे कि हम उपज लेने के लिये भूमि का उपयोग करते हैं। आप ऐसा कैसे करते हैं? हां, यह पूर्णत: आप पर निर्भर है। सीधे शब्दों में कहें तो यदि वह आपके साथ संभोग नहीं करना चाहती है तो आप उसका बलात्कार कर सकते हैं या आप अपनी बीवी का उपयोग अपनी इच्छानुसार जब चाहें करने के लिये अधिकृत हैं।

मैं तो ऐसी दुनिया में एक दिन के लिये भी औरत होने की कल्पना नहीं कर सकता जहां प्रत्येक व्यक्ति इस निर्देश को मानता हो। सौभाग्य से अधिकांश मुसलमान इस्लामी दृष्टि से बुरे मुसलमान हैं जो उन्हें अच्छा मनुष्य बना देती है और ऐसे मुसलमान इन आयतों को गंभीरता से नहीं लेते हैं। मैं जिन मुसलमानों को जानता हूं उनमें से अधिकांश अपनी बीवी का बलात्कार नहीं करते हैं, न ही वे औरतों को बच्चा जनने के लिये तैयार जुती हुई भूमि के रूप में देखते हैं। हम सैकड़ों प्रत्याशियों में से यथासंभव सर्वोत्तम न्यायाधीश अथवा प्रधानमंत्री चुनते हैं। ये लोग अपने पद पर विराजने से पहले कठिन प्रशिक्षण व चयन प्रक्रिया से होकर आते हैं, किंतु अल्लाह ने कितनी सरलता से एक साधारण से व्यक्ति को दूसरे मनुष्य का स्वामी बना दिया। औरत चाहे कितनी भी बुद्धिमान क्यों न हो, वह आदमी की स्वामी या उसके बराबर कभी नहीं होगी और आदमी चाहे कितना भी मूर्ख हो वह अपने घर में सदैव औरत का मालिक होगा।

क्या होता यदि हम सैकड़ों प्रत्याशियों में सबसे बुरा न्यायाधीश चुन लेते?

निश्चित रूप से ये अक्षम लोग अपनी भूमिका का निर्वहन करने में सक्षम नहीं होते। मैं अब इस विचार की समीक्षा एक ऐसी स्थिति में करूंगा जिसमें एक औरत की शादी एक विक्षिप्त व्यक्ति के साथ होती है। इस्लामिक सिद्धांतों के अनुसार वह विक्षिप्त व्यक्ति उस औरत का स्वामी है भले ही वह औरत कितनी भी बुद्धिमान हो, पर वह उस व्यक्ति पर आगे नहीं जा सकती और लगभग उन सभी बातों पर उस औरत की पिटाई होगी जिन पर वह उस व्यक्ति से असहमत होती है। कुछ मुसलमान कहते हैं कि वह औरत तलाक़ मांग सकती है।

यह कथन अपने आप में हास्यास्पद है कि उसे तलाक़ मांग लेना चाहिये। हां, सच यही है कि एक औरत होते हुए आप किसी आदमी को तलाक़ नहीं दे सकती है या आपको वास्तव में तलाक़ मांगना पड़ता है और दूसरे शब्दों में कहें तो तलाक़ की भीख मांगनी पड़ती है। यदि आदमी किसी नस्लभेदी राजनीतिक दल से जुड़ना चाहता है तो उसकी औरत को उसके निर्णय से सहमत होना ही पड़ेगा, अन्यथा वह औरत एक अवज्ञाकारी बीवी मानी जायेगी और उसे मारपीट का शिकार बनना होगा। अब कुछ मुसलमान सोचेंगे कि मैं अतिशय पूर्वाग्रह से ग्रस्त हो रहा हूं, क्योंकि किसी औरत को ऐसे आदमी को सहन नहीं करना है जो अल्लाह के निर्देशों का पालन नहीं करता है। यद्यपि कुछ आदेश जैसे कि बीवी के बलात्कार की अनुमति देना, किसी मनुष्य को बुरा कहे जाने के लिये बहुत पर्याप्त हैं, पर वह व्यवस्था कहां है जो किसी औरत को अपने हत्यारे शौहर से मुक्त कराये? मैं तो कल्पना करने से भी भयभीत हो जाता हूं कि किसी औरत के लिये काजी (न्यायाधीश) के पास जाकर यह बताना कितना कठिन होता होगा कि उसका शौहर किसी की हत्या करने की मंशा रख रहा है। चूंकि उसकी गवाही उस आदमी अर्थात शौहर की गवाही की आधी होगी तो उसे वापस घर जाना होगा और वहां अपने हिंसक शौहर के क्रोध का सामना करना पड़ेगा। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि अधिकांश मुसलमान ऐसे ही होते हैं। जैसा कि मैंने पहले कहा था कि अधिकांश मुसलमान बुरे मुसलमान होते हैं, इसलिये वे अक्षरशः इस्लामी शिक्षाओं का पालन नहीं करते हैं, अपितु वे जानबूझकर इन भयानक आयतों की उपेक्षा कर देते हैं और ऐसा बहाना करते हैं कि जैसे कि वे आयतें हैं ही नहीं। यदि प्रत्येक मुसलमान इन आयतों को अपने व्यक्तिगत जीवन में शब्दशः उतारता तो प्रत्येक मुसलमान परिवार में उपरोक्त दृश्य नित्य दिखते।

सभी प्रकार की समस्याएं आदमी को औरत का मालिक बनाये जाने से उत्पन्न होती हैं। जैसे कि अनजाने व्यक्ति से औरत की शादी होती है और वह अपनी ही शादी के संबंध में कुछ नहीं बोल सकती, क्योंकि शादी से पहले उसका बाप उसका मालिक है। यदि वह व्यक्ति अपनी बेटी की शादी किसी मनोरोगी से करने का निर्णय करता है तो बेटी को या तो चुपचाप इस संबंध पर सहमत हो जाना चाहिये अथवा तब तक पिटने के लिये तैयार रहना चाहिये जब तक कि उस शादी के लिये वह हां न बोल दे। यह सही है कि हदीसों में संकेत है कि शादी से पूर्व लड़की की सहमति होनी चाहिये, पर यह निश्चित ही आदमी को औरत के स्वामी होने के विचार का विरोधाभासी है और चूंकि हदीसों पर कुरआन की वरीयता होती है तो सच्चे मुसलमान के रूप में आपको इन आयतों को मानना पड़ेगा। यदि कोई व्यक्ति किसी अपराध का दोषी पाया जाता है तो वह न तो कोई महत्वपूर्ण पद यथा न्यायाधीश, पुलिस अधिकारी, अध्यापक आदि धारण कर सकता है और न ही उसे करना चाहिये, किंतु किसी अपराध का दोषी पाये जाने के बाद भी औरत का मालिक होने की उसकी स्थिति कभी नहीं छिनती। इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि उसने कितने काफ़िरों की हत्या की है और वह अपराधी होने के बाद भी औरत का मालिक होने की स्थिति धारण करता है। निश्चित रूप से इस्लाम हत्यारों को जीने की अनुमति नहीं देता है, क्योंकि हत्या के अपराध का दंड सिर कलम किया जाना है, परंतु छोटे अपराध जैसे उत्कोच (रिश्वत) लेना या चोरी करना आदि अपराधों का क्या?

दंड भोगकर एक हाथ गंवाने (इस्लाम में चोरी का दंड) के बाद वह अपनी बीवी के पास वापस आता है और अपनी बीवी के मालिक होने की स्थिति को पुन: प्राप्त कर लेता है। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि क्यों मुहम्मद कुछ इस प्रकार नहीं लिख सका:

अल्लाह ने आदमी और औरत दोनों को समान बनाया है और दोनों को अपने मतभेदों को बातचीत से सुलझाना चाहिये। जब मतभेद असहनीय हो जाये तो उन्हें एक-दूसरे से पृथक हो जाना चाहिये। निस्संदेह अल्लाह न्यायप्रिय व अति दयावान है।

महिलाओं के साथ भेदभाव यहीं नहीं रुकता है। इस्लाम में आदमी को एक साथ चार बीवियां रखने की अनुमति है, किंतु औरत को एक से अधिक शौहर

रखने की अनुमति नहीं है। इसके पीछे भिन्न-भिन्न प्रकार के तर्क दिये जाते हैं, पर सबसे रोचक तर्क जो मैंने सुना वह भारत के डॉ जाकिर नाइक ने दिया था। डॉ नायक को अपने अनुयायी मुसलमानों का बड़ा समर्थन मिलता है और वह अपने व्याख्यानों में जो भी कहता है, उस पर ये मुसलमान अनुयायी उन्मत होकर तालियां पीटते हैं। उसके एक यूट्यूब वीडियो में एक युवा हिंदू लड़की ने डॉ नाइक से पूछा कि आदमियों को चार बीवियां रखने की अनुमति क्यों है। मैंने डॉ नाइक के बारे में हाल ही में जाना था तो मैं उसका उत्तर सुनने को उत्सुक था, यद्यपि मुझे उसके उत्तर से किसी विशेष तर्क की आशा नहीं थी। नाइक ने दावा किया कि अल्लाह जानता था कि दुनिया में औरतों की संख्या आदमियों से अधिक होगी। आगे नाइक पूछने लगा कि ये 'अतिरिक्त औरतें' क्या करतीं, क्या वे सार्वजनिक संपत्ति हो जाती अर्थात उसका आशय था कि क्या ये औरतें वेश्या हो जातीं। उसका उत्तर सुनकर मुझे खीझ होने लगी, क्योंकि वह शादीशुदा, 'नॉन एक्सेस' औरतों को अपने शौहरों की 'निजी संपत्ति' के रूप में इंगित कर रहा था। क्या पूरे संसार में किसी महिला को अपमानित करने के लिये आपको इससे अच्छा कोई शब्द मिल सकता है? डॉ नाइक की दृष्टि में औरत केवल संपत्ति है, सार्वजनिक हो या निजी और यही वास्तव में इस्लामिक विचारधारा कहती है। उसने अपने दावे की पुष्टि के लिये संदर्भ भी दिये और कहने लगा कि जर्मनी, फ़्रांस और ब्रिटेन में महिला जनसंख्या पुरुष जनसंख्या से अधिक है। पूरी भीड़ तालियां पीटने लगी और वह अबला हिंदू लड़की चुप होकर बैठ गयी। कुछ ने अफ़वाह उड़ाई कि उस लड़की ने डॉ. नाइक की बुद्धिमत्ता से प्रभावित होकर बाद में इस्लाम स्वीकार कर लिया, वैसे मुझे उस लड़की के धर्मांतरण की बात पर विश्वास नहीं है।

चूंकि मैंने उसको तुरंत सुना ही था तो मुझे नहीं लगा कि उसने जो संदर्भ दिया है वे वास्तव में कोरे झूठ होंगे, परंतु उसकी बातों पर मुझे संदेह तो था तो मैंने उसकी सच्चाई जानने का प्रयास किया।

सीआईए के अनुसार: विश्व फैक्टबुक, जर्मनी में जन्म के समय प्रति महिला 1.06 पुरुष हैं, जबकि 64 वर्ष की अवस्था में प्रति महिला 1.02 पुरुष हैं। फ़्रांस में जन्म के समय प्रति महिला 1.05 पुरुष हैं, जबकि 64 वर्ष की अवस्था में प्रति महिला 1 पुरुष हैं। ब्रिटेन में जन्म के समय प्रति महिला 1.05 पुरुष हैं, जबकि 64 वर्ष की अवस्था में प्रति महिला 1.02 पुरुष हैं। 64 वर्ष की अवस्था के बाद ही

वह स्थिति आती है जब महिला अनुपात बढ़ता है और इसका एकमात्र कारण यह है कि पुरुष उतना अधिक नहीं जीते हैं। यद्यपि मुझे नहीं लगता था कि डॉ नाइक सैकड़ों लोगों के सामने झूठ बोलेगा, पर मुझे आश्चर्य हुआ कि उसने सीधे-सीधे ऐसा दावा किया जो कि स्पष्टतया झूठा था। जो मुसलमान चार बीवियां रखने के लिये इस तर्क का प्रयोग करते हैं, वे वास्तव में उन दिनों की सोचकर यह दावा करते हैं जबकि बड़ी संख्या में आदमी जंगों में मारे जाते थे जिससे उनकी तुलना में औरतों की संख्या अधिक हो जाती थी।

पहला बिंदु: इतिहास में किसी समय का कोई ऐसा आंकड़ा नहीं मिलता है जब पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या चार गुनी थी। इसकी पुष्टि करना अत्यंत सरल है, क्योंकि हमें प्राचीन नगरों के अनेक पुरातात्विक स्थल मिल चुके हैं और हमने वहां कभी महिलाओं की संख्या पुरुषों की तुलना में अधिक नहीं पायी है।

दूसरा बिंदु: भले ही हम इस विचार पर चलें कि प्राचीन काल में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक होती थी (ध्यान रखें, हम पद्धति बी का प्रयोग कर रहे हैं), तो आज के विश्व में स्पष्ट रूप से ऐसा नहीं है। इसका अर्थ यह होगा कि **चार शादी का नियम केवल प्राचीन अरब में लागू होता था, न कि आधुनिक विश्व में। क्या मुसलमान विद्वानों में इतना साहस है कि वे इस परंपरा और बहुविवाह के लाइसेंस को समाप्त कर सकें, क्योंकि अब उतनी अधिक संख्या में महिलाएं नहीं हैं, जितनी संख्या पहले हुआ करती थी? मुझे लगता नहीं कि मुसलमान ऐसा कर पाने का साहस करेंगे। यह ये भी सिद्ध करता है कि अल्लाह उतना दूरदर्शी नहीं है, क्योंकि वह निश्चित ही नहीं जानता था कि ऐसा भी एक समय आयेगा जब महिलाएं संख्या में पुरुषों से अधिक नहीं होंगी। यह एक और प्रमाण है कि किस प्रकार ये सब सातवीं सदी के एक अरबी व्यक्ति के शब्द थे, न कि अरबों आकाशगंगाओं के रचयिता के।** मुझे विश्वास नहीं है कि वे कभी अपने इस विचार में परिवर्तन करेंगे, क्योंकि बहुविवाह का कारण यह नहीं है कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या अधिक है, अपितु इसका कारण यह है कि यह व्यवस्था पुरुषों को प्रसन्न रखने के लिये बनायी गयी है। मृत्यु के बाद जन्नत और कुंवारी लड़कियां मिलने जैसे काल्पनिक पुरस्कार के

लालच से अच्छा लालच और क्या हो सकता है? वास्तविक संसार में वास्तविक स्त्रियां। आधुनिक समाज में इसके लिये कोई स्थान नहीं होना चाहिये कि किसी स्त्री को किसी ऐसी घृणित स्थिति में रहने के लिये विवश किया जाये कि वह दूसरे कक्ष में अपने शौहर को किसी और औरत के साथ शारीरिक संबंध बनाते हुए सुनती रहे। मुसलमान जितना शीघ्र यह समझ जायेंगे, उतनी ही तेज़ी से वे हमारे साथ आधुनिक विश्व में आगे बढ़ेंगे।

यदि वह अफ़वाह सही है तो मैं सोचता हूं कि क्या उस हिंदू लड़की ने डॉ जाकिर नाइक की बुद्धिमत्ता के प्रभाव में आने से पहले इंटरनेट पर दो मिनट का रिसर्च किया अथवा वहां ताली पीट रहे लोगों में से किसी ने भी वास्तव में स्वयं उत्तर ढूंढ़ने का प्रयास किया। मुझे आशा है कि उन्होंने अवश्य रिसर्च किया होगा और अपने तार्किक चिंतन का प्रयोग किया होगा, यद्यपि मुझे यह भी लगता है कि मैं आवश्यकता से अधिक आशावान हो रहा हूं।

मुसलमान पक्षधर चार बीवियां रखने के पक्ष में जो एक और कारण गिनाते हैं, वह यह है कि आदमी गर्भ धारण नहीं कर सकता है, पर औरतें कर सकती हैं। यदि एक औरत के कई आदमी होंगे तो बच्चे को पता कैसे चलेगा कि उसका बाप कौन है? हां, यह हंसने योग्य है। क्यों न एक ही शौहर और एक ही बीवी को रखा जाये और धरती को नष्ट करने वाली इस दुविधा को समाप्त कर दिया जाये? इसके अतिरिक्त आजकल तो हम डीएनए परीक्षण कराकर पता लगा सकते हैं कि बाप कौन है। यह पुनः दर्शाता है कि इस अल्लाह को कुछ पता ही नहीं था कि एक दिन डीएनए परीक्षण जैसी विश्वसनीय तकनीक आयेगी। क्या अरबों आकाशगंगाओं की रचना करने वाले का लक्षण ऐसा होता है? **यह एक और प्रमाण है कि किस प्रकार इस्लाम सभी कालों के सभी लोगों के लिये नहीं है।**

पाकिस्तानी क़ानून कहता है कि आदमी को दूसरी, तीसरी या चौथी शादी करने के लिये अपनी बीवी की लिखित अनुमति लेनी होगी। चूंकि पाकिस्तान में इतना भ्रष्टाचार है कि मुझे संदेह होता है यह क़ानून कभी क्रियान्वित हुआ होगा। सऊदी अरब और ईरान जैसे अन्य इस्लामी देशों में स्थिति और भी भयावह है, क्योंकि वहां किसी आदमी को दूसरी औरतों से शादी करने के लिये बीवी की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती। वह सीधे दूसरी औरत को घर ले आता है और सभी बीवियों को एक साथ 'मिलजुल कर' रहने को कहता है।

मुसलमान तर्क देते हैं कि यद्यपि अल्लाह ने आदमियों को सुविधा प्रदान की है, किंतु यह सुविधा कठोर शर्तों के साथ मिली है। इन शर्तों में से एक है कि आदमी सभी बीवियों से समान व्यवहार करेगा, जिसका अर्थ हुआ कि यदि आप एक बीवी के लिये कोई फल क्रय करते हैं तो दूसरी बीवियों के लिये वह फल लीजिये और आप किसी अन्य बीबियों की तुलना में किसी एक बीवी के साथ अधिक नहीं सो सकते हैं। ऐसा है, भले ही मुहम्मद ने अपनी लंबी और मोटी-तगड़ी अफ़्रीक़ी बीवी साऊदा के साथ सोना बंद कर दिया था, क्योंकि वह उसे बहुत आकर्षक नहीं लगती थी, पर चलिये यह बात छोड़ देते हैं। मैं सोचता हूं कि समान व्यवहार का अर्थ है कि यदि आप अवज्ञा के लिये एक बीवी को पीटते हैं तो अन्य तीनों बीवियों को भी उतना ही पीटना चाहिये।

इस्लामाबाद के औरत फाउंडेशन के अनुसार 2009 में अकेले पाकिस्तान में घरेलू हिंसा के 8,458 प्रकरण सामने आये और जिनमें से 1,384 हत्या, 928 बलात्कार, 683 आत्महत्या और 604 ऑनरकिलिंग के प्रकरण थे।

आप अवश्य सोच रहे होंगे, '18 करोड़ लोगों वाले देश के लिये यह संख्या उतनी बुरी नहीं है।' विशेषज्ञ मानते हैं कि इन अपराधों की वास्तविक संख्या इससे 20 गुना अधिक है, क्योंकि सामाजिक कलंक के भय से अधिकांश प्रकरणों की रिपोर्ट ही नहीं की जाती है।

हां, कुरआन 'कहीं भी नहीं' कहती है कि औरतों का बलात्कार करो (जब तक कि वह औरत आपकी बीवी या सैक्स स्लेव (यौन-दासी) न हो) या औरतों की हत्या करो, परंतु क्या यह कहना ग़लत होगा कि ऑनर किलिंग की मानसिकता इस्लाम की सामान्यत: पितृसत्तात्मक सिद्धांत के कारण जन्म लेती है? यदि औरतों को आदमियों की दासी बनकर रहने को विवश न किया गया होता तो क्या हम अभी भी ऑनरकिलिंग जैसे अपराध का अस्तित्व पाते? मुझे लगता है कि तब ऑनरकिलिंग जैसा अपराध नहीं होता, क्योंकि पश्चिमी समाज (जहां महिला द्वारा अपना पति चुनने को कलंक नहीं समझा जाता है), में ऑनर किलिंग शून्य है। हां, पश्चिम में महिलाओं की हत्या होती है, किंतु क्या उन हत्याओं को राज्य या उसकी विचारधारा का समर्थन होता है? निश्चित रूप से नहीं।

मुसलमान पक्षधर लोग औरतों को अलग-थलग रखने का बचाव करते हैं और सऊदी अरब से तुलना करते हुए अमरीका जैसे देशों में बलात्कार दर का

संदर्भ देते हैं। मैं इस तर्क को अस्वीकार करता हूं और ध्यान दिलाता हूं कि शरिया क़ानून में किसी को बलात्कार का दोषी ठहराने के लिये चार पुरुषों की गवाही आवश्यक होती है, अन्यथा इसे वैवाहिक-संबंध में यौन संबंध बनाना माना जाता है। यह बताना कठिन नहीं है कि मुस्लिम देशों में बलात्कार की अधिकांश पीड़िताएं अपराध की रिपोर्ट नहीं करती हैं, क्योंकि उनके साथ बलात्कार तो हो ही चुका है और उन्हीं को दोषी ठहराकर पत्थर मार-मार कर उनकी हत्या भी हो सकती है।

अंततः मैं इस्लाम में औरत को ढंककर रखने की प्रथा पर विमर्श करूंगा। इस्लामी पक्षकार कहते हैं कि यदि औरतों को बाल ढंककर रहने (अथवा वहाबी विचारधारा के अनुसार पूरा मुख ढंककर रखने) को विवश न किया जाये तो आदमियों के लिये स्वयं को वश में रख पाना कठिन होगा और इसके परिणामस्वरूप बलात्कार की घटनाएं बढ़ेंगी। निश्चित रूप से सभी अब्राहमिक मज़हब यौनिकता (सैक्स) को अधम व घृणित कार्य मानते हैं, अतः यह सर्वोत्तम उपाय है कि हम औरतों के साथ यौनसुख के अवसर को कम करने के लिये उन्हें ढंककर रखें और दूसरे आदमियों की दृष्टि से उन्हें छिपाकर रखें। यह जीवन जीने की एक भयानक शैली है।

कल्पना कीजिये कि आप एक कार क्रय करते हैं और इसे कवर से ढंककर चलाते हैं, क्योंकि आप नहीं चाहते कि चोर जानें यह एक मर्सिडीज है, न कि कीया। पर हम कार को ढंककर नहीं चलाते हैं, अपितु हम यह सुनिश्चित करते हैं कि हमारे पास संपत्ति की रक्षा के लिये क़ानून हो और हम कार चोरी के जोखिम को कम करने के लिये जाम करने वाले यंत्र इमोबिलाइज़र व कार अलार्म लगवा लेते हैं।

इस इस्लामी तर्क को मानें तो किसी को धन भी नहीं कमाना चाहिये क्योंकि दूसरे लोगों को इसका पता लग जायेगा और वे आपको लूट लेना चाहेंगे। भय किसी व्यक्ति पर प्रभावी नहीं होना चाहिये, क्योंकि मानव समाज की सभी प्रगति भय पर विजय प्राप्त करने के बाद ही मिली है। फिर मुसलमान बलात्कार के भय से महिलाओं के ऊपर बोरा डालकर उन्हें स्वतंत्रता से रहने के स्वप्न से वंचित रखने की अनुमति क्यों देते हैं? हां, दुर्भाग्य से बलात्कार तो अभी भी हो रहे हैं, पर औरत को ढंककर रखना बलात्कार रोकने की गारंटी नहीं है। यह अपराध बलात्कारी को दंड देने से ही रुकेगा। वे ऐसा विधान क्यों नहीं बनाते जो महिलाओं

के अधिकारों की रक्षा करे और जो महिलाओं का बलात्कार करते हैं उनको कठोर दंड दे, वैसे ही जैसे कि हमने अपनी कार चुराने वाले चोरों के लिये दंड की व्यवस्था की है? पर ऐसा करने के स्थान पर इस्लाम वास्तव में आदमी के लिये ऐसी सुविधाजनक स्थिति प्रदान करता है कि वह किसी औरत का बलात्कार करे और बच भी जाये।

> ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं जो बताते हैं कि हमारे आसपास समलिंगी सदा रहे हैं, तो क्यों नहीं हम सभी आदमियों को ढंककर रखते हैं, क्योंकि किसी सुंदर आदमी को देखकर समलिंगी की कामुक भावना जाग उठेगी और वह उस सुंदर आदमी का बलात्कार कर देगा। यह तर्क त्रुटिपूर्ण है कि औरत की तुलना में आदमी बलात्कारियों से निपटने में अधिक सक्षम होता है, क्योंकि सभी आदमी एक समान बलवान नहीं होते हैं। हो सकता है कि कोई समलिंगी उस आदमी से अधिक बलवान हो जिसका वह बलात्कार करता है। विडम्बना यह है कि हाल ही में मुस्लिम विद्वान मुरात बयरल ने कहा कि आदमियों को दाढ़ी रखनी चाहिये, क्योंकि यदि उनके पास दाढ़ी नहीं होगी तो बदमाश आदमी उनका बलात्कार करने की इच्छा रखेंगे।[75]

अल्लाह यौनिकता से इतनी घृणा क्यों करता है- अथवा कम से कम तब वह क्यों इतनी घृणा करता है जब शादी से बाहर यौन-संबंध बनाया जाये? किसी मज़हबी पुस्तक में ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि आदम और हौव्वा की भी शादी हुई थी। यदि अल्लाह को यौनिकता से इतनी घृणा है तो उसने अधिकांश प्राणियों में यौन संबंध के माध्यम से प्रजनन की व्यवस्था क्यों की? दो लोग या लोगों के समूह एकांत में क्या करते हैं, इससे किसी को क्या लेना-देना?

पाकिस्तान में औरत को सैक्स करने की स्वतंत्रता का समर्थन इसलिये नहीं किया जाता, क्योंकि इससे आदमी को अपने दासों से नियंत्रण हटने का ख़तरा लगता है। यदि औरत स्वतंत्र है और किसी व्यक्ति से मिलती है तथा उसके साथ संभोग करती है तो उसका बाप इसका विरोध करेगा, क्योंकि यह उस औरत का आदमी चुनने के पिता के अधिकारों को चुनौती देता है। मुझे स्मरण होता है कि जब मैं 15 वर्ष का था तो मैंने एक मित्र से पूछा कि क्यों हम यह तो चाहते हैं

कि किसी लड़की के साथ यौनसुख लें, पर यह नहीं चाहते कि हमारी बहनों के साथ कोई यौनसुख ले? उसने बस इतना कहा कि ऐसा ही है। हम ऐसी मानसिकता वाले व्यक्तियों को बेग़ैरत (निर्लज्ज) कहते हैं, क्योंकि उनकी दृष्टि में दूसरों के साथ यौनसुख लेना ठीक है, परंतु हम दूसरों को अपनी बहन या बेटी के साथ यौन सम्बंध बनाने की अनुमति नहीं देंगे।

ऐसे लोगों को पाखंडी कहना चाहिये, पर दुर्भाग्य से हम उन्हें ग़ैरतमंद (सम्माननीय) कहते हैं। जैसे-जैसे मैं बड़ा हुआ और पाखंड शब्द का अर्थ समझ में आने लगा तो इस मत पर पहुंचा कि यदि मैं शादी से बाहर किसी से शारीरिक संबंध बनाता हूं तो कुछ ग़लत नहीं है और मेरी बहन को जो अच्छा लगे उसके साथ वह संबंध बनाये तो उसमें भी कुछ ग़लत नहीं है, चाहे शादीशुदा हो या नहीं। महिलाओं के साथ पुरुषों का अनुचित व्यवहार यहीं समाप्त नहीं होता है। रुकिये, और भी है! यह तो इस्लाम में महिलाओं की यौनिक मुक्ति के विषय में था। मुस्लिम महिलाओं के अन्य 'अधिकारों' का क्या? आइये महिलाओं के प्रति द्वेष रखने वाली कुछ और कुरआनी आयतों को देखते हैं।

> आदमी का भाग, दो औरतों के भाग के बराबर है। (4:11)

अत: यदि आपके एक बेटा और एक बेटी हैं और आप मर जायें तो बेटे को आपकी संपत्ति का दो भाग मिलेगा और बेटी को केवल एक भाग। ये भयानक आयत उन अन्य स्थितियों में भी प्रभावी रहती है जहां सदा औरतों की बड़ी हानि होती है। मुस्लिम पक्षकारों द्वारा इस अनुचित व्यवहार के बचाव में अनेक बातें कही गयी हैं। इनमें से एक यह है कि आदमी (बेटा) अपने परिवार का मुखिया होता है और उसे परिवार की देखभाल करनी होती है, इसलिये वह बड़ा भाग प्राप्त करता है। दूसरी ओर एक औरत (बेटी) अपने शौहर का उत्तरदायित्व है और वह अपने पक्ष से विरासत का बड़ा भाग ला सकता है। मैं यह निर्णय आप पर छोड़ता हूं कि इस्लाम द्वारा संरक्षित इस भेदभावपूर्ण व्यवहार का औचित्य ठीक है या नहीं।

महिला की बुद्धिमत्ता का क्या? आइये इस आयत को देखें:

> और दो आदमी (पुरुष गवाह) न हों तो जिनको तुम साक्षी (गवाह) चुनों उनमें से एक आदमी तथा दो औरतों को साक्षी बनाओ जिससे कि दोनों औरतों में से एक यदि भूल करे तो दूसरी उसको टोके। (कुरआन 2: 282)

यह आयत पूर्णतया मुहम्मद के इस उद्धरण से मेल खाती है:

रसूल ने कहा, 'एक औरत का साक्ष्य (गवाही) आदमी की गवाही की आधी होती है, है न? औरत ने कहा, 'हां।'

> रसूल ने कहा, 'ऐसा इस कारण है क्योंकि औरत के पास बुद्धि कम होती है।' (बुख़ारी, अंक 3, पुस्तक 48, संख्या 826)

मूलत: यह बताता है कि दो औरतें एक आदमी के बराबर होती हैं। यह आयत यह बताने के लिये उपयोग की जाती है कि मानसिक रूप से औरत आदमी से दुर्बल है। आश्चर्य होता है कि अरबों आकाशगंगाओं का रचयिता कहता है कि यदि एक औरत त्रुटि करेगी या भूल जायेगी तो दूसरी औरत उसे टोक सकती है। पर यदि आदमी त्रुटि करे या उसे विस्मृत हो जाये तो फिर क्या? उस आदमी को कौन टोकेगा? कुछ मुस्लिम पक्षकार कहते हैं कि आदमियों की तुलना में औरतों में स्मृतिलोप (भुलक्कड़पन) होने की संभावना अधिक होती है। पर आदमी भी तो स्मृतिलोप के रोग से पीड़ित हो रहा है। इसके अतिरिक्त आदमी और औरत दोनों अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में स्मृतिलोप की समस्या से पीड़ित होते हैं- आदमी हो या औरत, दोनों में स्मृतिलोप की समस्या से पीड़ित होने वालों का प्रतिशत अति न्यून भी होता है। अत: यदि महिला जनसंख्या का एक छोटा सा प्रतिशत जीवन के उत्तरार्द्ध में स्मृतिलोप से पीड़ित भी होता है और केवल महिलाओं को ही यह रोग नहीं होता है तो केवल महिलाएं ही क्यों भुगतें कि उनका साक्ष्य पुरुषों की तुलना में आधी मानी जाये? स्पष्ट है कि अल्लाह ने जब ये आयत बनायी तो उसे ये तथ्य नहीं पता थे। पर यदि उसे ये सब ज्ञात होता तो क्या उसका हृदय परिवर्तन होता? इसके अतिरिक्त क्यों एक सामान्य नियम बनाकर उसकी परिधि में सभी महिलाओं को ले लिया गया, जबकि हम जानते हैं कि सभी महिलाएं स्मृति-लोप के रोग से ग्रस्त नहीं होती हैं? यह तो कुछ वैसा ही है, जैसे कि हम कहें महिलाओं को चॉकलेट प्रिय है, इस कारण वे मोटी हो जाती है तो सभी महिलाओं के लिये चाकलेट प्रतिबंधित कर दिया जाये!

जहां तक हम जानते हैं महिलाओं की औसत बुद्धिमत्ता पुरुषों के बराबर ही होती है। कुछ ऐसे निश्चित क्षेत्र हैं जहां कुछ में पुरुषों की आईक्यू अधिक होती है तो कुछ क्षेत्रों में महिलाओं की आईक्यू अधिक होती है, यद्यपि कुल मिलाकर यह दोनों के लिये समान ही रहती है। यह अंतर लिंग की अपेक्षा विभिन्न नृजातियों

में अधिक दृष्टिगोचर होता है। आधुनिक अध्ययनों ने यह दिखाया है कि किस प्रकार महिला व पुरुष में समान स्तर की बुद्धिमत्ता होती है तो अल्लाह यहां पुनः ग़लत सिद्ध हुआ। ये तो बस चार कुरआनी आयतें थीं। ऐसी विभेदकारी आयतें और भी हैं और इनके साथ सैकड़ों की संख्या में हदीसें हैं जो सुनियोजित ढंग से महिलाओं के प्रति विद्वेषपूर्ण हैं तथा इन आयतों से भी बुरी हैं। सैकड़ों की संख्या में विद्वेषपूर्ण हदीसों को देखने की अपेक्षा आइये उनमें से कुछ को देखते हैं:

> जिन बातों से इबादत व्यर्थ (बेकार) हो जाती है, वो मुझे बताये गये थे। उन्होंने कहा, 'कुत्ते, गधे और औरत से इबादत व्यर्थ हो जाती है (यदि ये तीनों इबादत कर रहे लोगों के सामने से निकलते हैं,' मैंने कहा, 'तुमने हमें कुत्ता (अर्थात औरत, बनाया है। जब मैं अपने बिछौने पर लेटी होती थी तो रसूल को इबादत करते हुए देखती थी। चूंकि मेरा बिछौना रसूल और क़िबला के बीच में होता था तो जब कभी मुझे किसी वस्तु की आवश्यकता होती तो मैं सरक कर निकल जाती थी, क्योंकि मुझे उनके सामने जाना अच्छा नहीं लगता था।' (सहीह बुख़ारी, अंक 9, संख्या 490)

मुझे यह विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है कि मुहम्मद की बाल-बीवी आयशा ने स्वयं मुहम्मद के इस विचार पर आपत्ति दर्शायी थी। अतः हम इस मज़हब में महिलाओं के तीन मूल अधिकारों को स्पष्ट देख पाते हैं:

1. आप अपनी बीवी को पीट सकते हैं।
2. पैतृक संपत्ति के बंटवारे में आप उसके भाइयों के पक्ष में उसके साथ भेदभाव कर सकते हैं।
3. औरत मानसिक रूप से आदमी से नीचे होती है और आदमियों की तुलना में मूर्ख होती है।

तो अगली बार जब कोई आपको बताये कि अल्लाह ने औरतों को अधिकार दिये हैं तो बस उन्हें ये तीन मूल बातें बताइयेगा। मुस्लिम पक्षधरों से आप इसके बारे में सभी प्रकार के औचित्य व मानसिक बहाने सुनेंगे, परंतु आपको उनके तर्कों में कुछ भी दूर-दूर तक स्वीकार करने योग्य नहीं लगेगा।

प्रतिशोधात्मक

यह अल्लाह अपनी चाटुकारिता किये जाने पर इतना आत्ममुग्ध है कि इस

संसार में जो उसे स्वीकार नहीं करता, उसे वो अनंत काल तक दोज़ख़ में आग में जलाने की धमकी देता है। इस्लाम के प्रकरण में वह चाहता है कि दिन में पांच बार उसकी इबादत हो और वो अपने अनुयायियों से उसके लिये रोज़ा रखने तथा जीवन में कम से कम एक बार अवश्य ही मक्का की तीर्थयात्रा करने की मांग करता है। इससे भी बुरा यह है कि यदि आप उसके अस्तित्व को नहीं मानते हैं तो वह आप पर अत्याचार करेगा और अनंत काल तक आपको दोज़ख़ में आग में जलायेगा। आइये तनिक सबको प्रेम करने वाले इस अल्लाह के बारे में क़ुरआन की कुछ आयतों का अवलोकन करें:

> जिन्होंने इस पुस्तक को अस्वीकार किया है, जिसके साथ अपने रसूलों को भेजा है, तो शीघ्र ही वे जान लेंगे। जब उनके गलों में तौक़ होंगे और वे बेड़ियों में जकड़कर खींचते हुए ले जाये जायेंगे और पहले खौलते पानी में डाल दिये जाएंगे और इसके बाद धधकते आग में झोंक दिये जायेंगे। (40:70-72)

नीचे की आयत के बारे में क्या?

> ये दो पक्ष हैं, जिन्होंने अपने-अपने ख़ुदा को लेकर विवाद किया है। पर जो काफ़िर हैं उन्हें आग के वस्त्र पहनाये जायेंगे, उन्हें सिर पर खौलता पानी डाला जायेगा जो उनके शरीर को, आंतों को गला देगा और जो उनके शरीर के चमड़े को गला देगा। (22:19-20)

वह अनंत काल तक केवल जलायेगा और प्रताड़ित ही नहीं करेगा, वरन् वह वास्तव में इसको देखकर आनंदित भी होगा और जब वे प्रताड़ित किये जायेंगे तो उन पर खिखियाते हुए टिप्पणी भी करेगा।

> जब भी वे अपार पीड़ा में दोज़ख़ की आग से बाहर निकलना चाहेंगे तो पुन: उसी में झोंक दिये जायेंगे और (उनसे कहा जायेगा कि) 'आग में जलने की यातना का स्वाद चखो।' (22:22)

उपरोक्त आयत में केवल एक बात जो नहीं है वह है शैतानी 'हा हा हा' का ठहाका! हिटलर और स्टालिन ने भी संभवतया ऐसा नहीं किया होगा कि वे कभी अपने शिकारों के पास गये होंगे और बोले होंगे, 'हां! क्या अब आनंद मिल रहा है तुम्हें इस यातना का?' फिर भी करोड़ों मुसलमान सोचते हैं कि सबकुछ रचने वाले अल्लाह का यह कृत्य पूर्णत: उचित है। जैसा कि माइकल शेरमर कहते हैं,

आप चीटियों के किसी वाल्मीक के पास जायें और चीटियां आपके पास न आयें, आपकी प्रशंसा न करें अथवा आपके लिये कुछ भोग न लायें तो क्या आप उनकी बस्ती को जला देंगे? मुझे लगता है कि हममें से कोई कितना भी बुरा क्यों न हो, पर ऐसा नहीं करेगा, किंतु सदा-दयालु व प्रेम करने वाले अल्लाह को ऐसा करने में कुछ भी अनुचित नहीं लगता है।

लगभग पांच सौ ऐसी आयतें हैं जो विशेष रूप से काफ़िरों अर्थात ग़ैर-मुसलमानों के लिये दोज़ख़ की आग के विषय में हैं। लगभग 36 ऐसी आयतें हैं जो अल्लाह के लोगों को एकमात्र सच्चे मज़हब इस्लाम के प्रसार के लिये अ-मुसलमानों (ग़ैर-मुसलमानों) से जंग करने को कहती हैं, तब भी लोग पूछते हैं कि तालिबान और आईएसआईएस कहां से आया।

नरसंहारी

ये अल्लाह लोगों को केवल दोज़ख़ (जो निश्चित रूप से काल्पनिक है) की आग में यातना देने की धमकी ही नहीं देता, वरन् ये असहमतियों पर धरती से सभ्यताओं को नष्ट करने की धमकी देने में भी संकोच नहीं करता। लॉट की कहानी अत्यंत प्रसिद्ध है। कुरआन भी अल्लाह के स्वभाव को बताने के लिये बाइबिल की इस कहानी को लेने को बुरा नहीं समझती है।

कहानी के अनुसार सडोम में ऐसे आदमी थे जिन्हें आदमियों के साथ संभोग करना प्रिय था। अल्लाह ने तीन दूतों (फ़रिश्तों) को लॉट (इस्लाम में लूत) के घर भेजा। सडोम के लोग इन तीन सुंदर मर्द फ़रिश्तों का बलात्कार करना चाहते थे तो लॉट ने उन लोगों से कहा कि वे उसके इन तीन अतिथियों का बलात्कार न करें और ऐसा न करने के बदले उन्हें अपनी सुंदर बेटियां दे दीं।

चूंकि वे लोग समलिंगी थे तो उन्होंने लॉट के इस उदारचरित प्रस्ताव को ठुकरा दिया (बाइबिल में तो यह कहानी ऐसी ही लिखी है)। यह वास्तव में दिखाता है कि बाइबिल की यह कहानी कितनी बुरी है। क्या आप आग से बने किसी प्राणी को बलात्कार होने से बचाने के लिये अपनी बेटियों का बलात्कार करने का प्रस्ताव दे सकते हैं? पर हां, उस संभ्रांत लॉट ने यही किया। 'मेरी बेटियों को बलात्कार के लिये ले लो, पर मेरे फ़रिश्ते मित्रों को अकेला छोड़ दो। कुरआन में लूत की कहानी थोड़ी सी भिन्न है। इसमें पहले यह दावा किया जाता है कि सडोम के लोग वे पहले मनुष्य थे जिनमें समलैंगिक सबंधों का प्रचलन था:

> और (हमने लूत को भेजा था, जब उसने अपने लोगों से कहा: 'क्या तुम ऐसा अनैतिक काम कर रहे हो, जो तुमसे पहले दुनिया में से किसी ने नहीं किया है? तुम औरतों को छोड़कर कामवासना की पूर्ति के लिए आदमियों के पास जाते हो। फिर तो तुम अनाचार (पाप) करने वाले लोग हो।' (7:80-81)

किंतु सडोम के लोग धरती के पहले समलिंगी थे, यह दावा निश्चित ही झूठा है, क्योंकि हमारे पास रिकार्ड हैं कि प्रागैतिहासिक काल में लैटिन व उत्तरी अमरीका में समलैंगिकता के प्रकरण थे। 17 एक गुफा में 5000 वर्ष पूर्व के एक आरंभिक समलिंगी जोड़े के साक्ष्य पाये गये थे। यह गुफा आज के चेक गणराज्य के प्राग में स्थित है। निश्चित रूप से इन सभ्यताओं के लोगों को सडोम के लोगों के विषय में नहीं ज्ञात था। इस विषय में कम से कम तब तक तो उन्हें नहीं ही पता होगा, जब तक कि 15वीं सदी और इसके बाद इनको जीत नहीं लिया गया। इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि ऐसा लगता है अल्लाह को इन सभ्यताओं के बारे में नहीं पता था, क्योंकि कुरआन या बाइबिल में कहीं भी अज्ञात संसार का उल्लेख नहीं मिलता है। कुछ इतिहासकार बताते हैं कि सडोम और गोमरह सभ्यता मृत सागर के साथ-साथ अदमह, ज़ेबाइम और बेला के आसपास फली-फूली थी। 18 हमें सडोम या गोमरह सभ्यता के कोई प्रमाण नहीं मिले हैं, यद्यपि यह सही है कि बेला निश्चित रूप से कोई नगर था। यदि सडोम और गोमरह का अस्तित्व था तो वे संभवतया ईसा पूर्व 2100 के आसपास रहे होंगे। यदि हम कुरआन के विवरण को मानें तो समलैंगिकता का चलन सबसे पहले ईसापूर्व 2100 अथवा लगभग 4200 वर्ष पूर्व शुरू हुआ, जो कि निश्चित रूप से असत्य है।

रोचक प्रश्न यह है कि यदि मान भी लें कि सडोम में समलैंगिक रहते थे तो क्या उस पूरे नगर को नष्ट करना आवश्यक था? हम जानते हैं कि सामान्य लोगों (विषमलिंगी समकक्षों) की तुलना में समलिंगी सदा अल्पसंख्यक होते हैं। इस पर ध्यान दिये बिना, इस दयावान अल्लाह ने पूरे नगर को नष्ट कर दिया:

> और हमने उनपर (पत्थरों) की वर्षा कर दी। तो देखो कि उन अपराधियों का अंत कैसे हुआ? (कुरआन 7:84)

निश्चित रूप से हमारे पास कुरआन की इस कहानी का कोई प्रमाण नहीं है। इतिहासकार अनुमान लगाते हैं कि प्राचीन नगर सडोम और गोमरह वहां रहे होंगे

जहां आज जार्डन और इज़राइल है। ऐसा संभव भी है क्योंकि यदि उन नगरों का अस्तित्व रहा होगा तो ये उनके लिये सबसे सटीक अवस्थान हैं, यद्यपि इस क्षेत्र के आसपास कोई सक्रिय ज्वालामुखी नहीं है। एक ही ज्वालामुखी जिसने इन नगरों का नाश किया होगा, वह माउंट बेंटल है। दुर्भाग्य से मुस्लिम व ईसाई पक्षधरों के लिये यह निष्क्रिय ज्वालामुखी है और सैकड़ों-हज़ारों वर्षों से ऐसे ही निष्क्रिय है। बिना किसी प्रमाण के दावा करना सरल है, जैसे कि मैं पॉम्पी के विनाश के बारे में सभी प्रकार के दावे कर सकता हूं और कह सकता हूं कि मेरे (काल्पनिक) ईश्चर याहूरु ने दो हज़ार वर्ष पूर्व पॉम्पी को नष्ट किया, क्योंकि पॉम्पी के लोग हरे रंग के वस्त्र के स्थान पर अधिकांशत: लाल रंग का वस्त्र धारण करते थे और याहूरु को लाल रंग प्रिय नहीं था। भले ही लूत की कहानी सत्य हो, पर बिना तथ्य के दावा करना कोई गुणकारी साहसिक कार्य नहीं है। लॉट की कहानी के जैसे ही कुरआन ने थोड़ा फेरबदल करके नूह की कहानी को भी चुराया था। इस स्वीकृत हदीस के अनुसार कुरआन में आदम और नूह के बीच दस पीढ़ियों का अंतर है:

'क्या आदम एक रसूल थे?'

रसूल मुहम्मद ने उत्तर दिया, 'हां।'

उस व्यक्ति ने पूछा, 'उनके और नूह के बीच कितने समय का अंतर होगा?'

रसूल मोहम्मद ने उत्तर दिया, 'दस पीढ़ी का।'

(सही इब्ने हिब्बान, हदीस 6190)

कुरआन कहती है कि नूह 950 वर्ष तक जिया तो यह मानना विश्वसनीय है कि आदम और नूह के बीच लगभग 10 हज़ार वर्ष का अंतर होगा। इस्लामी दावा है कि चूंकि यह बहुत लंबा समय था तो संसार के लोग आदम द्वारा स्थापित नियम-क़ानून को भूल गये और इस बीच शैतान ने लोगों को बहका दिया। चूंकि अल्लाह लोगों पर रोक लगाने में विफल रहा और लोगों से सीधे संवाद नहीं कर सका तो उसने लोगों को बचाने के लिये नूह को भेजा:

> और हमने निश्चित ही नूह को उसके लोगों की ओर रसूल बनाकर भेजा, (बता रहा हूं,, 'वास्तव में मैं तुम्हारे पास साफ़-साफ़ चेतावनी देने आया हूं कि अल्लाह के अतिरिक्त किसी की इबादत न करो। मुझे तुम्हारे ऊपर दु:खदायी दिन की यातना का भय लग रहा है।' (11:25-26)

यदि आज कोई इस प्रकार का दावा करे तो आप निश्चित ही उसे संदेह की दृष्टि से देखते और नूह जिन लोगों को संबोधित कर रहा था उन्होंने भी ऐसा ही किया:

> तो जो उसके लोगों में काफ़िर हो गये थे उनमें से प्रमुख लोगों ने कहा: हम तो तुम्हें कुछ और नहीं, बस अपने ही जैसे मनुष्य के रूप में देख रहे हैं और हम देख रहे हैं कि तुम्हारा अनुसरण केवल वही लोग कर रहे हैं, जो हममें नीच हैं और वो लोग भी बिना सोचे-समझे तुम्हारा अनुसरण कर रहे हैं। हम तुममें ऐसा कोई गुण नहीं पाते हैं जो कि तुम्हें हमसे ऊपर रखे। अपितु हम तुम्हें झूठा समझते हैं।' (11:27)

इन लोगों ने नूह से जो पूछा, उसमें कुछ भी ग़लत नहीं था। इन लोगों को प्रमाण देने के स्थान पर अल्लाह ने इन्हें नष्ट करने का निर्णय लिया और नूह को एक पानी का जहाज़ बनाने का आदेश दिया।

> और हमारी आंखों के सामने हमारी प्रेरणा के अनुसार पानी का एक जहाज़ बनाओ और मुझसे उनके बारे में कुछ न कहना, जिन्होंने ग़लत किया है। वास्तव में वे डूबने वाले हैं। (11:37)

अल्लाह इतना प्रतिशोधात्मक है कि वह नूह को आदेश देता है कि उन लोगों को क्षमा करने के लिये न कहे, जो एक वृद्ध व्यक्ति के निराधार दावे पर प्रश्न उठाकर अल्लाह के अस्तित्व का और प्रमाण भर चाहते थे। किंतु नहीं, इस अत्याचारी, नरसंहारी अल्लाह से कौन तर्क कर सकता है?

यह अल्लाह न केवल इन निराधार दावों पर संदेह करने वालों को दंडित कर रहा है, वरन् वह पशुओं के उस पूरे संसार को भी नष्ट करने में कुछ ग़लत नहीं देख रहा है जिनका मनुष्य और अल्लाह के बीच के इस क्लेश से कुछ लेना-देना तक नहीं है।

> हमने कहा, 'जहाज़ में प्रत्येक प्रकार के जीवों के दो जोड़े रख लो और अपने परिवार को रख लो, उनको छोड़कर जिनके बारे में पहले बता दिया गया है, जो भी ईमान लाये हैं (अर्थात अल्लाह को माना है) उन्हें भी जहाज़ में बिठा लो।' (11:40)

कितना अच्छा है यह अल्लाह कि प्रत्येक पशु के एक जोड़े को बचा लिया,

परंतु उन लाखों पशुओं का क्या जो नूह की जीवन-रक्षक नाव को पकड़ने से चूक गये? और पशुओं के उन एक-एक जोड़ों को भी क्यों बचाना? क्या अल्लाह अपनी चमत्कारी छड़ी घुमाकर उन्हें फिर से नहीं बना सकता था? वह संभवतया उनकी रचना करने से अधिक उनको मिटाने में व्यस्त था।

बाइबिल की परंपरा के विपरीत मुसलमान भाग्यशाली हैं कि मुहम्मद ने इसे विश्वव्यापी जलप्लावन (बाढ़) नहीं कहा, चूंकि धरती पर इतना जल ही नहीं है कि समूचे ग्रह को डुबा सके, अत: निश्चित ही यह संभव नहीं है। **मुसलमान और ईसाई दावा करते हैं कि ये कहानियां हमें सिखाती हैं कि हमें अपना जीवन कैसे जीना चाहिये। यदि आप इन कहानियों पर तटस्थ होकर देखेंगे तो पायेंगे कि ये कहानियां यदि कुछ सिखाती हैं तो वह यह कि अल्लाह कितना क्रूर, अन्यायपूर्ण और अत्याचारी है। इस अल्लाह को समलैंगिकता या कुफ्र (अल्लाह में अविश्वास) जैसी तुच्छ बातों पर पूरे नगर और सभ्यताओं को नष्ट करने में कुछ ग़लत नहीं लगता। यदि आपके शहर में समलैंगिक हैं तो वो पूरे शहर को नष्ट कर देगा। यदि आपके नगर में नास्तिक (इस्लाम को न मानने वाले) हैं तो वह पूरे नगर को बाढ़ में डुबो देगा और वह केवल काफ़िरों को ही नहीं मार डालेगा, अपितु उस क्षेत्र के सारे पशुओं को भी मार देगा। नीचे की आयतों को देखने के बाद लगता है कि यह अल्लाह जोसफ स्टालिन और हिटलर से भी भयानक नशा करता है।**

> और हमने नूह के बाद बहुत-सी पीढ़ियों का विनाश किया है। तुम्हारा अल्लाह अपने दासों के पापों से अवगत होने-देखने को बहुत है। (17:17)

केवल दुष्ट

10 जनवरी 2018 को पाकिस्तानी सोकर उठे तो उन्हें ज़ैनब नाम एक बालिका के बारे में बहुत बुरा समाचार मिला कि उस 7 वर्षीय बालिका का अपहरण किया गया, उसके साथ बलात्कार किया गया और मारकर सड़क किनारे कूड़े जैसा फेंक दिया गया। पूरा देश हिल गया और देशभर में प्रदर्शन होने लगे। प्रत्येक व्यक्ति सरकार को कोसने लगा कि उसने ऐसी भ्रष्ट व्यवस्था दी है कि हमारे बच्चे और महिलाएं सुरक्षित नहीं हैं। लोगों का क्रोध और बढ़ गया जब उन्हें पता चला कि

यह निर्दोष बच्ची कुरआन पढ़ने मदरसा जा रही थी। उसके अभिभावक मज़हबी यात्रा पर मक्का में थे। यह बालिका उन 'अल्लाह से न डरने वाले' बच्चों से तो अच्छी ही कही जायेगी, क्योंकि वो और उसका परिवार अपना समय विशेष रूप से अल्लाह को समर्पित कर रहे थे। निश्चित ही हम सबको धक्का लगना चाहिये तथा अपनी सरकार को अपने नागरिकों के लिये और अच्छा समाज बनाने हेतु और काम करने के लिये बाध्य करना चाहिये। किंतु क्या पाकिस्तान की बहुसंख्यक जनता उस अल्लाह को नहीं मानती है, जो सभी स्थानों पर व्याप्त है और सबकुछ कर सकता है? पर हम भ्रष्टाचार के लिये केवल सरकार को उत्तरदायी ठहराते हैं, जबकि इसे इतना तक नहीं पता होता कि अपराध किया जा रहा है। यह सर्वव्यापी अल्लाह सातवें आकाश में अपने सिंहासन पर बैठकर उस बालिका के साथ हो रहे अपराध को देखता रहा और उसने कुछ भी नहीं किया।

निश्चित रूप से नास्तिक के रूप में हम अल्लाह को दोष नहीं दे सकते हैं, किंतु जो लोग अल्लाह में विश्वास करते हैं, भला वे इस पर प्रश्न क्यों नहीं करते? जो लोग प्रश्न करते हैं वे या तो 'विद्वानों' की कठोर निंदा का शिकार बनते हैं अथवा अस्पष्ट छद्म-दार्शनिक कथन जैसे कि 'अल्लाह ने तुम्हें स्वतंत्र इच्छा दी है', ऐसा उत्तर पाते हैं। यह 'स्वतंत्र इच्छा' वाली व्याख्या अनेक समस्याओं को जन्म देती है, किंतु अधिकांश मुसलमान इस पर प्रश्न उठाने का कष्ट नहीं करते। यह सर्वव्यापी व दयावान अल्लाह 7 वर्ष की एक बच्ची के जीने की 'स्वतंत्र इच्छा' का संरक्षण करने की अपेक्षा उस बच्ची के बलात्कारी व हत्यारे की 'स्वतंत्र इच्छा' का संरक्षण क्यों करता है? इसके अतिरिक्त यह स्वतंत्र इच्छा तब भी टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाती है, जब अल्लाह वास्तव में 'बुरे मनुष्यों' की स्वतंत्र इच्छा का अतिक्रमण करता है, जब अल्लाह यदा-कदा हस्तक्षेप करता है और चमत्कार करता है। हम सबने इन 'चमत्कारों' की कहानियों को सुना है कि हत्या के शिकार को किसी ईश्वरीय प्रभाव से चामत्कारिक रूप से बचा लिया गया। तब हत्यारे की स्वतंत्र इच्छा का अन-अतिक्रमण कहां रह जाता है? यह उस व्यर्थ के तर्क का स्पष्ट उदाहरण है जो मुसलमान और अन्य स्वदेववादी देते हैं। जब अल्लाह किसी प्रकरण में हस्तक्षेप करने का निर्णय करता है तो प्रश्न उठता है कि वह हस्तक्षेप करने का निर्णय कैसे करता है। कभी तो वह किसी हत्यारे की स्वतंत्र इच्छा की रक्षा करता है तो कभी वह नैतिक रूप से भ्रष्ट व्यक्ति की हत्या होने

से बचा लेता है और वहीं वह एक निर्दोष, पूर्णतया नैतिक बच्ची को उसका बलात्कार होने और हत्या होने से नहीं बचाता है। कुछ मुसलमान यह भी दावा करते हैं कि यह अल्लाह की ओर से दिया गया दंड हो सकता है, क्योंकि हो सकता है कि उसके मां-बाप बुरे थे और अल्लाह ने उनकी बच्ची की हत्या होने देकर उन्हें दंड दिया है। भले ही ऐसा हो, परंतु मां-बाप के पाप का दंड किसी निर्दोष बच्ची को क्यों? यह तो तनिक भी उचित नहीं लगता है, फिर भी 20 करोड़ पाकिस्तानी इसमें कुछ भी ग़लत देख पाते हैं?

अल्लाह के साथ अन्य समस्याएं

इस सर्वव्यापी अल्लाह की पूरी अवधारणा ही बहुत सी समस्याओं को जन्म देती है। अल्लाह ने हमें रोगी (दोषक्षम और दुराचारी) बनाया, तब भी वह चाहता है कि हम स्वस्थ रहें? यह तो वैसा ही है जैसे कि मैं किसी को एक हाथ वाला बनाऊं और उसे ऐसा काम दूं जो केवल दो हाथों वाले मनुष्य ही कर सकते हैं। अल्लाह ने जानबूझकर मनुष्यों को दोषक्षम बनाया, किंतु वह चाहता है कि हम अमोघ बनें।

इस अल्लाह ने मानवों में रोग डाला और इसके बाद लोगों से कहता है कि उसकी इबादत करो जिससे कि वह उनका रोग ठीक कर दे, जबकि इसका कोई प्रमाण नहीं है कि उसने किसी का रोग कभी ठीक भी किया है। चूंकि लोग रोग के उपचार के लिये चिकित्सक के पास जाते हैं तो मैं सोचता हूं कि क्या ये लोग अल्लाह की इच्छा के विरुद्ध नहीं जा रहे हैं।

यदि अल्लाह ने आपको कैंसर दिया है तो आपको इसे अल्लाह की इच्छा समझकर स्वीकार करना चाहिये फिर उसकी इच्छा और अपेक्षाओं के विरुद्ध चिकित्सक के पास क्यों जाना?

यह अल्लाह अपनी इबादत की इतनी भयानक इच्छा रखता है कि यदि हम 24 घंटे सातों दिन उसको प्रसन्न करने का प्रयत्न नहीं करते तो वह अनंत काल तक हमें जलायेगा और यातना देगा। चलिये ठीक है, हो सकता है कि मेरा अल्लाह अहंकार से ग्रस्त प्राणी है, परंतु वह अपने अस्तित्व का कोई प्रमाण भी नहीं दिख़ाना चाहता है। **उसके पास हमें अपने अस्तित्व के बारे में बताने का सर्वोतम उपाय वह 'संदेश' था, जो उसने ऐसे लोगों के पास भेजा जो दास, यौनदासियां रखते थे और जो बच्चों से शादी करते थे। चलिये,**

यह भी मान लें कि वह अच्छे लोगों को नहीं ढूंढ़ सका, पर 1400 वर्ष पहले वह रुक क्यों गया और वह यह अपेक्षा क्यों करता है कि आने वाली पीढ़ियां उसमें विश्वास करें? हो सकता है कि वह वहां रुकना चाहता था, किंतु वह धरती के अन्य भागों के मानवों से संवाद के लिये अरबी (कुरआन के प्रकरण में) की अपेक्षा किसी अच्छी भाषा में अपना संदेश क्यों नहीं ला सका। अरबी भाषा तो बड़ी सरलता से विकृत हो जाती है और उसके संदेश की व्याख्या ग़लत हो जाती है? उसे मुहम्मद के यौनजीवन में रुचि लेना अच्छा लगता है और एक के बाद एक आयत इस बारे में भेजता है कि किसके साथ उसे सोना चाहिये और किसके साथ नहीं, परंतु आज वह उन संभ्रांत लोगों के पास आयत नहीं भेजता जो उसके अस्तित्व को लेकर संशय में हैं और जिन्हें उसकी इस बात में विश्वास नहीं है कि उस पर संशय करने के कारण उन्हें अनंत काल तक दोज़ख़ (नर्क) में रहना पड़ेगा।

vè;k; 5

मुहम्मद का चरित्र

यह समझना तो अपेक्षाकृत सरल है, किंतु इसकी व्याख्या करना कठिन है कि क्यों अधिकांश मुसलमान सच में सोचते हैं कि मुहम्मद मानवता के लिये महानतम आदर्श चरित्र है। जो मुझे समझ में आता है, उसके अनुसार इसका एकमात्र उत्तर 'अज्ञानता' है। आइये, मुहम्मद के जीवन को थोड़ा विस्तार से देखें।

हिंसक

जब मैं बच्चा था और इस्लाम के प्रभाव में बड़ा हो रहा था तो मुझे बताया गया कि मुहम्मद इतना उदार व प्रेम करने वाला था कि उसने एक बार उस रुग्ण महिला की भी सेवा की जो उस पर कचरा फेंका करती थी। निश्चित रूप से यह एक ऐसी सुंदर कहानी है जिसे सुनकर कोई भी ऐसे व्यक्ति को प्यार करेगा। यद्यपि सत्य इससे पूर्णतया भिन्न है। कोई दुष्ट महिला जो प्रतिदिन मुहम्मद पर कचरा फेंका करती थी और एक दिन अस्वस्थ हो गयी, यह कहानी कहीं भी नहीं मिलती है, यहां तक कि अति पक्षपाती इस्लामी साहित्य में भी यह कहानी नहीं मिलती है। लोग मुहम्मद के द्वार पर कचरा फेंकते थे, ऐसी कहानियां तो हैं, किंतु मुहम्मद कचरा फेंकने वाले उन लोगों को देखने कभी नहीं गया। अपने शोध के समय जब मुझे ये सब सच पता चले तो मुझे इतना धक्का लगा कि मैं उद्विग्न हो उठा। **जब मुझे ज्ञात हुआ कि मुहम्मद ने जंगें छेड़ी थीं और वह जाने कितने लोगों की मृत्यु का उत्तरदायी था तो मैंने स्वयं को अपमानित, छला हुआ, मिथ्याप्रचार का शिकार और ठगा सा अनुभव किया। पाकिस्तानी के विद्यालयों में मुहम्मद के कुकर्मों की ये कहानियां नहीं बतायी जाती हैं।** मुहम्मद के पहले राजनीतिक शिकार कवि थे। जब मुहम्मद अपने करियर के आरंभिक भाग में था और 'अल्लाह' का तथाकथित संदेश फैला रहा था तो उसे मुखर आलोचना व विरोध का सामना करना पड़ा। उन दिनों रॉकस्टार और अभिनेताओं के स्थान पर सबसे प्रभावशाली व्यक्ति लेखक व कवि हुआ करते थे,

जिनमें समूह के मत परिवर्तन की क्षमता थी। यदि आप इस बारे में सोचें तो मुहम्मद बहुत बड़ा लेखक भी था, क्योंकि उसने लगभग 500 पृष्ठ की पुस्तक: कुरआन लिखकर मानव समाज में महानतम क्रांतियों में एक प्रारंभ किया था।

अब मैं उन आलोचकों में से कुछ के बारे में लिखूंगा जिन्हें केवल इस कारण अपने प्राण गंवाने पड़े कि वे नये राजनीतिक दल इस्लाम के विरुद्ध अपने विचार प्रकट कर रहे थे।

इब्ने—इस्हाक की कृति 'मुहम्मद का जीवन' के अनुसार, मुहम्मद के हिजरा (मक्का से निकलकर मदीना आव्रजन) से पूर्व अल-नज्र बिन अल-हारिस मुहम्मद की आलोचना किया करते थे। उन्होंने एक बार कहा, 'ईश्वर जानता है कि मुहम्मद मुझसे अच्छी कहानी नहीं सुना सकता है और उसकी बातें पुराने समय की कहानियां भर हैं जिसे उसने वैसे ही चुराया है, जैसा कि मैंने किया था।' नज्र वही कर रहे थे जो आजकल के राजनीतिज्ञ करते हैं-अपने विरोधियों की आलोचना करना। वो दावा कर रहे हैं कि उनकी कहानी सुनाने की कला मुहम्मद से श्रेष्ठ है। चूंकि नज्र काल्पनिक कहानियां लिखते थे तो वे यह बता रहे थे कि जो कहानियां मुहम्मद सुना रहा है वो न केवल काल्पनिक हैं, अपितु दूसरे लेखकों की हैं। **नज्र को मुहम्मद का अपमान करना महंगा पड़ा और 662 ईसवी में बद्र की जंग में नज्र पकड़ लिये गये और उनका सिर कलम करने का आदेश दिया गया। उस समय बंदियों के प्राण के बदले मोटी फ़िरौती लेकर छोड़ दिये जाने का चलन था, किंतु नज्र के जीवन के लिये कोई फ़िरौती नहीं मांगी गयी और उनकी हत्या कर दी गयी। यह स्पष्ट है कि मुहम्मद को यह कवि वास्तव में अप्रिय था।[5] मुहम्मद के एक और आलोचक उक्बह बिन अबू मुऔत भी ब्रद की जंग में पकड़ लिये गये और उनका भी सिर काट लिया गया।[6]**

अल-नज्र की हत्या से घटनाओं की श्रृंखला प्रारंभ हुई जिसमें मुहम्मद ने योजनाबद्ध ढंग से अपने सभी विरोधियों व आलोचकों को हिंसा के माध्यम से चुप करा दिया। अल-नज्र की हत्या से क्षुब्ध अबू आफाक ने मुहम्मद की आलोचना करते हुए एक कविता लिखी तो मुहम्मद ने क्या किया? उसने अबू अफ़ाक़ की हत्या का आदेश दिया और उन्हें मरवा दिया।

अबू अफ़ाक़ की हत्या से दुखी कवयित्री अस्मा बिंते—मारवान ने मुहम्मद के विरुद्ध एक कविता लिखी। इब्ने इस्हाक मुहम्मद की बुद्धिमत्ता की डींगें हाकते हुए बताता है कि इस कवयित्री की हत्या से कैसे इस्लाम को लाभ हुआ और अस्मा की हत्या के बाद उसकी पूरे क़बीले (जनजाति) ने इस्लाम स्वीकार कर लिया। अस्मा ने कविता लिखकर मक्का के मूर्तिपूजकों की आलोचना की थी कि वे लोग एक अजनबी (मुहम्मद) की बातों पर विश्वास कर रहे हैं और ऐसे ऐसे व्यक्ति को दंड नहीं दे रहे हैं। जब मुहम्मद ने यह सुना तो उसने कहा, 'कौन है जो मुझे मारवान की बेटी से छुटकारा दिलायेगा?' अस्मा के क़बीले का एक सदस्य उठा और इस काम के लिये आगे बढ़ा। वह अस्मा के घर में चोरी से घुसा और देखा कि अस्मा छाती से अपने नवजात बच्चे को लगाकर सोयी हुई थीं। उसने धीरे से बच्चे को हटाया और सोती हुई इस महिला की हत्या कर दी।[7]

जिस प्रकार उस लेखक ने लिखा कि अल्लाह की इच्छा का अनुपालन कराने वाले इस व्यक्ति ने 'धीरे से' बच्चे को हटाया, मुझे वह अच्छा लगा, मानों वह हमें यह बताने का प्रयास कर रहा हो उस महिला की हत्या करना अंतिम विकल्प था। यदि यह व्यक्ति बर्बर, क्रूर हत्यारा होता तो उसने उसकी मां के साथ बच्चे को भी मार दिया होता। कितना उदार था वह! जब **हत्यारा उमैर आया और मुहम्मद को बताया कि उसने क्या किया। जब उमैर ने मुहम्मद से पूछा कि उसे इसका कोई बुरा परिणाम तो नहीं भोगना पड़ेगा तो मुहम्मद ने कहा, 'अस्मा के लिये दो बकरियां तक भी लड़ने नहीं आयेंगी।' अस्मा के पांच बेटे थे और उसका पूरा कुनबा उसकी मृत्यु के बाद इस्लाम में धर्मांतरित हो गया। कौन कहता है कि मुसलमानों ने आतंक के माध्यम से इस्लाम को नहीं फैलाया?**

मुहम्मद के हत्यारे स्वभाव के बारे में एक और रोचक कहानी काब बिन अल-अशरफ़ की है। काब मक्का के यहूदी नेता थे। वो कूरैशों के छिन्न-भिन्न होने से निराश थे और उन्होंने मुहम्मद व मुसलमानों की निंदा करते हुए कुछ कविताएं लिखी थीं। यदि आप उन कविताओं को देखेंगे तो पायेंगे कि वह अपेक्षाकृत कठोर नहीं थीं, पर मुहम्मद अपनी आलोचना या विरोध तनिक भी

सहन नहीं करता था। उसने पांच हत्यारों का एक गिरोह तैयार किया जिनमें से एक काब का मुंहबोला भाई अबू नायला भी था। इस अभियान की जटिलता को समझते हुए अबू नायला ने कहा, 'हे अल्लाह के रसूल, हमें इस प्रकरण में झूठ बोलना पड़ेगा।' रसूल ने उससे कहा, 'जो तुम्हें ठीक लगे वो करो। तुम इस प्रकरण में कुछ भी करने के लिये स्वतंत्र हो।'[8]

जैसा कि आप देख सकते हैं कि जब अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति की बात आती थी तो मुहम्मद झूठ बोलने में भी संकोच नहीं करता था। उसके अनुसार जब तक आपके अनुकूल व लाभकारी हो, झूठ बोलना पूर्णत: उचित है। यह राजनीतिज्ञों का स्वर्णिम अस्त्र है, क्योंकि उन्हें झूठ बोलना प्रिय होता है तो फिर इसे अल्लाह की प्रेरणा बताकर इसे उचित क्यों न बताया जाये? मुसलमान संभवतया कहेंगे कि हम सभी मिथ्या वाचक (झूठ बोलते) होते हैं और हमारी सरकारें हर समय मिथ्या वाचन करती हैं, यद्यपि सरकारें यह दावा नहीं करती हैं कि वे सम्पूर्ण मानवता के लिये ईश्वरीय आदर्श का प्रतिरूप हैं।

अबू नायला काब के घर गया और झूठ बोला कि वह मुहम्मद की चालों से दुखी है। निश्चित ही उसने काब का विश्वास जीतने के लिये यह झूठ बोला था। इससे काब को लगा कि अबू नायला अब मुहम्मद के पक्ष में नहीं है। अबू नायला ने कहा कि वह काब के घर उपहार के रूप में कुछ शस्त्र लाना चाहता है, जिस पर काब ने यह प्रस्ताव स्वीकार करने की हामी भरी। जब रात हो गयी तो अबू नायला अपने मित्र के साथ अन्य तीन हत्यारों के पास गया और उनको लेकर कुछ शस्त्रों के साथ काब के घर आया तथा उन्होंने मिलकर काब की हत्या कर दी। **अबू नायला काब के सिर को प्रमाण के रूप में मुहम्मद के पास लाया। ऐसा मज़हब कुछ भी हो, पर शांति का मज़हब तो नहीं हो सकता है। जब आप आईएसआईएस और तालिबान को अपने विरोधियों का सिर काटते हुए देखते हैं तो क्या सोचते हैं कि ऐसे दुस्साहस की प्रेरणा कहां से आती है?**

आईएसआईएस और तालिबान का इस्लाम ही वास्तव में मुहम्मद का इस्लाम है। आधुनिक देशों यथा तुर्की और पाकिस्तान में हम जिस उदार प्रतीत होने वाले इस्लाम को देखते हैं वो 21वीं सदी में जन्मा है।[8]

मुहम्मद के आदेश पर आमिर बिन उमय्यह हत्या करने के लिये अबू सुफ़्यान

के पीछे पड़ा था। जब वह ऐसा कर पाने में विफल हो गया और स्वयं ही शिकार बन गया तो प्राण बचाने के लिये किसी प्रकार भागकर एक खोह में छिप गया। उस खोह में उसे एक काना बद्दू (घुमंतू जनजाति) चरवाहा मिला। उमय्यह ने उसे अपना परिचय एक बद्दू के रूप में दिया तो उसने भी गाते हुए उत्तर दिया, 'जब तक मैं जीवित हूं न तो मुसलमान बनूंगा और न ही मुसलमानों के मज़हब में विश्वास करूंगा।' उस निरीह व्यक्ति को आभास नहीं था कि आरंभिक काल के मुसलमान कितने हिंसक थे। उमय्यह ने उस बद्दू के सो जाने की प्रतीक्षा की और जब वह नींद में चला गया तो उसकी हत्या कर दी। **उमय्यह ने बताया, 'मैं उसके पास गया और उसे ऐसी भयानक मृत्यु दी जो पहले किसी को नहीं मिली होगी। मैं उसके ऊपर झुका और उसकी जो आंख ठीक थी उसमें तीर भोंक दिया और तब तक बलपूर्वक दबाये रहा जब तक कि तीर उसके गले के पार नहीं हो गया।' जब उमय्यह वापस आया तो उसने यह घटना मुहम्मद को सुनायी। इस पर मुहम्मद ने अपनी ही कही गयी आयत 'मज़हब में बाध्यता नहीं होती है' सुनाने के स्थान पर बोला, 'बहुत अच्छा किया।'**[9]

यह जानना सरल है कि क्यों आधुनिक मुसलमान इस झूठ को सच मानने लगते हैं कि इस्लाम शांति का मज़हब है और मुहम्मद मनुष्यों में सर्वोत्तम है। मुसलमानों का ऐसा मानना उनकी अज्ञानता भर है। जब मैं इस अध्याय पर शोध कर रहा था तो मैंने अपने परिजनों और कुछ निकट के मित्रों से पूछा कि क्या वे जानते हैं अल-नज्र या अस्मा बिंते–मारवान कौन थे अथवा क्या उन्होंने उस काने चरवाहे के विषय में सुना है। इनमें से किसी को भी उन लोगों के विषय में नहीं पता था, पर वे उस महिला को अवश्य जानते थे जो मुहम्मद के ऊपर कचरा फेंका करती थी। मुसलमानों को योजनाबद्ध ढंग से झूठ पिलाया जाता है और जब तक वो इस स्थिति में आयें कि स्वयं उत्तर ढूंढ़ने में समर्थ हो सकें, उनकी रुचि समाप्त हो चुकी होती है।

औरतख़ोरी

मानव इतिहास में आदमी सबसे ऊपर इन तीन इच्छाओं को रखता है: सत्ता, औरत और विरासत। हमने पहले ही देखा है कि सत्ता प्राप्त करने के लिये मुहम्मद किस प्रकार की हिंसा करने में सक्षम था। अब आइये मुहम्मद की अन्य जीतों को देखें: औरत।

यदि मुहम्मद इतिहास में कोई और चरित्र रहा होता यथा एक सुल्तान या विद्वान तो हम संभवतया उसके यौनजीवन पर इतना अधिक विचार नहीं करते, किंतु चूंकि मुहम्मद समस्त मानवता के लिये आदर्श चरित्र बताया जाता है तो उसके सार्वजनिक जीवन को ही नहीं, वरन् उसके व्यक्तिगत जीवन को देखना महत्वपूर्ण है। **मुहम्मद के पास कई बीवियां हीं नहीं, रखैलें भी थीं तो मैं उन सबको मुहम्मद के जीवन में औरतों के रूप में इंगित करूंगा।**

पहली औरत

आइये, अब औरतों के संबंध में मुहम्मद के जीवन को देखें। पैग़म्बरी के दावे से पूर्व मुहम्मद ने एक धनी व स्वतंत्र क़ुरैशी औरत से शादी की जिसका नाम ख़दीजा था। ख़दीजा एक सफल व्यापारी थी। ख़दीजा ने 40 वर्ष की अपनी अवस्था में मुहम्मद से शादी करने को कहा, जबकि उस समय मुहम्मद की आयु केवल 25 वर्ष थी। उनकी शादी 594 ईसवी में हुई। इस्लामी स्रोतों में ख़दीजा के बारे में जो जानकारियां दी गयी हैं, उनको पढ़ने के बाद भी ख़दीजा की सफलता व जीवन को देखकर इस बात की अच्छी जानकारी मिलती है कि वह कैसी महिला थी। ख़दीजा निश्चित रूप से सबल, धनी, प्रौढ़ और अपने संबंध में संभवत: सर्वाधिक प्रभुत्ववाली थी। मुहम्मद शादी के बाद 25 वर्षों तक 619 ईसवी में ख़दीजा की मृत्यु तक उसके साथ रिश्ते में रहा। मुहम्मद उस समय 50 वर्ष का था। मैं प्राय: सोचता हूं कि जिस मुहम्मद ने ख़दीजा की मृत्यु के बाद इतनी सारी शादियां कीं वो जब ख़दीजा जीवित थी तब किसी दूसरी औरत से शादी अथवा प्रेम प्रसंग क्यों नहीं कर सका। कम से हमारे पास तो ऐसी कोई जानकारी नहीं है। यदि मुहम्मद ने किसी अन्य औरत से चोंच लड़ाने या दूसरी शादी का प्रयास किया होता तो संभवतया ख़दीजा ने उसे तलाक़ दे दिया होता। क्योंकि जो जानकारी हमारे पास है, उसके अनुसार मुहम्मद ख़दीजा के प्रति निष्ठावान रहा और उसकी मृत्यु के बाद भी उसके प्रति लंबे समय तक प्रेम प्रकट करता रहा। यहां तक

कि उसने एक बार आयशा से कहा, 'मैंने रसूल को कहते सुना, 'इमरान की बेटी मैरी संसार में (अपने समय की) सर्वश्रेष्ठ औरत थी और ख़दीजा (उस भूमि की) सर्वश्रेष्ठ औरत थी।' (बुख़ारी, अंक 4, पुस्तक 55, संख्या 642)

ख़दीजा पहली व्यक्ति थी जिसने इस्लाम स्वीकार किया था। यह संभव है कि चूंकि मुहम्मद भी उसे प्यार करता था तो उसे दूसरी औरतों से शादी की आवश्यकता का अनुभव नहीं हुआ, पर यहां एक प्रश्न उठता है: क्या वह उन अन्य बीवियों को प्यार नहीं करता था जिनसे वह अपनी मृत्यु तक शादी करता रहा?

दूसरी संभावना यह है कि वह ख़दीजा को कुपित करने का जोखिम नहीं ले सकता था और संभवतया उसके पास दूसरी औरतों को प्रभावित करने या उनसे शादी करने के साधन नहीं थे। जब ख़दीजा की मृत्यु हो गयी तो यह बाधा दूर हो गयी और वह अचानक स्वयं को अत्यंत प्रभावशाली मज़हबी व्यक्तित्व के रूप में देखने लगा। ये दोनों संभावनाएं अल्लाह के रसूल के लिये अच्छी नहीं हैं, क्योंकि इससे पता चलता है कि जैसे ही अवसर मिलता है वह अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने लगता है।

दूसरी औरत

सऊदा बिंते जमआ के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है। यद्यपि अल-तबरी के अनुसार वह मुहम्मद की दूसरी बीवी थी। कुछ इतिहासकार मुहम्मद की शादियों के क्रम पर सहमत नहीं हैं, क्योंकि उनका मानना है कि आयशा मुहम्मद की दूसरी बीवी थी। जो भी है, पर सभी इतिहासकार इस पर सहमत हैं कि मुहम्मद ने सऊदा के साथ यौन संबंध आयशा से पहले स्थापित किये, क्योंकि शादी के समय आयशा आयु में इतनी छोटी थी कि उससे यौन संबंध बनाना संभव नहीं था।[10] सऊदा एक लंबी और काले रंग की विधवा थी जिससे मुहम्मद ने शादी करने को कहा। सऊदा सहमत हो गयी और दोनों ने अप्रैल या मई 620 ईसवी में शादी कर ली। यह स्पष्ट नहीं है कि मुहम्मद ने सऊदा से शादी क्यों की, जबकि बुख़ारी के अनुसार वह न तो युवा थी और न ही सुंदर।[11] मुहम्मद संभवत: इससे प्रभावित था कि कितने कष्ट सहकर भी उसने इस्लाम स्वीकार किया और

उसे 'पुरस्कार' देना चाहता था। जो भी हो, निश्चित ही यदि आपकी बीवी मर गयी है तो किसी दूसरी औरत से शादी करने में कुछ भी ग़लत नहीं है। पर इसका दुखद अंश यह है कि बाद में मुहम्मद ने सऊदा में रुचि लेना बंद कर दिया और आयशा पर अधिक ध्यान देते हुए उसकी उपेक्षा हुई।[12]

तीसरी औरत

ऐसा लगता है कि ख़दीजा की मृत्यु के बाद यथासंभव अधिक से अधिक औरतों से शादी करना मुहम्मद का अभियान बन गया था। 620 ईसवी में सऊदा से शादी करने के बाद उसने इसी वर्ष उसी समय आयशा बिंते—अबू बक्र से शादी की। (शादी के समय आयशा की आयु मात्र 6 वर्ष थी।) यद्यपि जब तक आयशा 9 वर्ष की नहीं हो गयी अर्थात 623 ईसवी तक उसके साथ यौन संबंध नहीं बना। आयशा मुहम्मद के प्रिय मित्र अबू बक्र की बेटी थी। मुहम्मद अबू बक्र को प्राय: अपना भाई कहता था। कुछ विद्वान इस तथ्य से इतने परेशान हो उठते हैं कि वे अस्वीकार करते हैं कि जब मुहम्मद आयशा के साथ सोया तो उसकी आयु उस समय 9 वर्ष थी। किंतु इसके लिये प्रचुर संख्या में ऐसी पवित्र हदीसें हैं जिसे मुसलमान स्वीकार करते हैं, जैसे कि निम्नलिखित:

> रसूल के मदीना जाने के तीन वर्ष पूर्व ही ख़दीजा की मृत्यु हो गयी थी। इसके बाद वो लगभग दो वर्ष तक वहां रहे और तब उन्होंने आयशा से शादी की। शादी के समय आयशा 6 वर्ष की एक बच्ची थी और जब वह 9 वर्ष की थी तो उन्होंने उसके साथ सुहागरात मनायी।[13]
>
> आयशा ने बताया, रसूल ने उससे तब शादी की जब उसकी अवस्था 6 वर्ष की थी और उन्होंने सुहागरात तब मनायी जब वह 9 वर्ष की थी तथा तब से वह उनके साथ 9 वर्षों तक (उनकी मृत्यु तक) रही।[14]
>
> आयशा ने बताया, मैं रसूल के सामने गुड़ियों के साथ खेला करती थी और साथ की अन्य लड़कियां भी मेरे संग खेलती थीं। जब अल्लाह के रसूल (मेरे निवास स्थान) में प्रवेश करते थे तो वे छिप जाती थीं, पर रसूल उनको बुलाते और मेरे संग

> खेलने को कहते। (इस्लाम में गुड़िया और इस प्रकार के चित्रों के साथ खेलना निषिद्ध है) पर उस समय आयशा के लिये इसकी छूट थी, क्योंकि वह एक छोटी बच्ची थी और माहवारी की आयु 15 वर्ष तक नहीं पहुंची थी।[15]

यह सुहागरात कैसे मनायी गयी, इस बारे में अल-तबरी में विस्तार से वर्णन है।

जब एक पेड़ की दो शाखाओं के बीच पर पड़े झूले पर मैं झूल रही थी तो अम्मी मेरे पास आयीं और मुझे नीचे उतारा। मेरी परिचारिका जुमैमह साथ ले गयी और पानी से मेरा मुंह धोया और अपने साथ ले जाने लगी। जब मैं द्वार पर थी तो वह रुक गयी जिससे कि मैं थोड़ी सांस ले सकूं। मैं अपने घर के भीतर लायी गयी जहां अल्लाह के रसूल बिछौने पर बैठे हुए थे। (मेरी अम्मी, ने 'मुझे उनकी गोद में बिठा दिया और बोली, 'ये आपके रिश्तेदार हैं। अल्लाह आपको उनकी सोहबत की कृपा दे और उनको आपकी सोहबत की कृपा दे! तब आदमी और औरत उठे और चले गये। अल्लाह के रसूल ने घर में मेरे साथ उस समय सुहागरात मनायी जब मैं 9 वर्ष की थी।

मैं वह लड़की होने की कल्पना भी नहीं कर सकता, क्या कोई कल्पना कर सकता है कि वह एक 53 वर्षीय व्यक्ति को अपने घर आने देगा और उसे अपनी 9 वर्ष की बेटी के साथ यौन संबंध बनाने देगा?

कुछ मुसलमान इस हदीस को विवादित बताते हैं, जबकि बहुत से मुसलमानों को सही बुख़ारी, सही मुस्लिम, अबू दाऊद, अल-नसअई आदि विश्वसनीय स्रोतों से यह हदीस प्रिय है। यद्यपि जब उन विषयों की बात आती है जिनमें कोई विवाद नहीं है तो वे इन्हीं स्रोतों को पूर्णत: स्वीकार करते हैं।

मेरा मानना है कि यह उन मुसलमानों व मुस्लिम विद्वानों का कोरा पाखंड है, क्योंकि किसी के मन में यह संशय नहीं होना चाहिये कि जब मुहम्मद ने आयशा से शादी की तो उसकी आयु केवल 6 वर्ष थी और जब वह उसके साथ सोया तो उस समय उसकी आयु 9 वर्ष थी। आज के संसार में यह कृत्य और कुछ नहीं, केवल घृणास्पद और जेल जाने योग्य अपराध के रूप में देखा जायेगा। आयशा मुहम्मद की मृत्यु तक उसके साथ शादीशुदा रही। जब मुहम्मद मरा तो आयशा की आयु 18 वर्ष थी।

चौथी औरत

आयशा के साथ शादी के दो वर्ष बाद जनवरी या फ़रवरी 625

ईसवी में मुहम्मद अपने दूसरे सबसे अच्छे मित्र उमर की बेटी हफ़्सा बिंते–उमर से शादी करने चला गया। हफ़्सा को कुरआन कंठस्थ करने का श्रेय दिया जाता है, जिसे बाद में जब उस्मान ख़लीफ़ा बना, पुस्तक का रूप दिया गया।[17] नवंबर 665 ईसवी में हफ़्सा परलोक सिधार गयी।[18]

पांचवीं औरत

मुहम्मद की पांचवीं बीवी ज़ैनब बिंते–खुज़ैमह थी, जिसे निर्धनों की अम्मी के रूप में भी जाना जाता है। मुहम्मद ने उसके साथ फ़रवरी 625 ईसवी में शादी की थी। 624 में बद्र की जंग में ज़ैनब के पति की मृत्यु हो गयी थी। ज़ैनब के बारे में बहुत अधिक ज्ञात नहीं हैं, क्योंकि मुहम्मद से शादी के कुछ ही दिन बाद उनकी भी मृत्यु हो गयी। उसने एक बार एक भिखारी को अपने पास रखे आटे के अंतिम भाग को भी दे दिया और उस रात वो भूखी सोयी, जिसके बाद उसका नाम 'निर्धनों की अम्मी' पड़ा।[19] मुहम्मद उसकी उदारता देखकर प्रभावित हुआ और शीघ्र ही उनसे शादी कर ली। 625 या 627 ईसवी में ज़ैनब की मृत्यु हो गयी।

छठी औरत

ज़ैनब से शादी के बाद मुहम्मद ने हिंदा बिंते–अबी उमय्यह से अप्रैल 626 ईसवी में शादी की। ज़ैनब की मृत्यु के बाद भी मुहम्मद की इस हवस में कमी होती नहीं दिखी। हिंदा एक सुंदर विधवा थीं और उनके चार बच्चे थे। उनके पति 625 ईसवी में उहुद की जंग में मारे गये थे। उनके पति की मृत्यु के बाद उमर और अबू बक्र दोनों ने उनसे शादी का प्रस्ताव रखा था, किंतु उन्होंने यह कहते हुए प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था कि वो एक सम्मानित व वांछित महिला हैं। जब मुहम्मद ने उनसे शादी का प्रस्ताव दिया तो उन्होंने संकोच किया और बोलीं कि उसके पास दूसरी बीवियां भी हैं तो उन्हें इससे ईर्ष्या हो सकती है। मुहम्मद किसी प्रकार उन्हें शादी के लिये मनाने में सफल रहा और उन्होंने 626 ईसवी में शादी कर ली।

शिया मान्यता के अनुसार हिंदा ख़दीज़ा के बाद मुहम्मद के बाद सबसे महत्वपूर्ण बीवी मानी जाती है।[21] हिंदा की मृत्यु की वास्तविक तिथि पर विवाद है, यद्यपि इस बारे में जो सटीक अनुमान हम लगा सकते हैं उसके अनुसार उसकी मृत्यु 686 ईसवी में 85 वर्ष की आयु में हुई। वो मुहम्मद की सबसे अधिक जीवित रहने वाली बीवियों में से एक थी।

सातवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में सातवीं औरत ग़ाज़िया बिंते—जाबिर थी। ग़ाज़िया एक विधवा औरत थी और उसके एक बेटा शारिक़ था। उसने मुहम्मद को शादी का प्रस्ताव दिया जिसे उसने 626 के आरंभ में स्वीकार कर लिया। यद्यपि जब मुहम्मद ने उसे देखा तो उसे लगा कि वह अधिक आयु की है तो उसने तुरंत ही उसे तलाक़ दे दिया। इसके बाद ग़ाज़िया ने कभी दोबारा शादी नहीं की।[22]

आठवीं औरत

यह मुहम्मद की शादियों में सबसे अधिक विवादित है। ज़ैनब बिंते—जाहश की शादी मुहम्मद के दत्तक पुत्र ज़ैद बिंते हारिस से हुई थी। आइये, अल-तबरी द्वारा अंकित इस घटना को देखते हैं:

एक दिन अल्लाह के रसूल ज़ैद को ढूंढ़ते हुए निकले। वैसे तो द्वार पर बुक़रम का पर्दा लगा हुआ था, पर हवा चलने के कारण वह पर्दा उठ गया था तो द्वार के भीतर दिख रहा था। ज़ैनब अपने कक्ष में बिना वस्त्रों के थी। यह देखकर रसूल के मन में उसका सौंदर्य समा गया। यह घटना होने के बाद उसे अन्य पुरुषों के लिये अनाकर्षित घोषित कर दिया गया।[23]

ज़ैनब को अर्द्धनग्न देखने के बाद ज़ैनब ने सुना कि मुहम्मद बड़बड़ा रहा है, अल्लाह की महिमा, वो ह्रदय परिवर्तन करता है।[24]

यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि ज़ैनब को उसके शौहर की अनुपस्थिति में अर्द्धनग्न देखने के बाद मुहम्मद को वह अत्यंत आकर्षक लगी। परिणाम यह हुआ एक अच्छे बेटे के रूप में ज़ैद मुहम्मद के सामने आया और बोला यदि वह उसको अच्छी लगती है तो वो उसे तलाक़ दे देगा। मुहम्मद ने उससे कहा, 'अपनी बीवी रखो।'[25]

स्पष्ट है कि मुहम्मद यही कह रहा था कि उसे उसकी बीवी अच्छी लगी- 'पर उसे मुझे देने के बारे में सोचकर दुखी मत हो।'

जैसा कि पहले की घटनाओं में हुआ था, सुविधाजनक ढंग से एक आयत आयी।

> (हे नबी!) तो जब ज़ैद ने उससे अपनी आवश्यकता पूरी कर ली और अब उसे उसकी आवश्यकता नहीं रह गयी तो हमने उसकी शादी तुमसे कर दी, जिससे कि मोमिनों पर दत्तक बेटों की बीवियों को लेकर कोई समस्या न रहे जब उन बेटों को उनकी बीबियों की आवश्यकता न रह जाये। और अल्लाह का आदेश पूरा होना ही है। (कुरआन 33:37)[26]

यह ध्यान देने योग्य है कि किस प्रकार इस्लाम में एक महिला को निरंतर एक वस्तु के रूप में देखा जाता है। यह आयत कह रही है कि यदि दत्तक पुत्र को अपनी बीवियों की आवश्यकता न हो तो वे उन्हें अपने बापों को दे दें। यह कुछ वैसा ही कहना है कि 'मुझे इस अब इस जूते की आवश्यकता नहीं रही तो तुम इसे पहन सकते हो!'

इसी के समान एक और आयत (कुरआन 33:51) है जिसमें अल्लाह मुहम्मद को कहता है कि जिस भी औरत के साथ सोने में उसे आनंद मिले, उसके साथ वह सो सकता है, आयशा ने एक बार टिप्पणी की:

मुझे लगता है कि तुम्हारा अल्लाह तुम्हारी इच्छाओं और वासनाओं को पूरा करने की शीघ्रता में रहता है।[27]

मुहम्मद की वासना को पूरा करने के लिये अल्लाह की अनुमति आयी और मुहम्मद ने 627 ईसवी में ज़ैनब से शादी कर ली।

अत: नीचे इस पूरे घटनाक्रम का गंभीर विश्लेषण है:

1. मुहम्मद अपने बेटे की बीवी को देखता है और उस पर आकर्षित हो जाता है।
2. वह जानता है कि लोग इस कुकृत्य को स्वीकार नहीं करेंगे तो वह एक आयत गढ़ता है जिससे कि बेटे की बीवी से शादी करना उचित ठहराया जा सके। इस प्रकार मुहम्मद ने दत्तक ग्रहण की उस पूरी संस्था को क्षति पहुंचार्य जिसने हज़ारों वर्षों से मानवता की सहायता की है।

ये पूरा प्रकरण मुसलमानों के लिये लज्जित करने वाला है। अधिकांश मुसलमान इस घटना से अवगत नहीं हैं, किंतु विद्वान मुहम्मद के इस घटिया कुकृत्य पर भांति-भांति के बहाने बनाते हैं। ऐसा ही एक बहाना यह है कि मुहम्मद को यह बताना था कि दत्तक पुत्र वास्तविक पुत्र के जैसे नहीं होते हैं, अत: उनकी बीवियां तुम्हारी पतोहू नहीं हुईं। यदि आप कुछ बताना चाहते हैं तो बस बता दीजिये न, बताने के लिये स्वयं को पुरस्कृत करना और उनके साथ कामक्रीड़ा क्यों करना? क्यों मुहम्मद ने केवल इतना ही नहीं कहा, 'तुम्हारे दत्तक पुत्र वास्तविक पुत्र नहीं होते हैं?'

नौवीं औरत

ज़ैनब के साथ मुहम्मद की शादी के बाद परिस्थितियां परिवर्तित हुईं और वह और निर्लज्ज हो गया। कदाचित यह समझने के बाद कि आयत गढ़कर वह किसी

भी समस्या से छुटकारा पा सकता है, लगभग बिना किसी विरोध के आयतें गढ़ने लगा। ज़ैनब से शादी से दो माह बाद ही वह अपने जीवन में एक और औरत रेहाना बिंते–इब्ने–अम्र को ले आया। रेहाना की कहानी बहुत दुखद है। मुहम्मद ने उसकी पूरी जनजाति बनू कुरैजा का नरसंहार कर दिया था। बनू कुरैजा को जीतने के बाद उसने 14 वर्ष से ऊपर के छह सौ से नौ सौ पुरुषों का सिर कटवा दिया। हत्या का पैमाना यह था कि जिसके भी निजी अंगों पर केश उग आये हैं उसे बालक की अपेक्षा पुरुष माना जाये और उसका सिर काट लिया जाये। कुरैजा पर हमला करने के कारणों पर ध्यान दिये बिना हम मुहम्मद की क्रूरता व यौन-दासी बनाने के उसके समर्थन पर ध्यान केंद्रित करेंगे। क्या हुआ, निम्नलिखित है।

1. मुहम्मद एक क़बीले को जीतता है।
2. मुहम्मद उनकी औरतों को यौन-दासी बनाकर अपने लिये और अपने मित्रों के लिये उठा लाता है।

जैसे कि आजकल आईएसआईएस करता है। रेहाना के पति का सिर काटने के बाद मुहम्मद दयावान ने उसे शादी का प्रस्ताव दिया जिसे उसने अपने मारे गये पति के सम्मान में ठुकरा दिया। तो मुहम्मद ने उसे अपनी यौन-दासी (सैक्स स्लेव) बनाकर रखा। रेहाना युवा व सुंदर थी। मुहम्मद अपने शिकार के साथ शादी करने की मंशा में तनिक भी नर्म नहीं हुआ। अंततः रेहाना ने यौन-दासी बनकर रहने को अपनी नियति मानकर सारी आशा छोड़ दी। निश्चित रूप से मुहम्मद की बीवियों में से एक बनकर रहने की अपेक्षा सैक्स-स्लेव बनकर रहना अधिक कठिन था।[28] यह स्पष्ट नहीं है कि उन्होंने कभी शादी की या नहीं, यद्यपि यह स्पष्ट है कि कुरैजा की जीत के बाद मुहम्मद ने रेहाना को अपनी सैक्स-स्लेव बनाकर रखा था। चूंकि अल्लाह ने सैक्स-स्लेव अर्थात यौन दासी के साथ सोना वैध किया तो यह मानना विश्वसनीय है कि मुहम्मद ने उसे इस आयत के अनुसार सैक्स-स्लेव बनाकर रखा:

> तथा उन औरतों से यौन संबंध (वर्जित है), जो दूसरों के साथ शादी में हों, परन्तु तुम्हारी दासियां जो (जंग में) तुम्हारे हाथ आयी हों उन्हें भोग कर सकते हो। (ये) तुम पर अल्लाह ने लिख दिया है। और इनके अतिरिक्त (दूसरी औरतें) तुम्हारे लिए हलाल (उचित) कर दी गयी हैं। (प्रतिबंध ये है कि) अपने धनों

द्वारा व्यभिचार से सुरक्षित रहने के लिए शादी करो। फिर उनमें से जिससे लाभ उठाओ, उन्हें उनका महर (शादी उपहार) अवश्य चुका दो तथा महर (शादी उपहार) निर्धारित करने के पश्चात् (यदि) आपस की सहमति से (कोई कमी या अधिकता कर लो), तो तुम पर कोई दोष नहीं। (क़ुरआन 4:24)

उपरोक्त आयत के आलोक में निम्नलिखित हदीस पर विचार करिये:

अबू सईद अल-ख़ुद्री (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने लिखा, 'हमने औरतों को बंदी बनाया और हम उनके साथ' व्याहत् मैथुन अर्थात अज़्ल (मैथुन के समय वीर्यपात होने से ठीक पहले लिंग को औरत के यौनांग से बाहर निकाल लेना, करना चाहते थे। हमने तब अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) से इस बारे में पूछा तो उन्होंने हमसे कहा, 'सचमुच ऐसा करो, सचमुच ऐसा करो, क्योंकि क़यामत के दिन तक जिस भी रूह को जन्म लेना है, वह जन्म लेगा ही।'

इस हदीस से यह स्पष्ट है कि इस दयावान रसूल की दृष्टि में दासियों के साथ यौनाचार करने में कुछ ग़लत नहीं है। यह केवल यही नहीं दर्शाता है कि बलपूर्वक दासी बनाकर रखी गयी औरतों के साथ यौनाचार करना ठीक है, वरन् यह भी बताता है कि मुहम्मद को वर्णसंकर (दोगले) बच्चे होने से भी कोई समस्या नहीं थी।

सलमह (बनू 'अल-अक्वा', के हवाले से यह बताया गया है, जिसने कहा, 'हम फ़ज़रज़ जनजाति से लड़ रहे थे और अबू बक्र हमारा कमांडर था। वह अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) द्वारा नियुक्त किया गया था। जब हम शत्रु के जलस्रोतों से एक घंटे की दूरी पर थे तो अबू बक्र ने हमें हमला करने का आदेश दिया। हम रात के अंतिम पहर तक रुके रहे और फिर चारों ओर से हमला बोल दिया तथा उस स्थान पर उनके जलस्रोतों तक पहुंच गये जहां जंग लड़ी जा रही थी। कुछ शत्रुओं को मार डाला गया और कुछ को बंदी बना लिया गया। मैंने कुछ लोगों के एक समूह को देखा जिसमें औरतें व बच्चे थे। मुझे भय था कि वे लोग कहीं मुझसे पहले ही पहाड़ पर न पहुंच जायें तो मैंने उनके और पहाड़ के बीच में एक तीर छोड़ा। जब उन्होंने वह तीर देखा तो रुक गये। फिर मैं उनको ले आया और अपने साथ हांकने लगा। उनमें बनू फ़ज़रज़ जनजाति की एक महिला थी। वो चमड़े का कोट पहने हुए थी। उसके साथ उसकी बेटी थी जो अरब की सबसे सुंदर लड़कियों में से एक थी। मैं उनको तब तक हांकता रहा, जब तक कि अबू बक्र

के पास नहीं पहुंच गया। अबू बक्र ने उस लड़की को मुझे पुरस्कार स्वरूप दे दिया। अब हम मदीना पहुंचे। मैंने अभी तक एकांत में उस लड़की को नंगा नहीं किया था। तभी अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) गली में मिले और बोले, 'हे सलमह, वो लड़की मुझे दे दो।' मैंने कहा, 'हे अल्लाह के रसूल, वो लड़की मेरे मन में बस गयी है। यद्यपि मैंने अभी तक उसका शरीर नंगा नहीं देखा है।' अगले दिन जब अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) गली में मुझसे पुनः मिले तो बोले, 'हे सलमह, वो लड़की मुझे दे दो। अल्लाह तुम्हारे जैसी संतान उत्पन्न करने वाले बाप को प्रगति दे।'

मैंने कहा, 'वो आपके लिये है। अल्लाह के रसूल! अल्लाह की क़सम, मैंने अभी तक उसके वस्त्र नहीं उतारे हैं।' अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) ने उस लड़की को मक्का के लोगों के पास भेजकर उसे उन मुसलमानों के बदले फ़िरौती के रूप में दे दिया जो मक्का में बंदी बनाकर रखे गये थे।'[30]

इस युवा लड़की के बारे में कहीं कोई और उल्लेख नहीं है। यह दर्शाता है कि इस्लाम में दासी लड़कियों के साथ क्या व्यवहार होता है और और दयावान मुहम्मद द्वारा दासी लड़कियों से कैसा दुर्व्यवहार किया जाता था। इस्लाम में आप किसी महिला का लेन-देन ऐसे कर सकते हैं, जैसे कि वह कोई वस्तु हो।

दसवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में दसवी औरत जुवैरिया बिंते अल-हारिस थीं। जुवैरिया को भी जंग में बंदी बनाया गया था और वो उस समय केवल 20 वर्ष की थीं जब मुहम्मद ने उनकी जनजाति बनू मुस्तलिक़ को जीता। लूट के माल के रूप में दो सौ परिवारों को बंदी बनाया गया और उनके साथ दो सौ ऊंट, पांच सौ भेंड़ें व बकरियां तथा बड़ी मात्रा में घर की वस्तुएं उठा लायी गयीं। घर की वस्तुओं को नीलामी में सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को बेचा गया।[31] पहले जैसे ही मुहम्मद की ओर से सारे बंदियों को कहा गया कि या तो वे इस्लाम स्वीकार करें 31, या दास (गुलाम) बनकर रहें। जुवैरिया जिनमें मुहम्मद विशेष रुचि ले रहा था, उससे शादी को तैयार हो गयीं, पर उन्होंने शर्त रखी कि इसके बदले 100 बंदियों को मुक्त करना होगा। मुहम्मद तैयार हो गया और उन्होंने 628 ईसवी में शादी कर ली।[32]

ग्यारहवीं औरत

यह मुहम्मद के लिये बड़ी जीत थी, क्योंकि रमलह बिंते अबू सूफ़ियान

उसके बड़े शत्रु अबू सूफ़ियान की बेटी थी। वह मुहम्मद से प्रभावित थी और उससे शादी करना चाहती थी। दोनों ने जुलाई 628 ईसवी में शादी कर ली। अपने शत्रु की बेटी से शादी करना राजनीतिक रूप से बड़ा क़दम था। वह मुहम्मद की मृत्यु तक उसके प्रति निष्ठावान बनी रही। रमलह 664 ईसवीं में मर गयी।

बारहवी औरत

सफ़िया बिंते हुयैय मुहम्मद के जीवन में बारहवीं औरत थी और उसकी कहानी भी अत्यंत दुखभरी है। सफ़िया अरब की अंतिम यहूदी जनजाति से थी और जनजाति के मुखिया हुयैय इब्ने–अख़्तब की बेटी थी। मुहम्मद ने जब 628 ईसवी में ख़ैबर में उसकी जनजाति को पराजित किया तो उसने उसके पति किनाना को यातना देने का आदेश दिया जिससे कि बनू अल-नज़्र की निधि (ख़ज़ाने) की जानकारी निकाल सके।

जब मुहम्मद को लगा कि वह उसके किसी काम का नहीं है तो उसने उसे मुहम्मद बिन मसलमह को सौंप दिया, जिसने अपने भाई का प्रतिशोध लेते हुए किनाना का सिर धड़ से पृथक कर दिया।[33] मुहम्मद ने जुवैरिया के पति को ही नहीं मारा, वरन् उसके पिता और भाई की भी हत्या कर दी।[34] मैं यह प्रश्न नहीं कर रहा हूं कि किनाना की हत्या करने में मुहम्मद सही था या ग़लत, क्योंकि मैं सुनिश्चित हूं कि किनाना ने भी मुहम्मद के साथ यही किया होता। यहां जो समझने वाली महत्वपूर्ण बात है, वह है सफ़िया की दुर्दशा। मुहम्मद के अंगरक्षक भी जानते थे कि मुहम्मद का यह काम घृणित था और यह औरत मुहम्मद को क्षति पहुंचाने का प्रयास कर सकती है।

मुहम्मद जब सफ़िया के साथ सो रहा था तो अबू अयूब रात भर द्वार पर पहरा देता रहा। जब उसने प्रातःकाल रसूल को देखा तो उसने कहा, 'अल्लाह महानतम है।' उसके हाथ में तलवार थी। उसने रसूल से कहा, 'हे अल्लाह के रसूल, इस युवा औरत से तुरंत-तुरंत शादी की गयी है और आपने उसके पिता, पति और भाई को मार डाला है, इसलिये मुझे उस पर विश्वास नहीं था (कि वह आपको क्षति नहीं पहुंचायेगी।' मुहम्मद हंसा और बोला, 'अच्छा'।[34]

आज के समय में यह लगभग कल्पना से परे है कि कोई महिला किसी ऐसे पुरुष से विवाह करेगी जिसने उसके पूरे परिवार की हत्या कर दी हो और उसके नगर पर बलपूर्वक अधिकार कर लिया हो, पर जो भी हो, मुहम्मद ने उससे जुलाई

628 ईसवी में शादी कर ली और संभवत: बलपूर्वक। आईएसआईएस नियंत्रित क्षेत्रों में यही हो रहा है: सुबह पिता और पति की हत्या करो और शाम को जीती गयी महिलाओं से शादी कर लो या उन्हें सैक्स-स्लेव बना लो- और मुसलमान कहते हैं कि आईएसआईएस इस्लाम नहीं है!

तेरहवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में तेरहवीं औरत मैमुना बिंते हल-हारिस थी। चूंकि मुहम्मद की औरतों को जीतने की वासना कम नहीं हो रही थी तो इस शादी के बारे में कोई अधिक विवाद नहीं हुआ। उन्होंने 629 ईसवी में शादी की और मैमुना की मृत्यु 680 या 681 ईसवी में हुई।[35]

चौदहवीं औरत

मारिया बिंते-शामूल अक्का मारिया अल-किबतिया मिस्र के ईसाई शासक मुक़ावकिस की एक कोप्टिक दासी थी, जिसे 628 ईसवी में उसने उसकी बहन साइरेन व एक हज़ार स्वर्णमुद्राओं के साथ मुहम्मद को उपहार में दे दिया।[36] मुहम्मद ने अपनी बीवियों के विरोध के बाद भी इसे कुछ वर्षों तक अपनी रखैल बनाकर रखा।

रेहाना के बाद वह कम से कम मुहम्मद की दूसरी सैक्स-स्लेव (यौन दासी) तो थी ही। मुहम्मद इस गोरी और सुंदर मारिया का प्रशंसक था और आदेश दिया कि वह अपने को पूर्णत: ढंककर रखे, किंतु उसने उसके साथ मैथुन भी किया, क्योंकि वह उसकी संपत्ति थी। यह स्पष्ट नहीं है कि मुहम्मद ने उससे सीधे शादी क्यों नहीं की अथवा कभी ऐसा करने का प्रयास क्यों नहीं किया।[37] जो यह तर्क देते हैं कि मुहम्मद ने संभवत: बाद के वर्षों में मारिया से शादी कर ली थी, उनके पास इसका उत्तर नहीं है कि मुहम्मद की अन्य बीवियों के जैसे मारिया को मोमिनों की उम्मे (अम्मी) की प्रस्थिति (दर्जा) क्यों नहीं प्रदान की गयी। क्यों केवल उसे उम्मे इब्राहीम कहा गया। यह दर्शाता है कि मुहम्मद ने उससे शादी नहीं की थी और उसके साथ यौन दासी का व्यवहार कर रहा था। मुहम्मद की मृत्यु के बाद 637 ईसवीं में मारिया परलोक सिधार गयी।

यद्यपि अन्य स्रोत मारिया का एक भिन्न व अपवाद कांड दिखाते हैं। तफ़्सीर अल-जलालैन के अनुसार मुहम्मद अपनी बीवी हफ़्सा से मिलने गया था तो उसकी दृष्टि मारिया अल-किबतिया पर पड़ गयी। मुहम्मद उसकी सुंदरता में खो गया और

उसने हफ़्सा से कहा कि उसके पिता उमर ने उसे बुलाया है। जब हफ़्सा अपने पिता से मिलने उनके पास पहुंची तो उसे पता चला कि उन्होंने उसे नहीं बुलाया था तो वह भागी-भागी अपने घर आयी और वहां मुहम्मद मारिया के साथ बिछौने पर कामक्रीड़ा में रत था। हफ़्सा क्रोध में जल उठी और चीखने लगी। मुहम्मद ने उसे चुप रहने को कहा। मुहम्मद के लिये तब और संकट हो गया जब हफ़्सा ने यह कांड आयशा को बताया और इससे मुहम्मद इतना आगबबूला हुआ कि उसने कहा कि वह एक माह तक अपनी बीवियों के पास नहीं जायेगा। पहले के जैसा ही अल्लाह पुनः उसके बचाव में आ गया और उसकी सुविधा के लिये एक आयत दे दी:

> हे नबी! क्यों हराम (अवैध) करते हो तुम उसे, जिसे अल्लाह ने तुम्हारे लिये हलाल (वैध) बनाया है? तुम भला इसके लिये अपनी बीवियों से अनुमति चाहते हो? तथा अल्लाह क्षमाशील, दयावान् है। (कुरआन 66:1)

कुछ मुस्लिम विद्वान दावा करते हैं कि यह आयत मारिया के बारे में नहीं था, अपितु यह मुहम्मद के शहद ख़ाने की आदत के बारे में था, क्योंकि शहद ख़ाने से उसके मुंह से दुर्गंध आती थी। यह बहाना अत्यंत अविश्वसनीय प्रतीत होता है, क्योंकि दुर्गंध जैसी समस्या इतनी तुच्छ है कि अल्लाह इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगा। इसके अतिरिक्त आप शहद के लिये वैध (जायज) शब्द का प्रयोग नहीं करेंगे। मुहम्मद ने मारिया के साथ मैथुन को उचित ठहराने के लिये इस आयत का उपयोग किया। हफ़्सा व आयशा का मुंह बंद रखने के लिये अगली आयत में उनके लिये और भी धमकी आयी:

> यदि तुम दोनों (बीवियां) अल्लाह के सम्मुख पश्चाताप करो, तो तुम्हारे लिए उत्तम है, क्योंकि तुम दोनों का मन विकृत हो गया है। परंतु यदि तुम दोनों उसके (रसूल) विरुद्ध एक-दूसरे की सहायता करोगी (अर्थात मिलकर खिचड़ी पकाओगी) तो जान लो अल्लाह उसकी रक्षा करने वाला है तथा जिब्रील और सदाचारी मोमिन व फ़रिश्ते (भी) उसके सहायक हैं। (कुरआन 66:4)

कोई भी देख सकता है कि कितनी तत्परता से अल्लाह मुहम्मद के कामुक जीवन में संलिप्त हो जाता है। निश्चित ही अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अमरीका में लोग मर रहे थे, कष्ट में जी रहे थे, किंतु अरबों आकाशगंगाओं के

रचयिता को मुहम्मद का अपनी बीवियों के साथ यौन-व्यवहार की व्याख्या करने में रुचि थी।

जो यह दावा करते हैं कि मारिया मुहम्मद की बीवी थी, उनके दावे के विपरीत और भी ऐसे स्रोत हैं जो इसकी पुष्टि करते हैं कि मारिया मुहम्मद की रखैल थी। जो भी हो, परंतु आज के नैतिक स्वच्छंद मानकों में भी यह आचरण उचित नहीं है। आगे तीन शादियां 627 से 629 ईसवी के बीच हुईं जिनकी तिथियां स्पष्ट नहीं हैं।

पंद्रहवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में पंद्रहवी औरत ख़ऊला बिंते-हुजा थी और इन दोनों ने 627 या 629 ईसवी में शादी की। यद्यपि सुहागरात मनाने से पूर्व ही ख़ऊला की मृत्यु हो गयी।[38]

सोलहवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में सोलहवीं औरत शरफ़ बिंते-ख़लीफ़ा थी। शादी के बाद इसकी भी मुत्यु सुहागरात मनाने से पहले ही हो गयी।[39]

सत्रहवीं औरत

अगली औरत सना अल-नशत बिंते-रिफ़ा (अस्मा) थी और वह शादी की सुहागरात मना पाती कि इससे पहले ही उसकी भी मृत्यु हो गयी।[40]

अठाहरवीं औरत

जंदआ की बिंते-जुन्दुब इब्ने-जमरा के बारे में अधिक ज्ञात नहीं है। बस यह तथ्य ज्ञात है कि मुहम्मद ने उससे शादी की, किंतु शीघ्र ही तलाक़ दे दिया। हमें नहीं पता कि दोनों ने शादी के बाद यौन संबंध बनाये या नहीं।[41]

उन्नीसवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में अगली औरत मुलयका बिंते-काब थी। इन दोनों ने 630 ईसवीं में शादी की। यह औरत अपनी मृत्यु तक शादीशुदा रही।[42]

बीसवीं औरत

मुहम्मद ने फ़ातिमा अल-आलिया से मार्च 630 ईसवी में शादी की। मुहम्मद की बीवियों ने उसको बताया कि वह औरत मस्जिद में झांककर मर्दों को देखती है। पहले तो मुहम्मद को इस पर विश्वास नहीं हुआ, पर जब उन बीवियों ने उसे ऐसा करते दिखाया तो उसने तुरंत उसे तलाक़ दे दिया[43]

इक्कीसवीं औरत

मुहम्मद के जीवन में अगली औरत अस्मा बिंते-अल-नुमान थी और इन दोनों ने जुलाई 630 ईसवी में शादी की। मुहम्मद ने अस्मा को तब तलाक़ दे दिया जब एक औरत ने यह कहते हुए उसे फंसा दिया कि वह कह रही थी, 'मैं चाहती हूं कि ईश्वर तुमसे (मुहम्मद से) मेरी रक्षा करे।'[44]

बाइसवीं औरत

बाइसवीं औरत अम्रा बिंते-यज़ीद थी और मुहम्मद ने उससे 631 ईसवी में शादी की। किंतु जब पता चला कि इस औरत को कुष्ठ रोग है तो उसने सुहागरात मनाने से पूर्व ही उसे तलाक़ दे दिया।[45] कितनी विचित्र बात है न कि मुहम्मद ने उस औरत को ठीक करने के लिये अल्लाह के पास अपनी विशेष हॉटलाइन का प्रयोग नहीं किया।[45]

तेइसवीं औरत

मुहम्मद से 632 ईसवी में शादी करने वाली अगली औरत थी अल-शन्बह बिंते-अम्र। मुहम्मद का बेटा इब्राहीम मर गया तो जब वह घर में आयी तो टिप्पणी की, 'यदि मुहम्मद अल्लाह का रसूल होता तो वह व्यक्ति तो न मरा होता जो उसे सबसे प्रिय था।' मुहम्मद ने इस टिप्पणी के लिये तलाक़ दे दिया।[46] यदि आप इस बारे में सोचें तो पायेंगे कि यह टिप्पणी ठीक ही थी।

चौबीसवीं औरत

मुहम्मद ने 632 ईसवी में कुतैला (हब्ला) बिंते-क़ैस से शादी की, किंतु वो मदीना पहुंचती, इससे पहले ही मुहम्मद मर गया। इसके बाद कुतैला ने इस्लाम छोड़ दिया और एक अरबी मुखिया से शादी कर ली।[47]

कम से कम दो और रखैलें थी जिनके बारे में कहा जाता है कि मुहम्मद ने उन्हें रखा था।

किंतु विश्वसनीय साक्ष्यों के अभाव के कारण मैं उन पर बात नहीं करूंगा। हम देख सकते हैं कि जैसे-जैसे मुहम्मद प्रभावशाली होता गया, उसकी औरतख़ोरी की प्रवृत्ति बढ़ने लगी। जब वह एक साधारण मनुष्य था तो उसने केवल एक बीवी से काम चलाया, परंतु जीवन के अंतिम वर्षों में जैसे-जैसे उसके अनुयायियों की संख्या बढ़ी, उसकी बीवियों की संख्या भी बढ़ी। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि स्वयं को रसूल होने का दावा करने के पीछे मुहम्मद की अपनी व्यक्तिगत

महत्वाकांक्षाएं थीं। 626 ईसवी के बाद 632 ईसवी में अपनी मृत्यु तक उसने सत्रह और बीवियां रख लीं औसत निकालें तो मुहम्मद प्रतिवर्ष 2.83 नयी औरतों को अपने हरम में ले आया। यह सुनकर तो प्लेबॉय पत्रिका का संपादक हफ़ हेफ़नर भी शरमा जाये।

अत्याचारी

मुहम्मद एक सिपहसालार और सुल्तान जैसा व्यवहार करता था जिसने उसे नहीं माना उसे मरना पड़ा। यद्यपि कुरआन में ऐसी कोई आयत नहीं है जो इस्लाम छोड़ने वाले को मुत्युदंड देने को कहती हो, किंतु ऐसी अनेक हदीसें हैं जो यह बताती हैं कि मुहम्मद चाहता था कि जो भी इस्लाम छोड़े उसे मार दिया जाये।

कुछ मुर्तद (इस्लाम छोड़ने वाले, अली के पास लाये गये और उसने उन्हें ज़िंदा जला दिया। इस घटना का समाचार अब्बास तक पहुंचा तो उसने कहा, 'यदि मैं अली के स्थान पर होता तो मैं उन्हें जलाता नहीं, क्योंकि अल्लाह के रसूल ने यह कहते हुए ऐसा करने से मना किया है कि 'किसी को भी अल्लाह के दंड (आग, से दंडित न करो' मैं उनकी हत्या उस ढंग से करता जैसा कि अल्लाह के रसूल ने कहा है कि 'जिसने भी इस्लाम मज़हब छोड़ा, उसकी हत्या करो।[48]'

हमें ऐसी कुछ अंकित नहीं मिलता है कि मुहम्मद ने इस्लाम छोड़ने के अपराध के लिये किसी की हत्या की हो। किंतु वर्तमान के मुसलमान नेता इस्लाम छोड़ने वालों की हत्या को उचित ठहराने के लिये उसके वचन का उपयोग करते हैं।

उन्मादी साम्प्रदायिक नेता

सभी मज़हब मूलतः उन्मादी सम्प्रदाय होते हैं। उस विचारधारा के अनुयायियों की संख्या ही यह मान्यता निर्धारित करती है कि वह उन्मादी सम्प्रदाय है अथवा मज़हब। मुहम्मद उन्मादी सम्प्रदाय के नेता के रूप में व्यवहार करता था। जैसा कि ऊपर दिखाया गया है कि वह सौ प्रतिशत निष्ठा चाहता था, बहुत सी औरतों की संगत में रहना उसे अच्छा लगता था और वह अपनी सत्ता चाहता था। मुहम्मद के जीवन के ये तीन पक्ष ही प्रमुख नहीं थे, अपितु उसको अति चाटुकारिता भी प्रिय थी, जैसा कि निम्नलिखित हदीस से स्पष्ट है: रसूल (अल्लाह उन पर कृपा करे और उन्हें शांति प्रदान करे) के पास काठ का एक कटोरा था जिसमें वो पेशाब (मूत्र विसर्जन) किया करते थे। एक रात वो उस कटोरे को ढूंढ़ रहे थे, पर उन्हें नहीं मिला तो उन्होंने यह कहते हुए खोजबीन की, 'कटोरा कहां है? घर के सदस्यों ने उत्तर

दिया, 'बर्राह, उम्मे-सलमह की दासी लड़की ने कटोरे से पिया।'

रसूल ने उत्तर दिया, 'तब तो निश्चित ही उसने स्वयं को दोज़ख़ की आग से बचा लिया![85]

यह सही है कि इस घटना में उस दासी लड़की के कृत्य पर मुहम्मद का कोई वश नहीं था, किंतु जिस बात पर उसका वश था वह थी उसकी प्रतिक्रिया। उसने लोगों को विश्वास कराया कि उसका मूत्र भी इतना दमदार था कि जो पियेगा उसे जीवन में कभी उसे पेट की पीड़ा या समस्या नहीं होगी। हमने देखा है कि अधिकांश उन्मादी साम्प्रदायिक नेता ऐसा ही व्यवहार करते हैं। वे व्यक्ति विशेष को केंद्र में रखकर ऐसा सम्प्रदाय निर्मित करते हैं जहां उस व्यक्ति की प्रत्येक बात विशेष होती है। कुछ मुसलमान इस हदीस की प्रामाणिकता से सहमत नहीं होते हैं, अत: मैं पाठकों पर छोड़ता हूं कि वे इसे कल्पना मानें या वास्तविक घटना। किंतु अभी निष्कर्ष पर मत पहुंचिये, क्योंकि और भी कुछ हदीसें हैं जो मुहम्मद के इसी प्रकार के व्यवहार को बताती हैं:

अल्लाह के रसूल सालाह की इबादत घर पर करते थे और लंबे समय तक ऐसा किया। एक बार उन्होंने उस कुएं में पेशाब किया जो घर में था। अनस ने कहा, 'मदीना में कोई और ऐसा कुआं नहीं था जिसका पानी इतना शीतल व मीठा हो।' उन्होंने कहा, 'जब सहाबा मेरे घर आये तो मैंने उस कुएं का मीठा पानी दिया।' जाहिलिय्यह के समय में यह अल-बरूद 'शीतल कुआं' के नाम से जाना जाता था।[86]

मैं अचंभित होकर सोचता हूं कि ऐसा क्या हुआ होगा कि उसने कुएं में मूत्र विसर्जन कर दिया। यह तो मर्दों की वही विचित्र प्रवृत्ति है जो कभी-कभी इस रूप में सामने आती है कि शौचालय हमारी पहुंच में होता है, पर फिर भी हम दीवार के किनारे ही मूत्र विसर्जन करना चुनते हैं, विशेषकर तब जब कोई देख न रहा हो। हो सकता है कि मुहम्मद के मन में ऐसा ही कुछ चल रहा था जिसने उसे कुएं में पेशाब करने को विवश किया। जो भी हो, पर मुहम्मद के अनुयायी कह रहे हैं (या तो विभ्रम में अथवा मुहम्मद की चाटुकारिता के लिये) कि चूंकि मुहम्मद ने उस कुएं में पेशाब किया था, इसलिए उसका पानी शीतल व मीठा हो गया था।

कुछ मुसलमान दावा करते हैं कि मुहम्मद इस बात से अनभिज्ञ था कि लोग उसका पेशाब पी रहे हैं। ऐसे में क्या अल्लाह उसे संदेश नहीं भेज सकता था?

वह तो इससे भी तुच्छ प्रकरणों पर आयतें भेजता था। मुहम्मद अपने मूत्र

के चमत्कारिक प्रभावों के विषय में जानता था या नहीं यह तो नहीं पता, पर वह अपने 'थूक के विशेष प्रभावों' के बारे में अवश्य ही जानता था। बुख़ारी की इस हदीस पर विचार कीजिये जिसे सही माना जाता है:

अल्लाह क़सम, यदि वो थूकते थे तो उनका थूक उनमें (रसूल के साथियों) से किसी के हाथ में गिरता था। वे लोग उसे अपने मुख व त्वचा पर मल लेते थे। 87 तब रसूल ने पानी पीने के कटोरे में पानी भरकर मंगाया और उसमें मुंह-हाथ धोया तथा फिर मुंह में पानी भरकर (हमसे) यह कहते हुए उसी में कुल्ला कर दिया कि , '(इसमें से कुछ), पी लो और (कुछ) अपने मुख व छाती पर लगा लो तथा उस अच्छे संदेश पर प्रसन्न हो जाओ।[88]

जब अब्दुल्लाह बिन उबय्यह को दफ़्न कर दिया गया तो रसूल (उनके क़ब्र पर) आये। शव निकाला गया और रसूल ने उनके शव पर अपना थूक लगाया तथा अपने वस्त्र पहनाये।[89]

जब उन्होंने वज़ू (नमाज़ से पूर्व मुंह-हाथ धोने की विशेष पद्धति, किया तो वज़ू से बचा पानी लोगों द्वारा ले जाया गया तथा उन लोगों ने उस पानी को अपने शरीर पर मला (मानों कि यह कोई कृपासिंचित वस्तु हो)।[90]

इन सभी हदीसों में यह स्पष्ट है कि मुहम्मद व्यक्ति विशेष केंद्रित एक सम्प्रदाय निर्मित कर रहा था। उसने स्वयं को ऐसा अद्वितीय व्यक्ति होने का दावा किया जिसके मूत्र व थूक में ऐसा गुप्त चमत्कारिक प्रभाव था जिसका परीक्षण नहीं किया जा सकता है।

मुहम्मद की मृत्यु

629 ईसवी में खैबर की जीत के पश्चात एक यहूदी महिला ज़ैनब-बिंते-अल-हारिस ने उसे भेड़ के मांस के साथ विष दे दिया। बिस्र बिन अल-बार्स उस समय मुहम्मद के साथ था और उसने यह मांस निगल लिया, किंतु मुहम्मद ने इसे थूक दिया और बोला, 'यह हड्डी मुझे सूचित कर रहा है कि इसमें विष है।' जब मुहम्मद की इस प्रकार की बातों को सुनेंगे तो वास्तव में उसके मसख़रेपन की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकेंगे।

मुहम्मद ने क्यों नहीं निगला यह उतना स्पष्ट नहीं है, क्योंकि जहां तक हम जानते हैं हड्डिया नहीं बोलती हैं। हो सकता है कि उसे स्वाद में कुछ भिन्नता लगी हो, अथवा संभवतया वह ज़ैनब पर संदेह करता था। जो भी हो, मुहम्मद ने ज़ैनब को बुलाया और

ज़ैनब ने स्वीकार कर लिया कि उन्होंने विष मिलाया था। जब मुहम्मद ने पूछा, 'तुमने ऐसा क्यों किया?' ज़ैनब ने कहा, 'तुमने हमारे लोगों के साथ क्या किया है, यह तुम्हें भी पता है। तो मेरे मन में आया कि, 'यदि वह रसूल है तो उसे पता चल जायेगा, किंतु यदि वह एक सुल्तान है तो मुझे उससे छुटकारा मिल जायेगा।'

तीन वर्ष बाद 632 ईसवी में 8 जून को मुहम्मद मर गया। मुहम्मद की मृत्यु का कारण अज्ञात है। इसकी संभावना नहीं है कि वह विष मुहम्मद की मृत्यु का कारण बना, क्योंकि यह नितांत विचित्र बात होगी कि तीन वर्ष बाद विष का प्रभाव होगा। यद्यपि कुछ इतिहासकार बताते हैं कि उस विष ने मुहम्मद की प्रतिरोधी क्षमता को दुर्बल कर दिया था और अंततः इसका परिणाम उसकी मृत्यु के रूप आया। मृत्यु के समय मुहम्मद 62 वर्ष का था।

मेरी इच्छा है कि मैं मुसलमानों को सही मानूं कि मुहम्मद अपने समय का उत्पाद था और उस समय का कोई भी सिपाहसालार वैसा ही करता जैसा मुहम्मद ने किया था: 'अर्थात या तो मेरा अनुसरण करो, अथवा मरो!' परंतु यदि आज ऐसा कोई आदमी होता जो यह दावा करता कि उसके पास अल्लाह का संदेश आता है और वह उसी संदेश का प्रचार कर रहा है तो आप संभवत: उसे या तो विक्षिप्त कहते अथवा कोरा झूठा। इसके अतिरिक्त यदि आप यह सुनते कि वह व्यक्ति पड़ोस के क्षेत्रों व नगरों को जीत रहा है और लोगों के सिर क़लम कर रहा है तो आप उसे अत्याचारी सिपाहसालार कहते। यदि आप सुनते कि वह पहले पुरुषों की हत्या कर दे रहा है और तत्पश्चात उनकी स्त्रियों से शादी कर रहा है तो आप उसे मनोविकृत बलात्कारी कहते। सामान्य मानसिक स्थिति वाला कोई भी व्यक्ति ऐसे व्यक्ति को अच्छा नहीं कहेगा। सपने में भी ऐसे व्यक्ति को अच्छा नहीं माना जा सकता है। बहुत से मुसलमान आईएसआईएस को बर्बर व बुरा कहते हैं, यद्यपि आईएसआईएस वाले कर वही रहे हैं जो मुहम्मद ने किया था, अर्थात गुलाम (दास) व यौनदासी (सैक्स-स्लेव) बनाना, लोगों के हाथ काट देना और दूसरों के साथ सोने के आरोप में पत्थर मार-मार कर हत्या कर देना। पहले चार ख़लीफ़ाओं के समय मुहम्मद के समय से अधिक महत्वपूर्ण इस्लामी जीत मिली थी। यदि मुहम्मद इन ख़लीफ़ाओं के समय जीवित होता तो उसने और भी अधिक लोगों की हत्याएं की होतीं, उनके सिर काटे होते। जैसा कि मुसलमान मुहम्मद के 'पूर्ण' मानव होने का दावा करते हैं, पर वह तो आज के मानकों के अनुसार दूर-दूर तक 'अच्छाई' के निकट भी नहीं था।

vè;k; 6

नैतिकता

क्या आपको वास्तव में लगता है कि अच्छा होने का एकमात्र कारण ईश्वर की सहमति व पुरस्कार प्राप्त करना है? इसे नैतिकता नहीं कहेंगे। यह केवल किसी की चाटुकारिता करने जैसा है।

-रिचर्डडॉकिन्स

अल्लाह का बचाव करने वालों का प्रिय प्रश्न कुछ ऐसा होता है: यदि आप अल्लाह को हटा देंगे, तो अपनी नैतिकता कहां से पायेंगे?

उत्तर नितांत सीधा है: आपकी नैतिकता किसी अल्लाह से नहीं आती है। यह मानव मस्तिष्क से उपजती है और समय चक्र के साथ परिवर्तित होती रहती है। हमारे पास इसके लिये एक शब्द भी है, जिसे 'नैतिक युगचेतना' कहा जाता है। जैसा कि प्रोफ़ेसर रिचर्ड डॉकिन्स इसे 'परिवर्तनशील नैतिक युगचेतना' कहते हैं। 'जीटजीस्ट अर्थात युगचेतना शब्द पहली बार जर्मन दार्शनिक जॉर्ज हेगल द्वारा दिया गया था। आक्सफ़ोर्ड शब्दकोष के अनुसार, युगचेतना एक 'पारिभाषिक भाव अथवा इतिहास की अवस्था है जो अपने समय के विचारों व विश्वासों में दर्शित होती है।' उदाहरण के लिये अंकित किये गये मानव इतिहास के अधिकांश भाग में दास प्रथा विश्व के अधिकांश सभ्यताओं की युगचेतना का अंश था। यद्यपि प्रोफ़ेसर डॉकिन्स का परिवर्तनशील नैतिक युगचेतना के अनुसार, हम देख सकते हैं कि किस प्रकार लगभग सभी बड़े धर्मों द्वारा दासप्रथा को समस्या न मानने के बाद भी 19वीं व 20वीं सदी में प्रत्येक ने सामूहिक रूप से इसे त्याग दिया।

अमरीकी सोचते हैं कि अब्राहम लिंकन वो पहले व्यक्ति थे जिन्होंने दास प्रथा के विरुद्ध स्वर मुखर किया था, किंतु अब्राहम लिंकन से दो वर्ष पूर्व अलेक्जेंडर द्वितीय ने 1861 में रूस में दासों को मुक्त करते हुए इमैंसिपेशन प्रोक्लेमेशन पर हस्ताक्षर किया था। यहां तक कि इससे भी पहले फ़्रांसीसी क्रांति के जागरण में दासप्रथा पूर्णत: अविधिक (ग़ैरक़ानूनी) बना दी गयी थी। यद्यपि नेपोलियन ने 1802 में पुन: दासप्रथा को विधिक

(क़ानूनसम्मत) बना दिया। अठाहरवीं सदी के उत्तरार्ध में अनेक पश्चिमी देशों ने एक साथ इस कुप्रथा को हटाने अथवा कम से कम न्यून करने की दिशा में सक्रियता से काम किया। यह संभव है कि अब्राहम लिंकन जैसे आधुनिक विचारक ज़ार अलेक्जेंडर द्वितीय से प्रभावित थे, किंतु इससे भिन्न यह स्पष्ट है कि यह नैतिक युगजागरण एकसाथ विश्व के दो भिन्न भागों में अपनी दिशा परिवर्तित कर रहा था।

19वीं सदी का रूस उस समय पिछड़ा समाज था और रूस के ज़ारों ने अपनी अर्थव्यवस्था चलाने के लिये किसानों पर सुदृढ़ पकड़ बना रखी थी, किंतु इसके बाद भी अलेक्जेंडर द्वितीय को लगा कि यह समय नैतिक युगचेतना में परिवर्तन का है। यह अपेक्षाकृत दुर्भाग्यपूर्ण है कि अलेक्जेंडर द्वितीय की हत्या हो गयी और उनके उत्तराधिकारी ने सर्फ (दास) मुक्ति के नियम को समाप्त कर दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि रूस एक ऐसा समाज बन गया जहां नैतिक युगचेतना के परिवर्तन को अस्वीकार कर दिया गया। इस पर केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है कि यदि रूस की अक्टूबर क्रांति न हुई होती तो क्या अलेक्जेंडर तृतीय अपने पिता की मुक्ति नीतियों को निरंतर रख पाता। संयुक्त राज्य अमरीका के नैतिक युगचेतनावादियों ने स्थिति को परिवर्तित किया और सौ वर्ष बाद अमरीका एक ऐसी महान शक्ति बना, जैसा कि विश्व ने पहले कभी सोचा नहीं था। वहीं रूस के रोमनोव वंश का पतन हो गया और 17 जुलाई, 1918 को इस राजपरिवार के सदस्यों की सामूहिक हत्या हुई।

नैतिक युगचेतना की इस परिवर्तनशीलता का पक्षधर कोई व्यक्ति इस विचार का प्रबल समर्थक हो सकता है कि जो समाज ऐसे परिवर्तन को स्वीकार नहीं करते हैं, वे अपनी पूर्व-परिभाषित व ठहरी हुई नैतिकताओं के कारण मुख्यधारा से अलग-थलग पड़ जाते हैं और उसी प्रकार के गंभीर परिणाम भुगतने को बाध्य होते हैं, जैसा कि रूस के अक्टूबर क्रांति में हुआ। मेरे लिये यह कहना महत्वपूर्ण है कि भले ही अक्टूबर क्रांति होने के पीछे अलेक्जेंडर द्वितीय द्वारा परिवर्तशील युगचेतना को न स्वीकार करना एकमात्र कारण न रहा हो, परंतु यह इस क्रांति के अनेक कारणों में से एक कारण तो था ही। पाकिस्तानी के दीप्तिमान व सर्वाधिक करिश्माई व्यक्तित्वों में से एक हसन निसार ने जाने कितनी बार मज़हब-समर्थक परंपरावादियों के सामने तर्क दिया है कि चूंकि ये लोग वही करना चाहते हैं जो उनके पूर्वजों ने किया तो फिर ये कारों में यात्रा करने की अपेक्षा गधों पर क्यों नहीं

घूमते हैं अथवा आधुनिक शस्त्रों की लालसा रखने की अपेक्षा तलवारों से क्यों नहीं लड़ते हैं। उनको जो रटा-रटाया उत्तर मिलता है, वह यह है कि आप तकनीक का क्रमिक विकास तो करिये, परंतु आपको अपनी नैतिकताओं को स्थिर रखना चाहिये अर्थात यूं कहें कि नैतिकताओं में परिवर्तन नहीं होने देना चाहिये। परिर्वतनशील नैतिक युगचेतना को अस्वीकार करने वाले इन मुसलमानों के पास एक ही ऐसा गुण है जो इन्हें महिलाओं को सम्मान देने से रोकता है, समलिंगियों की गरिमा को मान्यता देने से रोकता है और यहां तक कि लोकतंत्र को अस्वीकार करने को बाध्य करता है: वह गुण कुछ और नहीं, बस मज़हब है।

कोई भी मज़हबी परपंरावादियों की यह प्रवृत्ति देख सकता है कि किस प्रकार ये लोग अपनी सुविधानुसार किसी बात को मानते हैं और किसी बात को नहीं मानते हैं। जिस बात को मानने से उनकी स्वार्थसिद्धि हो उसे तो वे झट से ग्रहण कर लेंगे, जबकि शेष बातों को नकार देंगे। जैसा कि मैंने पहले ही उल्लेख किया है कि मुसलमान जहां अपना लाभ देखते हैं, वहां अपने मज़हब में भी छेड़छाड़ करते हैं। तो वे कैसे कह सकते हैं कि नैतिकता को छोड़कर सबकुछ परिवर्तित किया जा सकता है? मुझे तो कभी-कभी लगता है कि ये सम्मानित परंपरावादी अपनी बीवी के बलात्कार को भी उचित ठहराएंगे, जैसा कि एक हदीस में इसे उचित माना गया है:

> उसके नाम से जिसके हाथ में मेरा जीवन है, कोई औरत तब तक अल्लाह के दीन को आगे नहीं ले जा सकती, जब तक कि वह अपने शौहर के अधिकारों को आगे न बढ़ाये। और यदि वह उससे (मैथुन के लिये उसके समक्ष, समर्पण करने को कहता है तो उसे मना नहीं करना चाहिये, भले ही वह उस समय ऊंट की काठी पर ही क्यों न बैठी हो। (इब्ने-माजाह, 1854)

यद्यपि कुछ मुस्लिम मौलवी (सामिर अबू हम्ज़ा 85) ने फ़तवा और यह निर्णय दिया है कि मुसलमान आदमी यदि चाहे तो अपनी बीवी का बलात्कार कर सकता है। मैं यह नहीं मानना चाहता कि अधिकांश मुसलमान इन मौलवियों की बात मानते हैं। अधिकांश मुसलमान वास्तव में अच्छे हैं, उदारवादी मनुष्य हैं और इस कारण वे इस्लाम की दृष्टि में पाखंडी और बुरे मुसलमान हैं। मुझे नहीं लगता कि इमरान ख़ान या अन्य उदारवादी मुसलमान उपरोक्त मौलवी की बात से सहमत होंगे। ये लोग अपने मज़हब की इन बातों की सिरे से उपेक्षा कर देते होंगे और

वास्तव में परिवर्तनशील युगचेतना को ग्रहण करते होंगे, परंतु ये लोग या तो अत्यंत भोले हैं या इतने भीरु (डरपोक) हैं कि इन्हें सार्वजनिक रूप से इनका विरोध करने में भय लगता है।

यह दावा करना अनुचित नहीं होगा कि परिवर्तन मानवता की महानतम परंपरा है। संसार आदिम युग में पहली बार सोची गयी बातों से बहुत आगे निकल चुका है। जैसे कि मनुष्य ने चिट्ठियां लिखकर भेजने के युग से बहुत आगे निकलकर ईमेल तक पहुंच गया है, घोड़ों से से यात्रा करने के युग से बहुत आगे निकलकर सुपरकार तक पहुंच चुका है, हरकारा के हाथ से डाक पहुंचाने के युग से बहुत आगे निकलकर हवाईडाक आदि तक की यात्रा कर ली है। इस प्रकार जब सबकुछ परिवर्तित हो सकता है, तो नैतिकता क्यों नहीं परिवर्तित हो सकती? यह आवश्यक नहीं है कि जो लोग परिवर्तनशील युगचेतना का विरोध करते हैं, वे इसके विरोध में ही हों। जैसा कि ऊपर बताया गया है, कुछ महान परंपरावादियों ने परिवर्तनशील युगचेतना को ग्रहण किया है और ये लोग मज़हबी पुस्तकों से अपनी नैतिकता नहीं बनाते हैं। इन सबके बाद भी, आज 21वीं सदी में भी हम नैतिक दुविधा में क्यों पड़े हुए हैं? बीसवीं सदी के मध्य में नारीवाद सबसे बड़ी नैतिक दुविधा थी। कुछ समय पहले तक जब (मानव सभ्यता के मापदंड पर), स्त्रियों को सम्मानित नहीं माना जाता था अथवा उन्हें वह स्थान नहीं मिलता था जो उन्हें आज मिला हुआ है। न्यूजीलैंड पहला ऐसा देश था जिसने 1896 में महिलाओं को मतदान का अधिकार दिया था और इस प्रकार परिवर्तनशील नैतिक युगजागरण प्रारंभ किया, किंतु यह ध्यान दिया जाना चाहिये कि नारियों के लिये समान अधिकार का आंदोलन समस्त विश्व में एकसाथ प्रारंभ हुआ था। 1955 में नागरिक अधिकार आंदोलन ने अफ़्रीकी अमरीकियों के समान अधिकार के लिये परिवर्तनशील युगचेतना का प्रारंभ किया। यदि यह आंदोलन एक दशक बाद हुआ होता तो क्या बराक ओबामा अमरीका के राष्ट्रपति हो पाते?

नैतिक युगजागरण रूपांतरित होता है, पर यह क्यों रूपातंरित होता है हम नहीं जानते, किंतु यह रूपांतरित होता तो है और मानव नैतिकता में हुई सभी प्रगति इसका साक्ष्य हैं। हम नैतिक युगजागरण के रूपांतरण के एक और प्रवाह के बीच में हैं, यह प्रवाह है समलैंगिक औरतों, समलिंगी आदमियों, उभयलिंगियों और तृतीय लिंग के लोगों के अधिकार के लिये एलजीबीटी आंदोलन।

यद्यपि पश्चिमी जगत में समलैंगिकों को चुनाव लड़ने अथवा मताधिकार से वंचित

नहीं किया जाता है, पर जब समान लिंग के व्यक्ति के साथ रहने को मान्यता देने की बात आती है तो उनके साथ भेदभाव होता है। मुझे वापस इस भाग को संपादित करना पड़ेगा, क्योंकि जब मैं इसे मूल रूप में लिख रहा था तो आस्ट्रेलिया अभी भी उन देशों में था जिन्होंने समलिंगी मैरेज को मान्यता नहीं दी थी। समान-लिंग जनमत संग्रह के करण अब 9 दिसम्बर, 2017 से आस्ट्रेलिया में समलिंगी मैरेज विधिसम्मत हो गया है। सौ वर्ष में जब लोग विधि के इस परिवर्तन का अवलोकन करेंगे तो वे वैसा ही सोचेंगे, जैसा कि हम आज 1896 में न्यूजीलैंड में स्त्रियों को पहली बार मत देने का अधिकार दिये जाने के बारे में सोचते हैं कि 'उस समय के लोगों को हुआ क्या था?' 'कैसे किसी स्त्री को मत देने के अधिकार से वंचित रखा जा सकता था?' निश्चित ही 1896 में भी ऐसे लोग थे जिन्होंने महिलाओं को मताधिकार देने का विरोध किया था, वैसे ही जैसे आजकल भी लोग हैं जो समलिंगी मैरेज का विरोध करते हैं, किंतु जिस प्रकार नारी जाति के प्रति विद्वेष रखने वाले लोग अब लगभग विलुप्त हो चुके हैं, वही स्थिति समलिंगियों के प्रति विद्वेष रखने वालों की भी होगी। परिवर्तनशील युगचेतना का यह समग्र उदाहरण है। अब आधुनिक पश्चिम और कुछ भाग्यशाली पूर्वी सभ्यताओं में यही हो रहा है, किंतु दुर्भाग्य से भारत, चीन और सुदूर-पूर्व को छोड़कर पूर्व के देश अभी भी मज़हब और मुख्यत: इसलाम के प्रभुत्व में हैं, इसलिये इन देशों में समलिंगियों के विरुद्ध बड़े पैमाने पर भेदभाव व्याप्त है। मज़हब यदि कुछ करता है तो वह यह कि उच्च नैतिकता के मार्ग में बाधा बनकर खड़ा हो जाता है।

आइये समलैंगिकता का ही प्रकरण लेते हैं। न्यून मज़हबी प्रभाव वाले देश परिवर्तनशील युगचेतना को उन देशों की तुलना में अधिक व्यापकता के साथ स्वीकार रहे हैं, जो हज़ारों वर्षों पूर्व की नैतिकता के प्रभाव में हैं। यद्यपि सऊदी अरब और ईरान के बड़े अपवाद को छोड़कर ये मज़हबी देश हज़ारों वर्ष पूर्व की नैतिकता को अब नहीं ढोते हैं और यहां तक कि सऊदी अरब भी दासप्रथा की अनुमति नहीं देता (भले ही उनके यहां ऐसा केवल दिखावे के लिये काग़ज़ों पर होगा क्योंकि 1962 में वह इस कुप्रथा का अंत करने वाला अंतिम देश था), फिर भी जब बात समलिंगी आदमियों व औरतों की आती है तो सभी बंदूकें तन जाती हैं और ऐसा केवल इसलिये होता है, क्योंकि उनकी मज़हबी पुस्तक इसकी अनुमति नहीं देती है।

यदि मुसलमान देश दासप्रथा के बारे में कुरआन की अनदेखी कर सकते हैं तो वे ऐसा ही समलिंगियों को मान्यता देने में क्यों नहीं कर सकते हैं?

अपरिवर्तनशील नैतिकता जैसा कुछ भी नहीं होता है। नैतिकता का अर्थ ही होता है कि सदा परिवर्तनशील। हम कांस्य युग और अंधकार युग से बहुत आगे आ चुके हैं। यह कल्पना करना आधारहीन नहीं है कि 23वीं सदी के लोगों की नैतिकता हमारे समय की नैतिकता से अत्यंत भिन्न होगी। हमने एक सदी पूर्व ही दासप्रथा के कारण मानव को होने वाले कष्टों से मुक्ति पायी है। हमने कुछ समय पहले ही यह माना है कि महिलाएं पुरुषों से कम नहीं हैं और हम समलिंगियों के समान अधिकार को स्वीकार कर रहे हैं। हम ही हैं जो मानव के कष्ट को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं। हमारी नैतिकता निरंतर परिवर्तनकारी है और ऐसा होना भी चाहिये। जिस क्षण हम रुक जायेंगे, हम स्थिर हो जायेंगे, वह समय हमारी प्रगति के थम जाने का होगा।

कुछ आधुनिक मज़हबवादी नैतिकता के इस प्रश्न के चारों ओर नृत्य कर रहे हैं और निरंतर इसके पुराने पक्षों को परिवर्तित कर रहे हैं। मैं एक व्याख्यान में ईसाई धर्मवादी फ़्रैंक ट्यूरेक को किसी नास्तिक के साथ नैतिकता के प्रश्न पर विमर्श करते हुए देख रहा था। जब नास्तिक ने कहा कि हम प्रकृति से ही परहितवादी होते हैं तो ट्यूरेक बार-बार उसी के पास जाते रहे और पूछते रहे, 'किंतु यह परिहतवाद आता कहां से है?' वे उस नास्तिक से शब्दश: पूछ रहे थे कि हमारे शरीर का कौन सा अणु है जो यह कहता है कि हमें हत्या नहीं करनी चाहिये अथवा दूसरों की चिंता करनी चाहिये। मुझे नहीं पता कि जब ट्यूरेक तर्क दे रहे थे कि परहितवाद का भाव ईश्वर से आता है तो उस नास्तिक ने उनके इस तर्क को प्रभावशाली मानने की अपेक्षा इसका उत्तर क्यों नहीं दिया।[56] ट्यूरेक ने उस युवा नास्तिक से पूछा, 'कौन कहता है ''एक-दूसरे के प्रति सहृदय होना'' अच्छी बात है?'

उत्तर बड़ा सीधा सा है: क्या अच्छा है और क्या बुरा, यह विचार हमारी अपनी विचार प्रक्रिया से आता है। एक प्राणी के रूप में हमने यह सिद्ध किया है कि किसी की हत्या करना अथवा बलात्कार करना उचित नहीं है। (जबकि इसके विपरीत बाइबिल और कुरआन कुछ शर्तें लगाकर हत्या और बलात्कार को प्रेरित करते हैं)। पुराकालीन असभ्य माने जाने वाले लोग भी अपने रोगी लोगों व वृद्धों का ध्यान रखते थे।[57] क्या उनके पास अपना कोई जीसस भी था? ये पुराकालीन लोग छह हज़ार वर्ष पूर्व मानवों से पृथक हुए, किंतु हमने बहुत पहले मानव जैसे दिखने वाले लंगूरों जैसे कि वनमानुषों में परहित की भावना देखी है। जीवाश्म वैज्ञानिकों ने 17 लाख वर्ष प्राचीन वयोवृद्ध मानव रूपी लंगूर के कपाल को ढूंढ़ा

है जिसमें दांत नहीं थे, पर एक डाढ़ थी। दंत कोटर कपाल में पूर्णत: पुनरवशोषित (विलीन) हो गयी थी।

ऐसा कुछ तभी हो सकता था जब सारे दांत गिर जाने के बाद भी वह जीवित रहा हो और सारे दांत गिरने में कई वर्षों का समय लगा होगा।[58] अत: स्पष्ट रूप से दांत न होने के कष्ट के बाद भी यह पुरामानव कई वर्षों तक जीवित रहा। क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि उनका ध्यान उनके समूह द्वारा रखा गया? हम जानते हैं कि पुरामानव खड़े होकर चलते थे, मांस खाते थे और पत्थर के कुछ उपकरणों का प्रयोग करते थे। सारे दांत गिर जाने के बाद इस रोगी वयोवृद्ध पुरामानव के लिये जी पाना पूर्णत: असंभव था, पर हम जानते हैं कि वो जिया और इससे संकेत मिलता है कि उसकी देखभाल की गयी और इससे उनमें परहितवाद होना सिद्ध होता है। चिम्पांज़ी भी जब अपने साथ के चिम्पांज़ियों की देखभाल करते हैं तो वे भी मानवों के जैसे परहितवाद दिखाते हैं।[59]

जो बात मैं बताने का प्रयास कर रहा हूं, वह यह है कि (भले ही आप इन तथाकथित पैग़म्बरों से अच्छाई की परिभाषा ढूंढ़ते हैं) हम मूसा, ईसा या मुहम्मद के कारण परहितवादी नहीं हैं। हम एक-दूसरे के प्रति अच्छे हैं, क्योंकि हमारे संसार के प्राणियों का जीवित रहना इसी भाव पर निर्भर करता है। प्रत्येक प्राणी का एक मौलिक उद्देश्य होता है: जीना। एक-दूसरे की देखभाल कर और हत्या व बलात्कार न करके हम इस उत्तरजीविता में वृद्धि करते हैं।

मुझे एक अभिनेत्री वीना मलिक की प्रशंसा करनी चाहिये जिसने 2012 के आरंभ में अपने कथित फ़ोटोशूट के कारण विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। वीना का जन्म पाकिस्तान में हुआ और पाकिस्तानी फ़िल्मों में कुछ समय तक काम करने के बाद वह बॉलीवुड में काम करने भारत आयी। वह वहां कुछ फ़िल्मों में दिखी और इसके बाद सेलीब्रिटी बिग ब्रदर शो में भाग लिया। पाकिस्तानी मीडिया में सभी स्थानों पर धर्मांध लोगों एवं तथाकथित उदारवादियों ने उसकी निंदा की, क्योंकि वह एक हिंदू पुरुष के साथ घुल-मिल रही थी। वीना ने पहले तो इस हिंदू पुरुष के साथ किसी भी प्रकार का संबंध होने से अस्वीकार किया, किंतु अंतत: वह अपनी स्वतंत्रता के लिये मुखर होने लगी। उसने तर्क दिया कि उसे अपने जीवन में जो अच्छा लगता है उसे चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिये। आज वह सबसे गंदी पाकिस्तानी सेलीब्रिटी के रूप में दिखायी जाती है, और कोई भले

न ऐसा कर रहा हो, किंतु पाकिस्तान मीडिया द्वारा तो ऐसा ही किया जा रहा है। वैसे जो लोग परिवर्तन लाते हैं, उन्हें प्राय: अप्रिय व्यक्ति के रूप में दिखाया जाता है। मैं कभी-कभी सोचता हूं कि उस समय की यथास्थिति कभी मार्टिन लूथर किंग जूनियर अथवा नेल्सन मंडेला को अच्छा मानती भी होगी या नहीं।

मैं क्रोध में जल उठता हूं जब सुनता हूं कि ये परंपरावादी स्कर्ट पहनने या फ़िल्मों में काम करने को 'पश्चिमी परंपरा' बताते हुए महिलाओं को ये करने से रोकते हैं। उनका साहस कैसे होता है कि वे कुछ साहसी मानवों के कार्यों का श्रेय केवल इसलिये पश्चिमी सभ्यता को दें, क्योंकि उनका जन्म पश्चिम में हुआ था?

मध्ययुगीन पश्चिमी सभ्यता ने महिलाओं का पुरुषों के साथ मेलजोल, मिनी-स्कर्ट पहनने अथवा राजनीति में अपना मत रखने को मान्यता नहीं दी थी। इन सकारात्मक परिवर्तनों का श्रेय किसी सभ्यता को दिये जाने की अपेक्षा इसका श्रेय वास्तव में उन साहसी मनुष्यों को जाता है जिन्होंने उस नैतिक युगचेतना में परिवर्तन का प्रारंभ किया। मैं दासप्रथा या स्त्रियों के प्रति विद्वेषपूर्ण व्यवहार के उन्मूलन में पश्चिम की उस स्थिति को श्रेय नहीं देता हूं, अपितु मैं इसका श्रेय नैतिकता की परिवर्तनशीलता की मानवीय परंपरा एवं अपने संबंधित समाज में इसे स्वीकृत बनाने के लिये किये गये संघर्ष को देता हूं।

साइरस कालक्रम में लगभग 2500 वर्ष पूर्व साइरस महान ही वह प्रथम व्यक्ति था जिसने प्रथम बार धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को प्रोत्साहित किया और साइरस महान फ़ारसी था। उसी प्रकार जैसे कि लोकतंत्र प्रथम बार पश्चिम में आया, पर इससे पश्चिमी जगत को लोकतंत्र का स्वामित्व नहीं मिल जाता है। ऐसे ही पश्चिम के लोग महिलाओं के समान अधिकार व अन्य स्वतंत्रताओं का उपभोग करते हैं तो वे पश्चिमी परंपराएं नहीं हैं, वरन् वे समस्त मानव की परंपराएं हैं। इसी प्रकार यह भी कहना घोर अतार्किक है कि औरतों, समलिंगियों और अन्य सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों के समान अधिकार को नकारना पश्चिम की परंपरा है। मानव जाति को और विभाजित करने की अपेक्षा हमें श्रेष्ठ नैतिकताओं को ग्रहण करना चाहिये, बिना यह सोचे कि उनका जन्म कहां हुआ है। यदि कोई परग्रहीय जाति अचानक विश्व पर अधिकार करने का निर्णय करे तो वे कहेंगे, 'इन मानवों के पास नाभिकीय शस्त्र हैं!' वे यह नहीं कहेंगे, 'पश्चिम और कुछ पूर्वी देशों के पास नाभिकीय शस्त्र हैं।' मनुष्य धरती की किसी भी जाति या भाग से हो, वह परग्रहीय जाति उसे 'मानव' के रूप में ही इंगित करेगी,

क्योंकि समस्त मानव जाति उनके लिये एक समान शत्रु होगी। यदि ऐसा है कि किसी पारग्रहीय आक्रमण जैसी स्थिति में हम सब एक मानव के रूप में देखे जायेंगे और एकता कोई सुदूर पहुंच से बाहर असंभव संकल्पना भी नहीं है तो फिर जब श्रेष्ठ सभ्यता के निर्माण का विचार आता है तो हम एक क्यों नहीं हो पाते हैं?

किसी की वस्तु नहीं चुरानी चाहिये अथवा सहचर मानव की हत्या नहीं करनी चाहिये, ये निष्कर्ष किसी मज़हबी पुस्तक से नहीं निकले हैं। सभ्यता से पूर्व भी संभवतया हत्याएं होती रही होंगी, किंतु ऐसा इसलिये नहीं होता था कि उनके पास अल्लाह नामक व्यक्तित्व के किसी आसमानी आदेश का अभाव था, वरन् ये अपराध इसलिये होते थे, क्योंकि विधियों व उनके प्रवर्तन (लागू कराने) का अभाव था। मेसोपोटामिया के राजा हम्मूरबी को वह प्रथम व्यक्ति होने का श्रेय दिया जाता है जिसको 1754 ईसवी पूर्व एक पट्टिका पर विधि अंकित करने का श्रेय जाता है। उसकी विधियां कुछ प्रकरणों में अत्यंत उत्तम थीं और कुछ प्रकरणों में असभ्य।[60] हम्मूरबी धरती पर ईसामसीह के समय से पूर्व और निश्चित रूप से मुहम्मद से पहले आया था। यह मानना कठिन नहीं है कि मेसोपोटामिया सभ्यता से पूर्व की सभ्यताओं में भी कुछ प्रकार की विधियां थीं, यद्यपि हमारे पास ये विधियां किसी प्राचीन पट्टिका पर अंकित प्रमाण के रूप में उपलब्ध नहीं हैं।

उससे पहले, आदिम जनजातियों में भी स्थानीय स्तर पर कुछ प्रकार की विधियां (नियम-क़ानून) थीं। अब आइये मान लेते हैं कि यदि हम अब्राहमिक अल्लाह से अपनी नैतिकता लेंगे तो हम समलिंगियों की हत्या केवल इस कारण करते रहेंगे कि उनका जन्म वैसा हुआ है, हम महिलाओं को पुरुषों से दुर्बल मानकर उनके साथ केवल इसलिये असमानता का व्यवहार करते रहेंगे कि कुछ पुरातनकालीन मध्यपूर्व के लोगों ने उनको ऐसे ही देखा था और हम संभवत: आज भी दास व यौनदासी (सैक्स-स्लेव) रख रहे होंगे। जो भी यह कहता है कि हम मज़हबी पुस्तक से नैतिकता ग्रहण करते हैं, वे या तो अज्ञानी हैं अथवा कोरा झूठ बोल रहे हैं।

मैं यूट्यूब पर सैम हैरिस व बेन शैपिरो के बीच हुए संवाद को सुन रहा था। यह संवाद 2017 के अंत या 2018 के आरंभ में हुआ था। जब पहले पहल मैंने शैपिरो के बारे में जाना तो मुझे वे अत्यंत बुद्धिमान, विचारवान और तार्किक लगे। मुझे इस बात पर तनिक भी संदेह नहीं है कि अभी जिन गुणों का मैंने उल्लेख किया है, वो सब उनमें थे, अत: मेरा निष्कर्ष है कि वो नास्तिक ही होंगे यद्यपि मैं मज़हब के एक

और पीड़ित को पाकर अचंभित था। बेन अपने अभिभावकों के जैसे ही रुढ़िवादी यहूदी हैं। पूर्णतः प्रज्ञ, बुद्धिमान और तार्किक मनुष्यों द्वारा मज़हब के अंधविश्वासों व मिथकों के आगे घुटने टेक देने का यह एक और उदाहरण है। शैपिरो सामान्यतः तर्कसंगत रहते हैं और जिस भी विषय पर बात करते हैं उसकी सर्वोत्तम व्याख्या करते हैं, परंतु जब बात मज़हब या उन संदिग्ध तर्कों की आती है जो मजहबियों ने उनके समक्ष दिया है तो वे अपनी तर्कसंगतता के गुण को छोड़ देते हैं। जब अल्लाह पर प्रश्न करने की बात आती है तो वे अस्पष्ट व छद्म दार्शनिक बन जाते हैं तथा बिना व्यापक तर्क के बोलने लगते हैं। इस संवाद में एक विशेष बिंदु पर शैपिरो ने उस सामान्य मज़हबी राग का प्रयोग किया जो ह्यूम द्वारा प्रेरित है कि 'विज्ञान आपको 'क्या है' यह प्रदान करता है, किंतु मज़हब आपको 'क्या होना चाहिये' यह बताता है।''

यह एक और खोखला दावा है जिसके पीछे कोई ठोस आधार नहीं है। यह सत्य है कि विज्ञान बताता है कि 'क्या है', किंतु क्या होना चाहिये, यह बात मज़हब नहीं, अपितु तर्क बताता है। तर्क न केवल 'क्या होना चाहिये' का सर्वोत्तम उत्तर है, अपितु यही इसका उत्तर देने का एकमात्र उपाय है। यह दावा भयानक व व्यर्थ है कि मज़हब हमें बताता है हमें कैसा व्यवहार करना चाहिये। जब भी आप इस प्रश्न पर मज़हबियों से तर्क करते हैं तो वे एक संदिग्ध कथन के साथ आते हैं कि 'मज़हब हमें अच्छा बनने को कहता है, मज़हब हमें शुचितापूर्ण (ईमानदार) होने को कहता है आदि।' किंतु जब आप इसमें गहरायी से देखते हैं तो पाते हैं कि 'अच्छा' या 'शुचितापूर्ण' होने की मज़हबी परिभाषा उससे पूर्णतया भिन्न है जो हम समझते हैं।

इस्लाम दंड के रूप में चोरों के अंगभंग को प्रोत्साहित करता है। यहीं पर सोचने-समझने और तर्क करने की प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है-कम से कम इस्लाम में तो ऐसा ही है- किंतु अधिकांश मुस्लिम देश चोरों का अंगभंग करने की प्रथा पर नहीं चलते हैं। तर्क के माध्यम से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि किसी भी अपराधी को दंड भोगने के बाद पुनर्वास का अवसर दिया जाना चाहिये। यह कारण दंडकारी अंगभंग को रोकने के लिये पर्याप्त है। स्पष्ट रूप से इस उदाहरण में आधुनिक तर्क ने 'क्या होना चाहिये' प्रश्न का उत्तर दिया है। मज़हबी लोग परिणामों के विचार पर तर्क-वितर्क और दावा कर सकते हैं और यह भी दावा कर सकते हैं कि मज़हब आपको व्यक्ति को दंडित करने का विचार देता है, किंतु पुनः यह एक और व्यर्थ दावा है कि इन मज़हबों से पहले के लोग परिणामों की अवधारणा को नहीं समझते थे।

कुछ लंगूर, मुख्यत: चिम्पांज़ियों ने मूल परिणामों की समझ दिखायी है। जर्मनी के लीपजिग स्थित मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट आफ इवोलूशनरी एंथ्रोपालॉजी के कैट्रिन रीड्ल ने पाया कि चिम्पांज़ी उन व्यक्तियों को तो दंडित करते हैं जो उनका अपना भोजन चुरा लेते हैं, किंतु उन्हें नहीं दंडित करते हैं जो दूसरों का भोजन चुराते हैं।[78]

अत: भले ही चिम्पांज़ी बुरे व्यक्तियों को दंडित करने की अवधारणा समझते हैं, पर यहां यह साक्ष्य है कि वे आधारभूत विवेक का प्रयोग करने में भी सक्षम होते हैं। मुझे नहीं लगता कि चिम्पांज़ियों के पास कोई अब्राहम, मूसा, ईसा या मुहम्मद थे। क्या पता? चिम्पांज़ी अब संभवतया उसी स्थिति में जा रहे हैं जिस स्थिति में लाखों वर्ष पूर्व वनमानुष चले गये थे। वे भी संभवत: किसी रहस्यमयी या अज्ञात घटना का सामना करने पर अंधविश्वासी होकर किसी चामत्कारिक ईश्वर को ढूंढ़ते होंगे। उनमें से कुछ चतुर लोग पहले ही अपने पैग़म्बर होने का दावा कर रहे होंगे और उन लोगों को मूर्ख बना रहे होंगे जो उनसे कम बुद्धिमान थे। कौन जाने कि ऐसा हुआ हो? जैसा कि ऊपर दिखाया गया है, मजहबियों का यह 'क्या होना चाहिये' का दावा पूर्णत: झूठा है और इसको गंभीरता से लिये जाने का कोई आधार नहीं है। हमारी श्रेष्ठ नैतिकता का आधार तर्क है। शैपिरो जैसे लोग दूसरा दावा यह करते हैं कि पश्चिमी जगत यहूदी-ईसाई मूल्यों के आधार पर अभिकल्पित (डिजाइन किया गया) है। पश्चिमी लोकतंत्र यहूदी-ईसाई मूल्यों से अधिक यूनानी व रोमन मूल्यों पर बने हैं और लोकतंत्र परिवर्तनशील नैतिक युगचेतना, नये चिंतन का समर्थन करता है, जबकि मज़हब की 'नैतिकता' परिवर्तन का पक्ष नहीं लेती है। वास्तव में लोकतंत्र मज़हब के सर्वथा विपरीत है। मज़हब में नैतिकता समय के साथ परिवर्तित नहीं हो सकती है, पर लोकतंत्र में विधायन अथवा सार्वजनिक मंचों पर विमर्श के माध्यम से नैतिकताएं परिवर्तित होती रहती हैं।

यहां लोकतंत्र से मेरा आशय उसकी पारंपरिक परिभाषा से नहीं है, जिसमें कि लोग सम्मिलित होते हैं और अपना नेता चुनते हैं, अपितु मेरा आशय सर्वाधिक आधारभूत सिद्धांतों जैसे कि तर्क प्रस्तुत करने और प्रति-तर्क देने से है। परिवर्तन एक ऐसी सुदृढ़ परिघटना है कि इस तथ्य के बाद भी कि मज़हबों को परिवर्तन से दूर रहना चाहिये, मज़हब भी परिवर्तनशीलता से बच नहीं पाते। आधुनिक ईसाई समुदाय तो कौमार्य-भंग करने वाली किसी लड़की की हत्या उसके पिता के द्वार पर पत्थर मार-मार कर दिये जाने अथवा समलिंगियों की हत्या कर दिये जाने के कृत्यों का समर्थन

नहीं करता, जबकि यहूदी-ईसाई मूल्यों के अनुसार तो हमें आज भी ऐसा कृत्य करना चाहिये। यहां तक कि मुसलमान भी मुहम्मद के इस्लाम से आगे जाकर परिवर्तित हुए हैं। इनमें भी समलिंगियों, इस्लाम छोड़ने वालों और दूसरों के साथ मैथुन करने वालों के प्रति सहिष्णुता बढ़ रही है। डेनिश कॉर्टून की घटना के बाद कुछ मुसलमान निकलकर बाहर आये और कहना प्रारंभ किया कि यद्यपि वे मुहम्मद का कॉर्टून बनाने के कृत्य का समर्थन नहीं करते हैं, किंतु वे उस कॉर्टून को बनाने वाले कॉटूर्निस्टों की हत्या के विरुद्ध हैं। सऊदी अरब जिसने लंबे समय तक महिलाओं को कुचला है और उन्हें कभी वाहन चालन की अनुमति नहीं दी, वहां भी 2017 में एक विधान पारित हुआ जिसमें उन्हें वाहन चालन की अनुमति दी गयी तथा 5 मार्च 2018 को एक विधान पारित हुआ जिसमें उन्हें अपने किसी पुरुष अभिभावक को साथ लिये बिना अकेले यात्रा करने का अधिकार मिला। ये स्पष्ट उदाहरण हैं कि कैसे लोग अपने मज़हब की नैतिकता के बोझ को धीरे-धीरे हटा रहे हैं।

जब सैम हैरिस ने अपने को यहूदी-ईसाई मूल्यों से बंधे होने से नकारा तो शैपिरो ने उनसे पूछा कि उनका जन्म कहां हुआ। शैपिरो ने तर्क देने का प्रयास किया यदि आप एक ऐसे देश में जन्म लेते हैं जहां बहुसंख्या में यहूदी-ईसाई हैं तो इसका स्वत: ही अर्थ निकलता है कि ऐसे देश के मूल्य यहूदी-ईसाई हैं। यह सत्य है कि संयुक्त राज्य अमरीका की स्थापना करने वाले लोगों ने दासप्रथा अथवा महिलाओं को मताधिकार न देने को अत्याचार के रूप में नहीं देखा था, पर ये लोग अत्यंत प्रबुद्ध थे और उनके भीतर एक ऐसा देश बनाने की आग थी जो उस समय के यूरोप से भिन्न हो। इन पूर्वजों में से अधिकांश की विरासत ईसाइयत थी, पर वे धर्मांध ईसाई नहीं थे। शैपिरो का मत यह था कि आप समलिंगियों की हत्या करने की स्थिति से निकलकर उन्हें वैवाहिक समानता देने की स्थिति में पहुंचे हैं तो इसका श्रेय ईसाई धर्म को दिया जाना चाहिये। शैपिरो का यह दावा बेतुका है, क्योंकि उनके इस तर्क को मानें तो जो देश निरंकुश अधिनायक शासन से लोकतंत्र की ओर बढ़ते हैं, उन देशों में लोकतंत्र के आने का श्रेय अधिनायकत्व को श्रेय देना चाहिये। भले ही हम यह मान लें कि संयुक्त राज्य अमरीका की जड़ें यहूदी-ईसाई हैं, पर तथ्य यह है कि वहां इन मूल्यों को खिड़की से बाहर फेंक दिया गया है और यह उनके द्वारा अपनी विरासत को धीरे-धीरे नकार दिये जाने का प्रमाण है। अमरीका में पारंपरिक यहूदी-ईसाई मूल्यों के उन्मूलन को श्रेय धर्म को नहीं दिया जा सकता है।

vè;k; 7

कुरआन

वस्तुनिष्ठ नैतिकता के स्रोत के रूप में बाइबिल उन बुरी पुस्तकों में से एक है जो हमारे पास हैं। यदि हमारे पर कुरआन न आती तो वही पुस्तक सबसे बुरी होती।

- सैम हैरिस

मुसलमान मानते हैं कि कुरआन अक्षरश: अल्लाह के शब्द हैं जो महादूत (फ़रिश्ते) जिबराइल के माध्यम से मुहम्मद के पास भेजी गयी। तनिक कल्पना कीजिये कि आज के संसार में कोई व्यक्ति आपके पास आये और बोले कि उसने अपने मन में कुछ स्वर सुने हैं और वह मानता है कि वो स्वर उस अल्लाह का है जो उससे संवाद कर रहा है। इस व्यक्ति को कोई गंभीरता से नहीं लेगा, किंतु जैसे ही आप कहते हैं कि ऐसा व्यक्ति 1400 वर्ष पहले आया था तो अचानक ये वैध (जायज) हो जाता है। कुरआन वैज्ञानिक त्रुटियों से भरा हुआ है और सातवीं सदी के किसी अन्य ग्रंथ से अच्छा नहीं है। हमें कुरआन के लेखक की अज्ञानता बताने के लिये केवल एक ऐसी आयत निकालनी है जो वैज्ञानिक रूप से त्रुटिपूर्ण या नैतिक रूप से भ्रष्ट हो। यदि यह पुस्तक ऐसे किसी सर्व-प्रज्ञ, बुद्धिमान अस्तित्व द्वारा लिखी गयी होती जिसने अरबों आकाशगंगाओं की रचना की है तो उसने इसमें वैज्ञानिक रूप से त्रुटिपूर्ण एक भी आयत नहीं लिखी होती, दसियों त्रुटिपूर्ण आयतों की तो बात ही छोड़िये। सच यह है कि पूरी कुरआन वैज्ञानिक रूप से त्रुटिपूर्ण और नैतिक रूप से भ्रष्ट आयतों से भरी पड़ी है। आइये, कुरआन की कुछ ठेठ त्रुटियों को देखें।

क्या कुरआन अल्लाह का शब्द है?

मुसलमान यह दावा करते नहीं अघाते कि कुरआन सबकुछ रचने वाले अल्लाह के त्रुटिरहित शब्द हैं। वे प्राय: इस आयत का उद्धरण देते हैं:

> (ऐ रसूल) तुम कह दो कि (अगर सारे संसार के) आदमी और
> जिन्न इस बात के लिये एक साथ आ जायें कि उस कुरआन

के जैसा कुछ रच दें तो (असंभव है) तथा वे एक-दूसरे की सहायता करते हुए पूरा बल लगा दें तो भी उसके जैसा कुछ नहीं रच सकते। (17:88)

इसका अर्थ है कि कुरआन से श्रेष्ठ पुस्तक कोई भी नहीं रच सकता, यह इस्लाम का एक और दावा है।

ऐसी अनेक पुस्तकें लिखी गयी हैं जो दास-प्रथा, समलिंगियों से विद्वेष, महिलाओं के प्रति विद्वेष, काफ़िरों की हत्या, हिंसा आदि का समर्थन नहीं करती हैं। किंतु पद्धति बी के लिये, आइये हम इस दावे को सही मानते हुए आगे बढ़ें और स्वयं देखें कि क्या वास्तव में कुरआन ऐसी सर्वोत्तम कृति है जिसे सर्वश्रेष्ठ बुद्धिमत्ता वाले ने लिखा है। हमारे मन में जो पहला प्रश्न आता है, वह यह है कि ऐसे समय में जब कि केवल आमने-सामने बैठकर उपदेश देना अथवा शब्द या पुस्तक ही संवाद का सर्वोत्तम माध्यम होता था तो 'ऐसे समय में इस अल्लाह ने मध्य पूर्व में इतने सारे पैग़म्बर क्यों भेजे?' आज की स्थिति तो यह है कि यदि मैं एक वीडियो बनाऊं तो यह वीडियो 24 घंटे में उतने लोगों तक पहुंच सकता है जितना कि मुहम्मद अपने समय में महीनों में नहीं पहुंचा सकता था। द्वितीय, अल्लाह ने अन्य सभी भाषाओं को छोड़कर केवल एक ही भाषा को क्यों चुना? और उसने भाषा भी ऐसी चुनी जिसे बड़ी सरलता से विकृत किया जा सकता है? मुसलमान कहेंगे कि वैसे तो सभी भाषाएं विकृत की जा सकती हैं। यह सही है, किंतु यदि ऐसी मानवीय समस्या है तो अल्लाह कोई ऐसी भाषा क्यों नहीं बना सका जिसे विकृत न किया जा सके? वैसे भी वह तो सबकुछ करने में सक्षम है, है ना? जब भी कोई आतंकवादी हमला होता है तो मुसलमान कहने लगते हैं कि ये लोग दिग्भ्रमित लोग हैं और ये इस्लाम के शांतिपूर्ण संदेश को नहीं समझते हैं। फिर तो आप को पूछना चाहिये कि अल्लाह ने इतनी सरल पुस्तक क्यों नहीं लिखी जिसका अर्थ इतनी सरलता से ग़लत न निकाला जा सके अथवा जिसकी ग़लत व्याख्या न की जा सके। इस आयत पर विचार कीजिये:

फिर अल्लाह की राह में जंग करो और जान लो, अल्लाह सब कुछ सुनता है, सब कुछ जानता है। (2:244)

इस आयत का अर्थ दो प्रकार से निकाला जा सकता है:

1. अल्लाह की राह में जंग करो और अल्लाह के संदेश को फैलाओ (वैसे भी मुहम्मद ने यही किया था।)

2. केवल अपनी मुस्लिम भूमि की रक्षा के लिये अल्लाह की राह में जंग करो।

हम सहजता से अनुमान लगा सकते हैं कि किस प्रकार के मुसलमान उसकी व्याख्या किस प्रकार करेंगे। आईएसआईएस पहले प्रकार की व्याख्या को लेगा, किंतु आधुनिक और कम हिंसक मुसलमान दूसरी व्याख्या को स्वीकार करेंगे।

इस आयत के बारे में क्या कहेंगे?

> (मुसलमानों) तुम्हारे लिये जिहाद (जंग) कर्तव्य बनाया गया है, और तुम्हें इसे प्रिय नहीं मान रहे हो। किंतु यह संभव है कि तुम्हें कोई बात भले ही प्रिय न हो, पर वह तुम्हारे हित की बात होती है और यह भी संभव है कि तुम्हें कुछ बहुत प्रिय हो, परंतु वह तुम्हारे लिये हानिप्रद हो। अल्लाह (तो) जानता ही है, पर तुम नहीं जानते हो। (2:216)

पुन: कुछ मुसलमान कहेंगे कि अल्लाह हमें आत्मरक्षा में लड़ने को कह रहा है या कुछ कहेंगे कि अल्लाह हमें काफ़िरों पर हमला करने का आदेश दे रहा है। आप इन आयतों का अर्थ अपनी सुविधानुसार निकाल सकते हैं। अब आइये इस सूत्र को देखें जो कि मानव ने दिया और मानव तो अल्लाह के जितना बुद्धिमान है नहीं:

अंतरिक्ष में प्रकाश की गति से तीव्र कुछ भी नहीं जा सकता- अल्बर्ट आइंस्टीन। मैं सोच रहा हूं, 'मैं इस कथन को समझने में भूल नहीं कर सकता!' यह नितांत स्पष्ट है और गणित द्वारा प्रमाणित है। आइंस्टीन द्वारा इसका पता लगाने के 100 वर्ष बीत चुके हैं और अभी तक इसे कोई ग़लत नहीं सिद्ध कर सका है। यदि आइंस्टीन जैसा एक व्यक्ति इतना सीधा सूत्र दे सकता है तो अल्लाह क्यों नहीं?

मुस्लिम मान्यताओं को स्वीकार करें तो लगता है कि यह अब्राहमी अल्लाह इतना अक्षम था कि वह पहले के अपने ग्रंथों बाइबिल और तोरा की रक्षा नहीं कर सका। क्या ब्रह्माण्ड का रचयिता अल्लाह को अपनी पहले की दो विफलताओं के बाद भी बुद्धि नहीं आयी? इस बार उसने कहा, 'मैं ऐसी पुस्तक रचूंगा जिसमें कोई हेरफेर नहीं कर सकता है!' परंतु क्यों अरबों आकाशगंगाओं का यह रचयिता मध्यपूर्व के रेगिस्तान में रहने वाले तुच्छ लोगों को अपनी पुस्तक में विकृति न लाने से रोकता है? उसे अपना संदेश पहुंचाने के लिये किसी पैग़म्बर की क्या आवश्यकता है? यदि वह चाहता है कि लोग उसमें विश्वास करें तो क्यों नहीं वह

स्वयं को प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में डाउनलोड कर देता है? जो व्यक्ति कुछ भी कर सकता है, उससे यह अपेक्षा करना कोई बड़ी बात तो नहीं है? यह तो लगभग कुछ वैसा ही है कि यह अल्लाह चाहता कि मानव विफल हो जायें, जिससे कि ये दयावान अल्लाह अपने ही बनाये प्राणी को अनंतकाल तक दोज़ख़ में आग में जला सके।

अंतत: ये अल्लाह प्राचीन काल में ये सारे चमत्कार क्यों दिखा रहा था, आज क्यों नहीं? मेरा आशय है कि जब आप अब्राहम, मूसा, ईसा और मुहम्मद के आसपास रहते थे, तब बड़ी बात थी कि आप अब्राहम के बेटे के स्थान पर बकरा प्रकट होते देख सकते थे, लाल सागर को दो भागों में फाड़ते हुए देख सकते थे और मुहम्मद को चांद पर थूकते हुए देख सकते थे (यद्यपि किसी ने उसे पंख लगे घोड़े पर बैठकर जन्नत जाते हुए नहीं देखा था) और फिर उसने (अल्लाह) ये सारे चमत्कार अपने प्राचीन ग्रंथ में अंकित करके छोड़ दिये। वाह, वाह, अल्लाह। आने वाली पीढ़ियों से अपेक्षा की जाती है कि वे इन बातों पर आंखें बंद कर विश्वास करें।

इस आयत के बारे में क्या कहना है?

> और उन्हें जहां पाओ उनकी हत्या करो, और उन्हें वहां से निकाल भगाओ जहां से उन्होंने तुम्हें हटाया है। और अल-फ़ित्ना (इस्लाम में विश्वास न करना अथवा विरोध, हत्या से भी अधिक बुरा है किंतु यदि वे रुक जायें, तो देखो! अल्लाह क्षमाशील व दयावान है। और उनसे तब तक लड़ते रहें, जब तक कि फ़ित्ना का अंत न हो जाये। (2:191-193)

मैं 21वीं सदी का व्यक्ति हूं और मैं इस आयत का जैसा चाहूं वैसा उपयोग विभिन्न प्रकार से कर सकता हूं। एक साहित्यकार कह सकता है, अच्छा तो 'हैरिस सुल्तान फ़ित्ना (विरोध उपद्रव) फैला रहा है तो प्रत्येक मोमिन का कर्तव्य है कि उसकी हत्या करे।' जिहादी ऐसे ही युवा मुस्लिम आदमियों का प्रयोग करते हैं। 'भारत ने कश्मीर पर नियंत्रण कर लिया है और फ़ित्ना फैला रहा है। उन्हें मारो।' 'अथवा 'यहूदियों ने जेरूशलम हथिया लिया है, अत: उन्हें मारो।' यदि इस आयत का यह सही अर्थ नहीं है (जैसा कि कुछ आधुनिक मुसलमान कहेंगे), तो फिर एक प्रश्न उठता है: अपरिमित बुद्धिमत्ता वाला अल्लाह अपना संदेश फैलाने के लिये

अच्छे शब्द नहीं पा सका?

आज सैकड़ों की संख्या में विद्वान हैं जो कुरआन की व्याख्या जैसे चाहते हैं वैसे करते हैं। आइये, कुरआन की कुछ उन सामान्य समस्याओं को देखें जिसने इन विद्वानों के दिवालोक से लोगों को प्रत्यक्ष रूप से भ्रमित किया है:

धरती चपटी है (शेख अब्दुल अज़ीज़ इब्न अब्दुल्लाह।
धरती चपटी नहीं है (जाकिर नाइक)
सूर्य धरती के चक्कर लगाता है (शेख बंदर अल-खैबरी।
सूर्य धरती के चक्कर नहीं लगाता है (जाकिर नाइक)।
इस्लाम छोड़ने वालों की हत्या कर दो (युसुल् अल-करादवी।
इस्लाम छोड़ने वालों की हत्या न करो (डॉ. शाबिर अली)।
उद्विकास सही है (डॉ. यासिर काजी।
उद्विकास सही नहीं है (जाकिर नाइक)।

और फिर सीधे-सीधे त्रुटिपूर्ण (ऐब भरी) ऐसी कुरआनी आयतें हैं:

> वह (हर ऐब से) पवित्र है, जिसने सबको जोड़े में बनाया- धरती से उगने वाली चीज़ों और खुद उन लोगों के और उन चीज़ों के जिसे वे नहीं जानते। (36:36)

यह आयत दावा करता है कि सभी पशुओं को जोड़े में अर्थात नर व मादा में बनाया गया है। व्हिपटेल लिज़र्ड को देखिये, उनमें तो केवल मादा होते हैं। नर की आवश्यकता ही नहीं है उनको। वे अनिषेचन के माध्यम से बच्चों को जन्म देते हैं। अनिषेचन को सामान्यत: बिना यौनसंसर्ग के बच्चे जनना कहा जाता है।

अत: जैसा कि इस अध्याय में अब तक मैंने बताया है कि अल्लाह के साथ क्या गड़बड़ी है, आइये उसको देखें:

1. अल्लाह मानव से सीधे संवाद नहीं कर सकता, अत: वह पैग़म्बर भेजता है।
2. ये पैग़म्बर सदैव जीवित नहीं रह सकते हैं, इस कारण वह एक पुस्तक छोड़ देता है।
3. इस पुस्तक की ग़लत व्याख्या इतनी सरलता से की जा सकती है कि आपको निरंतर लघुपैग़म्बर-विद्वान की आवश्यकता पड़ती है।
4. 'अल्लाह के वास्तविक संदेश' को फैलाने के लिये हमारे पास इन विद्वानों में भी विभिन्न प्रकार के लोग हैं।

'अल्लाह के वास्तविक संदेश' पर इतना भ्रम है। यदि सबकुछ करने में सामर्थ्यवान होने का दंभ भरने वाले अल्लाह ने अपना संदेश सीधे मानव मस्तिष्क में डाल दिया होता अथवा हज़ारों वर्ष पूर्व पुस्तक भेजने की अपेक्षा किसी अन्य विधि से मानव तक सीधे पहुंचा दिया होता तो भ्रम से बचा जा सकता था। मानवों ने श्रेष्ठ कार्य किये हैं। हम किसी मशीन में सॉफ़्टवेयर डाउनलोड कर सकते हैं और वह भी त्रुटिपूर्ण होने की न के बराबर संभावना के साथ। आइये, कुरआन पर थोड़ा विस्तार से विमर्श करें।

कुरआन वैज्ञानिक त्रुटियां

ईसाइयों के विपरीत मुसलमान सच में कुरआन की बातों पर अक्षरश: विश्वास करते हैं। जब बाइबिल की वैज्ञानिक त्रुटियां उजागर होने लगीं और आधुनिक ईसाई उत्तर देने में फंसने लगे तो वे पलट गये और कहने लगे कि यह तो केवल रूपक है। पर मुसलमान आज भी कुरआन के एक-एक शब्द पर अक्षरश: विश्वास करते हैं। वे नूह की बाढ़, उस आदम व हौव्वा के प्रथम मानव होने जिनके अपने सहोदर बच्चों ने आपस में शादी की थी और चंद्रमा पर थूकने, यहां तक कि ज़ोना के तीन रात व्हेल के पेट में जीवित रहने सहित ऐसी अनेक कहानियों पर विश्वास करते हैं।

ईसाइयों ने तो उन अतार्किक बातों को छोड़ दिया और अधिकांश ईसाई अब विज्ञान और अपने धर्मग्रंथ का घालमेल नहीं करते हैं, पर इसके विपरीत मुसलमान यह दावा करते नहीं अघाते कि 'आज विज्ञान जो कुछ भी अविष्कार कर रहा है, हमारे अल्लाह और रसूल ने हमें अपनी पुस्तक में 1400 वर्ष पूर्व बता दिया था।' अन्य दावों के जैसे ही मुसलमानों का यह दावा भी निराधार है। मुसलमान अपने इन दावों के समर्थन में बौद्धिक कपट के चरम तक जाना चाहते हैं। वे इन आयतों के अर्थों को तोड़ते-मरोड़ते हैं। इंटरनेट कुरआन के वैज्ञानिक ज्ञान के दावों से भरा पड़ा है, इसलिये इन दावों के प्रति-बिंदुओं को देखना महत्वपूर्ण है।

पहला प्रश्न यह है कि जब विज्ञान कोई खोज कर लेता है तो उसके बाद ही मुसलमानों को ये आयतें क्यों मिलती हैं? स्पष्ट है कि दूरंदेशी से आप इन अस्पष्ट आयतों को तोड़मरोड़ सकते हैं और इन्हें किसी भी रूप में दिखा सकते हैं।

आइये इन आयतों में से कुछ पर दृष्टिपात करें:

महाविस्फोट (बिगबैंग)

> जो लोग काफ़िर (इस्लाम को नहीं मानते) हैं, क्या उन लोगों ने नहीं देखा कि आकाश और धरती जुड़े हुए थे- फिर हमने दोनों को पृथक किया? और तब हमने सभी प्राणियों को जल से निर्मित किया? क्या वे अभी भी विश्वास नहीं करते हैं? (21:30)

मुसलमान दावा करते हैं कि ये आयत हमें महाविस्फोट के बारे में बता रही है, क्योंकि अल्लाह कह रहा है कि 'सबकुछ एक-दूसरे से जुड़ा हुआ था और फिर हमने उन्हें पृथक किया।'

पहली त्रुटि तो यही है कि धरती और आकाश कभी जुड़े नहीं थे। बस ऊर्जा एक छोटे से बिंदु में इस प्रकार संघनित थी कि कोई द्रव्य नहीं था। चूंकि ऊर्जा और द्रव्य एक ही पदार्थ हैं और ये एक-दूसरे में रूपातंरित किये जा सकते हैं तो इस ऊर्जा से महाविस्फोट के ठीक पश्चात अतिविषम परिस्थितियों में हाइड्रोजन के अणु अति तीव्रता से ऊपर उठने लगे। यह वैज्ञानिक तथ्य आइंस्टीन के अनुसंधान से पता चली थी, न कि किसी मज़हबी आयत से। भारी तत्व यथा लौह, निकिल, सिलीकॉन, कॉर्बन आदि अभी तक नहीं बने थे तो इस कारण धरती नहीं दिखती थी।

पहला तारा महाविस्फोट के लाखों वर्ष पश्चात आया। ग्रहों के विकास और तत्पश्चात जीवन के विकास के लिये भारी तत्वों यथा कॉर्बन, लौह, सिलीकॉन, आक्सीजन, स्वर्ण आदि आवश्यक थे। इन तारों से ये भारी तत्व बने। कॉर्ल सैगन की प्रसिद्ध उक्ति है, 'हम धूल के कणों से निर्मित हैं।' यदि बड़े तारों की मृत्यु न हुई होती तो यहां धरती और जीवन न होता।

हां, धरती और आकाश एक साथ नहीं जुड़े थे। धरती जैसे ग्रहों के निर्माण के लिये जिन तत्वों की आवश्यकता थी, वे बहुत बाद में आये। प्रारंभ में ये तत्व ही नहीं थे।

आइये, अब इस आयत के दूसरे भाग को देखें: 'हमने सभी प्राणियों को जल से बनाया।' यह सच है कि हमारे शरीर का 65 प्रतिशत जल है, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि हमारा शरीर जल से निर्मित है। ऐसा इस कारण है कि हमारी कोशिकाएं इतना जल इसलिये रखती हैं जिससे कि रासायनिक प्रक्रियाएं चलती रहें। हमारे शरीर का अधिकांश भाग वास्तव में रिक्तता (ख़ालीपन) से निर्मित है। हां,

आपने यह ठीक पढ़ा- रिक्तता। जैसा कि आप जानते हैं कि हमारे शरीर में सब कुछ अणुओं से निर्मित है और अणुओं में अधिकांशतः स्थान रिक्त (ख़ाली) होते हैं। अणु का 99.9 प्रतिशत रिक्त स्थान केंद्रिका के रूप में रिक्त रहता है और इलेक्ट्रान इसका 0.01 प्रतिशत स्थान ही घेरते हैं, जबकि शेष स्थान रिक्त रहता है। यदि हम इन अणुओं में से इस रिक्त स्थान को निकाल दें तो मानव शरीर चीनी के घन (क्यूब) के आकार का हो जायेगा। इसके अतिरिक्त यदि आप इसे रासायनिक रूप से देखें तो हमारे शरीर में 65 प्रतिशत आक्सीजन, 18 प्रतिशत कॉर्बन, 10 प्रतिशत हाइड्रोजन और 3 प्रतिशत नाइट्रोजन है तथा शेष 4 प्रतिशत अनुपयोगी है। अतः यदि अल्लाह ने कहा होता, 'हमने सब कुछ आक्सीजन से बनाया', तो मुसलमान अभी भी कहते, 'अल्लाह ने हमें यह 1400 वर्ष पहले ही बता दिया था।'

जहां तक मानव शरीर के जल से बने होने का दावा है तो मुहम्मद पहला व्यक्ति नहीं था जिसने यह दावा किया था। ईसा पूर्व 624 में जन्मे प्राचीन यूनानी दार्शनिक थेल्स वह पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने कहा था कि मानव शरीर जल से निर्मित है। थेल्स ने विवरण दिया था कि कैसे उन्होंने विश्वास किया मानव शरीर जल से बना हुआ है, वैसे उनकी यह धारणा ग़लत थी। यद्यपि अठारहवीं सदी तक यह सामान्य धारणा बनी रही। मुहम्मद ने बस वही कहा था जो उसके समय के पहले से लोगों को पता था।

कोई विद्वान कहेगा कि महाविस्फोट के समय धरती का अस्तित्व स्पष्ट रूप से नहीं था। अल्लाह हमें यही तो बता रहा है कि पृथ्वी के लिये फलतः आवश्यक तत्व थे, जैसे कि हाइड्रोजन जैसा तत्व जिसने बड़े तारों को जन्म दिया और इन्हीं तारों ने भारी तत्वों को जन्म दिया। मुस्लिमों के बचाव में मैं देख सकता हूं कि कैसे किसी मदरसा में पढ़ रहा एक भोला-भाला मुसलमान इन मुस्लिम विद्वानों के बौद्धिक कपट के झांसे में आ सकता है। पर ये मुस्लिम विद्वान आपको यह नहीं बताते हैं कि इसकी अगली आयत में क्या लिखा है।

> और हमने धरती पर भारी बोझिल पहाड़ बनाए जिससे कि धरती उन लोगों को लेकर किसी ओर झुक न जाये और हमने उसमें (पहाड़ में, मार्ग (के रूप में, घाटियां बनायीं जिससे कि वे लोग मार्गदर्शित हो सकें। (21:31)

हां तो, यह आयत स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि धरती और आकाश एक ही समय बनाये गये, जबकि सच्चाई यह है कि आकाश बनने के यही कोई 9 अरब वर्ष बाद धरती बनी, किंतु अल्लाह को यह उल्लेख करने की आवश्यकता का अनुभव नहीं हुआ। या तो अल्लाह अपने काम में अत्यंत शिथिल है अथवा कुरआन के लेखक को पता ही नहीं था कि वह क्या बात कर रहा है। मैं मानता हूं कि उसे पता ही नहीं था।

अब आप अवश्य ही पूछेंगे, 'यह तो अभी भी बताती है कि धरती और आकाश एक-दूसरे से जुड़े थे या एक-दूसरे के साथ सिले हुए थे। मध्य पूर्व के किसी सिपाहसालार को इसका पता कैसे चला? सच यह है कि मुहम्मद एक स्मार्ट मनुष्य था और धरती व आकाश के एक में जुड़े होने का विचार इस्लाम से बहुत पहले का है। उदाहरण के लिये प्राचीन इजिप्ट के लोग भी मानते थे कि धरती और आकाश एक-दूसरे से जुड़े हुए थे तथा जब धरती के देवता गेब अपनी पत्नी व आकाश की देवी नूत से बिछड़े तो धरती और आकाश पृथक हुए। प्राचीन सुमेरिया के लोगों का भी मानना था कि जब आकाश के देवता अन अपनी पत्नी व धरती की देवी की से बिछड़े तो धरती और आकाश पृथक (अलग) हुए। एक और आयत है जिसका मैं समय-समय पर उल्लेख करना चाहूंगा, क्योंकि यह आयत कुरआन और उसकी महाविस्फोट सिद्धांत की धज्जियां उड़ा देती है:

> वास्तव में अल्लाह ही आपका स्वामी है, वह अल्लाह जिसने 6 दिनों में धरती व आकाश बनाया और तब वहां स्वयं को सिंहासन पर आरूढ़ किया। (7:54)

अत: यदि हम मानते हैं कि कुरआन और महाविस्फोट सिद्धांत एक-दूसरे के साथ सुसंगत हैं तो इसका अर्थ हुआ कि कुरआन के पहले दिन महाविस्फोट हुआ और फिर इसके छठें दिन 9 अरब वर्ष पश्चात धरती दिखी। इसका अर्थ हुआ कि अल्लाह का एक दिन 1.5 अरब वर्ष के बराबर है। ऐसे सर्व-सामर्थ्यवान अल्लाह को इतनी लंबी प्रतीक्षा क्यों करनी पड़ी, जबकि वह सीधे कह सकता था, 'हो जा' और नीचे दी गयी इस आयत के अनुसार वह काम अपने आप हो जाता:

> आकाश और धरती को उत्पन्न करने वाला और जब किसी काम को करने की ठानता है तो वह बस कह देता है कि "हो जा" और वह हो जाता है। (2:117)

तो वह कह सकता था, 'धरती बन जा' और पल भर में धरती बन जाती और उसे अरबों वर्ष क्या, एक दिन की भी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती।

अंत में, इस आयत के बारे में क्या कहेंगे?

> हम ही हैं जिसने (अपने रचनात्मक, सामर्थ्य से इस ब्रह्माण्ड को बनाया और वास्तव में हम ही हैं जो निरंतर इसे फैला रहे हैं। (51:47)

ध्यान है, मैंने कहा था कि ये मुस्लिम विद्वान किस प्रकार बौद्धिक कपट करते हैं? यह उस कपट का सही उदाहरण है। हमें अब पता है कि ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा तो ये आधुनिक मुस्लिम विद्वान पीछे गये और अपनी आयतों की पुनर्व्याख्या की। यद्यपि कुरआन नहीं कहती है कि ब्रह्माण्ड फैल रहा है या ये सही अनुवाद हैं:

> और (उनसे) पहले (हमने नष्ट कर दिया था) नूह के लोगों को या वास्तव में वे लोग विद्रोही अवज्ञाकारी थे। और आकाश जिसे हमने अपने बल से बनाया और निस्संदेह हम ही (इसको, फैलाने वाले हैं। और धरती को भी हमने ही बिछाया है और इसको बनाने वाला सर्वोत्तम है। (51:46-48, सही अनुवाद)

जब आप पहले के आयत और बाद के उस संदिग्ध आयत को पढ़ते हैं तो आप देख सकते हैं कि अल्लाह अपने सामर्थ्य की केवल डींगे हांक रहा है। वह कह रहा है कि उसने पहले नूह के लोगों को दंडित किया, क्योंकि वह उस आकाश का रचयिता है जो विशाल है और उस धरती का रचयिता है जिसे उसने बिछाया है। वह अल्पमति अरब के लोगों को बता रहा है कि वह कुछ भी कर सकता है। इसमें कहीं उल्लेख नहीं है कि ब्रह्माण्ड कभी फैला भी। विसंगति को समझने के लिये आइये हम कुछ और अनुवाद को देखें:

पिक्थाल: हमने अपने बल से आकाश बनाया है, और हम ही हैं जिसने (उसको) विस्तृत क्षितिज दिया है।

यूसुफ़ अली: बल और कौशल से हमने यह आकाश बनाया क्योंकि हम ही हैं जिसने आकाश की विशालता रची है।

यहां स्पष्ट है कि अल्लाह ब्रह्माण्ड के विशाल होने की डींगें हांक रहा है। आकाश की ओर देखकर यह तो कोई भी समझ सकता है कि यह विशाल, अति विशाल है। पर कितना बड़ा? इन मध्यपूर्वी गंवारों को यह नहीं पता था।

भ्रूण विज्ञान

महाविस्फोट (बिगबैंग) सिद्धांत के जैसे ही मुसलमानों का दूसरा प्रिय दावा यह होता है कि विज्ञान के अविष्कार से बहुत पहले ही कुरआन ने 1400 वर्ष पूर्व भ्रूण विज्ञान की पूरी प्रक्रिया की व्याख्या कर दी थी। इससे पहले कि मैं मुसलमानों की उस मुख्य आयत को ग़लत सिद्ध करूं जिसे मुसलमान कुरआन के उन्नत ज्ञान के साक्ष्य के रूप में प्रयोग करते हैं, कुरआन के लेखक द्वारा भ्रूण विज्ञान के ज्ञान के अन्य कुछ दावों को देखना महत्वपूर्ण है। ये आयतें और एक हदीस हमें यह समझने में सहायक होंगी कि जब भ्रूण विज्ञान की व्याख्या की बात होती है तो कुरआन का लेखक कहां दिखता है। आइये इस आयत को देखें:

> वह ऐसे तरल (पानी) से निर्मित हुआ है जो पीठ और सीने की
> हड्डियों के बीच में से निकलता है। (86:6-7)

मुसलमान विद्वान प्राय: इस आयत का उल्लेख नहीं करते हैं, क्योंकि वे अभी तक इसके औचित्य को सिद्ध करने का उपाय नहीं ढूंढ़ सके हैं। इस आयत के अनुसार मानव तरल (स्पर्म) द्वारा निर्मित हुआ है और स्पर्म पीठ और सीने की हड्डियों के बीच बनता है। कुरआन के अनुसार, यही वो स्थान हैं जहां स्थूल रूप से स्पर्म बनता है:
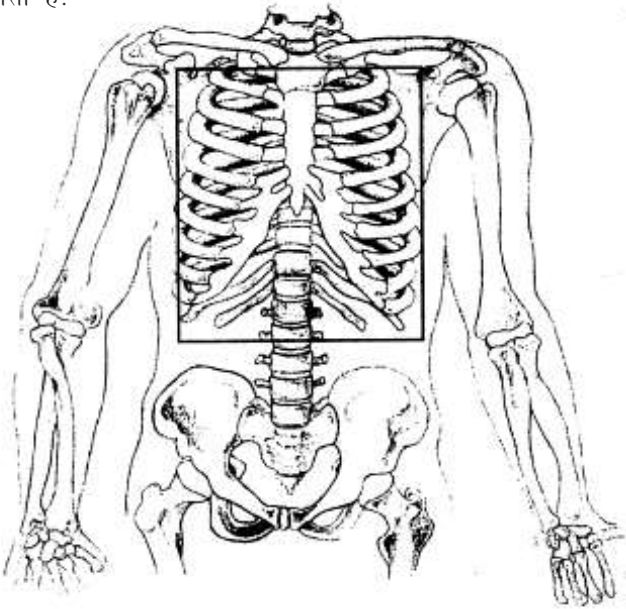
जिस प्रकार मुस्लिम विद्वान अन्य त्रुटिपूर्ण आयतों पर बात करने से बचते हैं, वैसे ही इस आयत से भी मुंह चुराते हैं, क्योंकि वे इस आयत की बनावटी व्याख्या कर पाने में अभी तक सफल नहीं हुए हैं। किसको पता था कि हमारे अंडकोष पसलियों और पीठ की अस्थि (मेरुदंड) के बीच छिपे होते हैं? कुछ मुस्लिम विद्वान यह दावा करते हैं कि वीर्य जो कि प्रॉस्टेट (पुर:स्थ ग्रंथि) से आता है, उसके बनने के लिये द्रव्य (पानी) की आवश्यकता होती है। चलिये, यहां तक सही मान लेते हैं, किंतु प्रॉस्टेट ग्रंथि तो सीने की पसलियों और पीठ की अस्थि के पास दूर-दूर तक नहीं पायी जाती। यह दूसरी आयत दावा कर रही है कि वीर्य पात के बाद यह चिपचिपा पिंड (थक्का) बन जाता है और तब शिशु का लिंग निर्धारित होता है।

> क्या वह नहीं था वीर्य की बूंद, जो बूंद-बूंद गिराई जाती है?
> फिर वह चिपचिपा पिंड हुआ, और (अल्लाह ने, बनाया (उसका
> आकार, तथा (उसे, सुडौल किया। और तब उसमें से बनाया,
> नर और मादा। (75:37-39)

निश्चित रूप से इस आयत में दी गयी बातें झूठ हैं, क्योंकि शिशु का लिंग उसी क्षण निर्धारित हो जाता है जब गर्भ ठहरता है। कुरआन के उस झूठे दावे का समर्थन इस स्वीकृत हदीस में भी किया गया है:

रसूल बोले: 'प्रत्येक गर्भ में अल्लाह एक फ़रिश्ता नियुक्त करता है, जो बताता है, ''हे ख़ुदा! वीर्य की एक बूंद, हे ख़ुदा! एक पिंड (थक्का)। हे ख़ुदा! मांस का थोड़ा सा लोथड़ा।'' तब यदि अल्लाह अपनी रचना (पूरा करना, चाहता है तो फ़रिश्ता पूछता है, ''हे अल्लाह!, यह नर होगा या मादा, अभागा होगा या सौभाग्यवान तथा इसकी व्यवस्था कितनी होगी? और इसकी आयु क्या होगी?'' अत: ये सब तभी लिखा दिया जाता है जब बच्चा औरत के गर्भ में होता है।' 68

यह आश्चर्यजनक है कि कैसे मुसलमान इन आयतों के वैज्ञानिक प्रकृति का दावा तो करते हैं, परंतु फ़रिश्तों का हाथ होने की अवैज्ञानिक बात को पूर्णत: दबा जाते हैं। तर्क के लिये, भले ही हम फ़रिश्तों के इस खेल को अनदेखा कर दें, पर यह हदीस इस आयत की व्याख्या विस्तार से कर रही है और यह दावा कर रही है कि वीर्य लोथड़े में रूपातंरित होता है तथा लोथड़ा मांस में रूपांतरित होता है और तब शिशु का लिंग निर्धारित होता है। हदीस के शेष भाग पर बात

करना व्यर्थ है। अब आइये, उस मुख्य आयत को देखते हैं जिसे मुस्लिम विद्वान बड़े आत्मविश्वास के साथ इस्लाम द्वारा दिये गये उन्नत भ्रूण विज्ञान के साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करते हैं:

> और हमने मनुष्य को मिट्टी के सार से उत्पन्न किया है। तब हमने उसे सुरक्षित स्थान में वीर्य बनाकर रख दिया। इसके पश्चात हमने वीर्य की बूंद को चिपचिपा पिंड (लोथड़े) में परिवर्तित कर दिया, और हमने उस पिंड को (मांस का लोथड़ा बना दिया, और फिर हमने (लोथड़े से, अस्थियां (हड्डियां) बनायीं, और हमनें अस्थियों पर मांस लपेट दिया। फिर उसे एक अन्य रूप में रच दिया। तो अल्लाह ऐसा कृपालु है, सबसे अच्छी उत्पत्ति करने वाला है। (23:12-14)

अब यह वीर्य गर्भ के भीतर सुरक्षित रखा जा रहा है। यह वीर्य तब एक पिंड (लोथड़े) में परिवर्तित हो जाता है और फिर यह मांस व अस्थियों में रूपांतरित हो जाता है और अचानक! आप एक मानव बन जाते हैं। बहुत से मुसलमान औरत के गर्भ में बच्चे के विकास की वास्तविक प्रक्रिया इसे ही मानते हैं। इस आयत को देखने की दो दृष्टि है:

1. एक सामान्य व्यक्ति की दृष्टि जो विवरण को तो नहीं जानता, पर कुछ सीमा तक बाहर से प्रेक्षण कर सकता है।
2. आधुनिक ज्ञान के आलोक में अधिक गंभीर विश्लेषण।

पहली दृष्टि

मैं कोई भ्रूणविज्ञानी नहीं हूं, किंतु इस विज्ञान की विशेषज्ञता के बिना भी मैं बता सकता हूं कि जब हम यौन संसर्ग करते हैं तो पुरुष वीर्य निकालता है, अत: इसका बच्चे उत्पन्न होने से कुछ न कुछ सम्बंध तो है। जब यह वीर्य महिला के भीतर जाता है तो कुछ ऐसा होता है जिसका परिणाम उस बच्चे के रूप में सामने आता है जो आठ या नौ माह बाद निकलता है। यह समझना या इसका अनुमान लगाना उतना कठिन नहीं है। यद्यपि इस प्रक्रिया का विवरण मुझे नहीं पता, क्योंकि अल्लाह ने उसका विवरण नहीं दिया है। बाहर से देखकर यह कहना सरल है कि यह वीर्य जायेगा और महिला के पेट में (ठोस ढंग से) बैठ जायेगा और यह कुछ छोटा सा प्रारंभ होगा और ऐसा हो जायेगा जो समय के

साथ बढ़ता जाता है, जैसा कि हम समय के साथ महिला के पेट को बढ़ता देख सकते हैं। इस आयत में 'ठोस ढंग से रखना' आता है, जिसका सीधा अर्थ है कि यह भीतर जाता है और स्वयं को ठोस ढंग से रख लेता है। कुरआन के इस ज्ञान से अब तक तो कुछ विशेष नहीं पता चला। किंतु फिर भी केवल इसी आधार पर कुरआन को ज्ञानहीन मान लेना उचित नहीं है, क्योंकि कुरआन उससे थोड़ा अधिक विवरण तो देती ही है जो उस समय के एक सामान्य व्यक्ति के रूप में मैं न दे पाया होता। कुरआन हमें बताती है कि यह एक 'चिपचिपा पिंड (लोथड़ा)' बन जाता है और फिर मांस के लोथड़े में रूपांतरित हो जाता है। 'चिपचिपा पिंड (लोथड़ा)' से अल्लाह का आशय क्या है? यदि मैं सातवीं सदी के अरब में रहने वाला व्यक्ति होता तो इस प्रश्न पर माथापच्ची करना बंद कर देता और कहता कि इसके बारे में आसमानी ज्ञान अवश्य ही मुहम्मद के पास होगा, क्योंकि मुझे तो नहीं पता कि वह चिपचिपा लोथड़ा क्या है जो कि मांस और अस्थियों में रूपांतरित हो जाता है। इस प्रक्रिया के फलस्वरूप हमारे पास एक नये बच्चे की 'रचना' हो जाती है। पर फिर बात वही है कि इस रहस्योद्घाटन में भी कुछ विशेष नहीं है। इस 'चिपचिपे लोथड़े' के अतिरिक्त इस आयत में कुछ भी ऐसा नहीं है कि सातवीं सदी के अरब का व्यक्ति होते हुए भी मैं यौन संसर्ग से लेकर बच्चे के जन्म तक की प्रक्रिया को देखकर अपनी बुद्धि से नहीं जान सकता था।

दूसरी दृष्टि

इसको देखने की दूसरी दृष्टि अर्थात आधुनिक ज्ञान के आलोक में गंभीर विश्लेषणात्मक दृष्टि कहीं अधिक रोचक और निस्संदेह उत्तम भी है तो क्यों न अपनी दृष्टि के विस्तार के लिये आधुनिक ज्ञान का उपयोग किया जाये?

मुहम्मद ऐसा क्या जानता था जो कि उसके समय का कोई अन्य सामान्य व्यक्ति नहीं जानता था? इससे पूर्व कि मैं विस्तार में जाऊं, मुझे इस आयत के विशिष्ट शब्द के अनुवाद पर विवाद को समझना चाहिये। इस आयत में मुहम्मद ने एक शब्द 'अलकाह' का प्रयोग किया है, जिसके दो अर्थ हैं:

1. चिपचिपा रक्त का लोथड़ा (सही अनुवाद में प्रयुक्त)
2. जोंक जैसा तत्व (हारुन याहया जैसे मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त)

चूंकि जो मुसलमान दूसरे अर्थ का प्रयोग करते हैं वो दावा करते हैं कि बच्चे के

विकास के प्रथम चरण में भ्रूण एक जोंक के जैसा दिखता है, जैसा कि निम्न चित्र में दर्शाया गया है तो यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस शब्द का प्रयोग क्यों किया गया:

क. 24-25 दिन का भ्रूण

B. Leech or bloodsucker

ख. जोंक

चित्र 7.1

साभार: Islampapers-com

यह संभवत: एकमात्र चरण है जिसमें मुसलमान भ्रूण के चित्र के किसी भाग को खींच सकते हैं, सीधा कर सकते हैं, अथवा हटा सकते हैं जिससे कि वे भ्रूण को जोंक के जैसा दिखा सकें। जबकि वास्तविकता यह है कि 24 दिन का भ्रूण कुछ निम्न प्रकार से दिखता है:
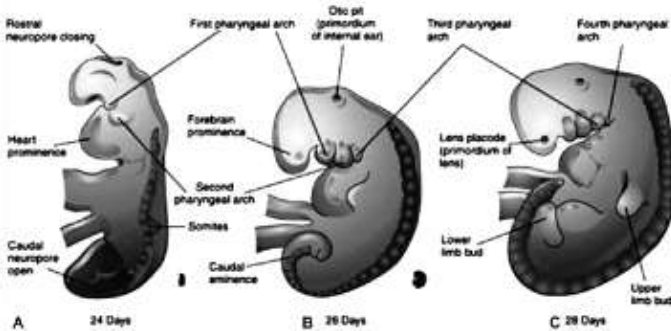
चित्र 7.2

यह भ्रूण दिखने में वृक्क (किडनी) जैसा कुछ है, किंतु निश्चित ही मुहम्मद नहीं जानता था कि वृक्क कैसा दिखता है। यह बात और है कि मुहम्मद के पहले ही चिकित्सक जान चुके थे कि वृक्क, यकृत (लीवर) अथवा हृदय कैसा दिखता है। ध्यान दीजिये कि किस प्रकार पहले चित्र में मज़हबी पक्षकारों ने भ्रूण को अपनी सुविधानुसार चित्रित कर दिया और चित्र से हृदय को हटा दिया जिससे कि वो इसे दिखने में जोंक जैसा बना सकें। यह भी ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि सभी प्राचीन तफ़्सीरों में अलकाह का अनुवाद रक्त के लोथड़े के रूप में किया है, न कि जोंक के रूप में। इस हदीस का अवलोकन कीजिये:

> अल्लाह के रसूल, सच और सच्चे ढंग से प्रेरित, बोले, 'मानव (की रचना का तत्व, 14 दिनों तक औरत के गर्भ में एक साथ रखा जाता है और तब वह इतनी ही अवधि में मोटे रक्त के लोथड़े में परिवर्तित हो जाता है और फिर इतनी ही अवधि में यह मांस के टुकड़े में परिवर्तित हो जाता है।' (सही बुख़ारी, अंक 4, पुस्तक 54, संख्या 430)

यह निष्कर्ष निकालना विश्वसनीय होगा कि मुहम्मद का आशय 'चिपचिपे लोथड़े' से था, न कि जोंक जैसे किसी तत्व से। यदि हम 'चिपचिपे लोथड़े' के अर्थ को लेकर चलें तो कुरआन और मुहम्मद का यह दावा नितांत झूठा सिद्ध होता है, क्योंकि भ्रूण के विकास में कभी ऐसा चरण नहीं होता है जहां भ्रूण चिपचिपा रक्त लोथड़ा या भ्रूण तत्व के लिये कोई रक्त लोथड़ा होता हो। हमें अपनी विश्लेषलात्मक क्षमता का प्रयोग करते हुए इस आयत का अवलोकन करना चाहिये। एक सामान्य व्यक्ति के रूप में मैंने पहले भी दिखाया है कि इस आयत में कुछ विशेष नहीं है, पर तब भी मुहम्मद को इसके उल्लेख की आवश्यकता का अनुभव क्यों हुआ और उसमें इतना आत्मविश्वास क्यों था?

कुरआनी आयतों में बच्चे के विकास के मूलत: चार चरण दिये गये हैं:

1. वीर्य का जमना (गर्भ)
2. चिपचिपा पिंड (लोथड़ा)
3. मांस और फिर अस्थि
4. एक नयी रचना

मुहम्मद से 500 वर्ष पूर्व एक यूनानी चिकित्सक गैलेन था, जिसकी मृत्यु 210 ईसवी में हुई। गैलेन ने बच्चे के विकास की प्रक्रिया पर विस्तार से लिखा। उसने इस संबंध में जो लिखा है वह निम्नलिखित है:

> इसमें जो पहला है, वह है जिसमें वीर्य (अरबी में सीमन या नुतफ़ाह, का रूप रहता है। जो गर्भपात और सूक्ष्म विश्लेषण दोनों में दिखता है। उस समय 'सर्वाधिक चमत्कारी' हिपोक्रेट्स ने भी जीव के समानुरुपण (बनावट) को तब तक भ्रूण नहीं कहा था। जैसा कि हमने अभी सीमन के प्रकरण में सुना कि यह छठे दिन उड़ेला गया, वो अभी इसे सीमन ही कहते हैं। किंतु जब इसमें रक्त (अरबी में चिपचिपा लोथड़ा अथवा अलकाह, भर गया होता है, और हृदय, मस्तिष्क व यकृत अभी तक अस्पष्ट व आकारहीन होते हैं, यद्यपि वे इस समय तक स्पष्ट ठोस व विशेष आकार ले चुके होते हैं तो यह द्वितीय अवधि होती है। भ्रूण मांस के रूप में आ चुका होता है और सीमन के रूप में अब नहीं होता है। तद्नुसार आप देख सकते हैं कि हिपोक्रेट्स भी इस प्रकार के रूपाकार को सीमन नहीं कहता है, अपितु जैसा कि कहा गया था, वह इसे भ्रूण कहता है।
>
> यह भी ध्यान दीजिये कि किस प्रकार गैलेन ने इसे रक्त के रूप में इंगित किया है, न कि जोंक के रूप में। यदि गैलेन की शेष बातों की नक़ल उतार ली जाये तो जो निकलकर आयेगा उससे यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि मुहम्मद ने भी इसकी नक़ल की थी। इसके अतिरिक्त, यदि अल्लाह कुछ गुप्त संदेश देना चाहता था तो वह और अच्छे शब्द का प्रयोग कर सकता था जिससे कि बाद में **रक्त** और **जोंक** में भ्रम की स्थिति न बनें। गैलेन ने आगे लिखा जो निम्नलिखित है:

इसके पश्चात तीसरी अवधि आती है जब, जैसा कि बताया गया है, तीन प्रधान भागों और एक प्रकार की रूपरेखा एवं अन्य सभी अंगों (मांस अथवा अरबी में मुदगह, की छाया-आकृति को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

आप तीन प्रमुख अंगों को बनते हुए अधिक स्पष्टता से देख सकते हैं, उदर

के भागों को बनते हुए तनिक मंद रूप से देख सकते हैं तथा अंगों को बनते हुए तनिक और अधिक स्थिर देख सकते हैं। जैसा कि हिपोक्रेट्स ने बताया, बाद में वे 'टहनियों' को गढ़ते हैं। इस शब्द 'टहनी' का प्रयोग इसलिये किया गया, क्योंकि उन अंगों पौधों की शाखाओं की समरूपता से इंगित किया गया है।

> चौथी और अंतिम अवधि उस स्तर पर आती है जब अंगों के सभी भाग पृथक-पृथक हो जाते हैं और इस स्तर पर भी 'सर्वचमत्कारी' हिपोक्रेट्स अब इस भ्रूण को अविकसित भ्रूण नहीं कहकर बच्चा कहते हैं, वह कहते हैं कि यह एक जीव के जैसे हिलता-डुलता है और पूर्णतः आकारयुक्त हो चुका है (एक नयी रचना अथवा अरबी में खलका[60]

हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि मुहम्मद ने वही बातें बतायीं जिसकी व्याख्या उसके 500 वर्ष पूर्व गैलेन कर चुके थे। गैलेन का काम संरक्षित था और छठी शताब्दी के आरंभ में अरबी में अनुवादित किया गया था। वास्तव में मुहम्मद के कुरआन की तुलना में गैलेन ने जो बातें बतायी हैं वो अधिक विस्तृत हैं। मुसलमान विद्वानों को निश्चित ही गैलेन के कामों से अवगत कराया गया है और यह निश्चित है कि इन विद्वानों ने पहले गैलेन की व्याख्या के बारे में नहीं सुना होगा।

पहली दो आयतों का जो निर्णायक बिंदु देखा जाना है, वह यह है कि बच्चे की रचना की पूरी बात को पुरुष वीर्य से जोड़ा जाता है और यह बताया जाता है कि यह वीर्य एक सुरक्षित स्थान अर्थात गर्भ में जाता है। इसमें महिला के शरीर की कोई अन्य भूमिका जैसे कि अंडाणु (मादा बीज) का उल्लेख नहीं किया गया है। आप मोटे रूप से कह सकते हैं कि वीर्य महिला के भीतर जाता है और यह बच्चे के रूप में परिवर्तित हो जाता है, किंतु हम जानते हैं कि महिला के गर्भाशय में वीर्य महिला के अंडाणु के बिना किसी काम का नहीं होता है। बांझ औरतों में भी गर्भाशय होता है जहां यह वीर्य 'सुरक्षित स्थान' में रह सकता है, पर यदि उनका अंडाणु वैसा काम नहीं कर रहा है जैसा उसे करना चाहिये तो बच्चा नहीं होगा। सच तो यह है कि पॉलीकिस्टिक ओवैरियन सिंड्रोम (पीसीओएस) एक हार्मोन संबंधी असंतुलन होता है जो माहवारी व अंडोत्सर्ग चक्र को बाधित करता है। अंडोत्सर्ग का अभाव (जहां अंडोत्सर्ग नहीं होता है अथवा कोई अंडा नहीं

निकलता है)[67] बांझपन का सबसे सामान्य कारण है। यही समझ न पाने की ग़लती गैलेन ने की थी और इसलिये उनकी नकल करने वाले ने भी यही ग़लती की। हम समझ सकते हैं कि मुहम्मद कुरआन में इसे डालते समय इतने आत्मविश्वास से क्यों भरा था। गैलेन द्वारा दी गयी जानकारी के कारण उस समय गर्भ और प्रजनन को लेकर इसी मत पर विश्वास किया जाता था। पर प्रश्न यह है कि मुहम्मद ने गैलेन के काम को कैसे जाना? जुंदिशपुर में चिकित्सा का एक बड़ा केंद्र हुआ करता था। जुंदिशपुर का क्षेत्र आज दक्षिण-पूर्वी ईरान हो गया है। एक अरब चिकित्सक हारिस इब्ने-कलादा था जो औषधियों के विषय में ज्ञान लेने के लिये जुंदिशपुर गया था।

जब हारिस मक्का वापस गया तो मुहम्मद ने अपने अनुयायियों को चिकित्सा उपचार के लिये उसके पास भेजा। यह मानना विश्वसनीय है कि हारिस को गैलेन के कार्य का पता था और उसने यह ज्ञान उन रोगी अनुयायियों के माध्यम से मुहम्मद के पास पहुंचा दिया। मुहम्मद ने इस रचना प्रक्रिया को अपने लेखक इब्ने-अबी साराह से बताया। जैसा कि मुहम्मद के अधिकांश अनुयायी कहते, इब्ने-अबी साराह बोला, 'कृपा का सागर अल्लाह, रचने वालों में सर्वोत्तम।'[61] यह ज्ञान अल्लाह के शब्द नहीं थे, इस तथ्य के बाद भी मुहम्मद ने इसे उस आयत में जुड़वा दिया। इस पर भी ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि इब्न अबी साराह ने अन्य घटनाओं में भी मुहम्मद का ऐसा ही व्यवहार देखा तो उसने इस्लाम छोड़ दिया। इब्ने-अबी ने स्पष्ट रूप से देखा कि मुहम्मद अपनी इच्छानुसार मनचाहा शब्द जुड़वा या हटवा रहा था और यह इस बात का साक्ष्य था कि कुरआन के शब्द मुहम्मद के थे, न कि खुदा जैसी किसी पारलौकिक सत्ता के। यही कारण है कि मुहम्मद ने जब मक्का जीता तो उसने अब्दुल्ला इब्ने-अबी साराह की हत्या का आदेश दिया और उसे जीवन देने के लिये फ़िरौती निश्चित करने के स्थान पर उसकी हत्या करा दी।[62]

लवण (नमक) व ताज़ा जल भ्रांति

आधुनिक विज्ञान द्वारा कुछ प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या व प्रक्रिया स्पष्ट की जा चुकी है। पर मुसलमान आज भी आधुनिक ज्ञान के स्थान पर अपने पवित्र पुस्तक पर विश्वास कर रहे हैं। नीचे की दो आयतों पर विचार कीजिये:

और वही है जिसने (एक ही साथ, दो सागरों को छोड़ा, जिनमें

> से एक मीठे जल वाला है और दूसरा लवणीय (नमकीन) व कसैला है तथा उसने दोनों के बीच में एक अवरोध (बैरियर) लगा दिया, जिससे दोनों मिलें ना। (25:53)
>
> उसने दो सागर बहा दिये, जिनका संगम होता है। उन दोनों के बीच एक बैरियर (अवरोध) है (तो) वे एक-दूसरे से मिल नहीं सकते। (55:19-20)

ये दोनों आयतें स्पष्ट बता रही हैं कि अल्लाह ने ताज़े जल और नमकीन जल के बीच अवरोध (बैरियर) बनाया और ये दोनों एक-दूसरे में मिलती नहीं हैं। यदि आप वास्तव में उस बिंदु पर देखेंगे जहां ताज़ा जल नमकीन जल से मिलता है तो ऐसा प्रतीत होगा कि दोनों प्रकार के जल मिल नहीं रहे हैं तथा आप जल के रंग में अंतर पायेंगे। मुहम्मद ने संभवतया सोचा होगा कि इसी कारण से नदियों का जल ताज़ा रहता है और समुद्री जल से प्रदूषित नहीं होता है।

पहला बिंदु तो यह है कि समुद्री जल नदियों के जल को दूषित नहीं करते, क्योंकि नदियां समुद्र से ऊंचाई पर होती हैं, अतः नदी का प्रवाह समुद्र की ओर होता है, न कि समुद्र का प्रवाह नदी की ओर (जब तक कि वैश्विक समुद्री स्तर उठ न जाये, ऐसी स्थिति में आपको नयी नदियां मिलेंगी जो औसत समुद्र तल से ऊंचाई पर हैं)। एक मुसलमान पूछ सकता है कि फिर समुद्र व नदियों के बीच बैरियर का आभास क्यों होता है। हां तो, उत्तर अत्यंत सीधा है: ताज़ा जल का घनत्व समुद्री जल से भिन्न होता है, अतः जब वे एक-दूसरे के संपर्क में आते हैं तो वे सतह के नीचे अति धीमी गति से मिलते हैं।

यदि ताज़े जल में कभी नमकीन जल नहीं मिला होता तो पृथ्वी के अस्तित्व के सम्पूर्ण काल में हमें एक ही जलस्तर न मिलता। हम जानते हैं कि वैश्विक तापमान बढ़ रहा है, जो समुद्री जल स्तर के बढ़ने का कारण बन रहा है। कोई मुसलमान जो यह मानता है कि नमकीन और ताज़ा जल आपस में नहीं मिलते हैं, उसे समुद्री जल स्तर में वृद्धि को भी नकारना चाहिये, क्योंकि यदि नमकीन व ताज़ा जल नहीं मिलते तो यह वृद्धि नहीं होती। आप आधा गिलास समुद्री जल और आधा गिलास नल का जल भी ले सकते हैं और फिर उन्हें एक ग्लास में मिला दीजिये, फिर देखिये क्या होता है। इस साधारण प्रयोग का परिणाम आपकी कुरआनी आयतों की धज्जियां उड़ा देगा।

फ़िरऔन का शरीर (रैमसेस II)

कुरआन के बारे में अज्ञानता व भ्रम है और फिर उसमें सीधे-सीधे तथ्यों को तोड़ा-मरोड़ा भी गया है। इस कुरआनी आयत पर विचार कीजिये:

> और हमने बनू इस्राईल को सागर पार करा दिया, तो फ़िरऔन और उसकी सेना ने अत्याचार व शत्रुतावश उनका पीछा किया। यहां तक कि जब वह डूबते हुए जलमग्न होने लगा तो बोला: मैं विश्वास करता हूं कि उसके अतिरिक्त कोई पूज्य नहीं है, जिस पर बनू इस्राईल विश्वास करते हैं तथा मैं मोमिनों में से हूं। (अल्लाह ने कहा) अब? और तुमने पहले (अल्लाह की, अवज्ञा की थी और भ्रष्टों में से थे? तो आज हम तेरे शव को बचा लेंगे, जिससे कि तू उनके लिए, जो तेरे पश्चात होंगे, एक (सीख देने वाला) चिह्न बन जाये। और वास्तव में, बहुत-से लोग, हमारे चिह्नों से अचेत रहते हैं।' (10:90-92)

मुसलमान इस आयत को ऐसे लेते हैं कि अल्लाह संसार को बता रहा है कि तुमसे पहले के लोग (जैसे कि रैमसेस) भ्रष्ट थे और यह कि अल्लाह ने उनके शरीर को सुरक्षित रखा है जिससे कि वे उनके सामने एक उदाहरण के रूप में रहें, जो अल्लाह की अवज्ञा का दुस्साहस करते हैं। अल्लाह यही कह रहा है, किंतु उसकी इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है। हां, यह अवश्य है कि यह जानकारी उपलब्ध थी कि लगभग सभी फ़िरऔन अपने शरीर को ममी के रूप में सुरक्षित रखते थे और मुहम्मद के समय यह जानकारी सबके पास थी।

मुसलमान दावा करते हैं कि विज्ञान ने इसकी पुष्टि की है कि **रैमसेस II** के अवशेष उसके डूबने का चिह्न दर्शाते हैं। यह आयत विशेष रूप से कहती है कि **रैमसेस II** ने लाल सागर के दरार में मूसा का पीछा किया था और जब अल्लाह ने वह दरार बंद कर दी तो **रैमसेस II** ने इस्लाम स्वीकार कर लिया। अगली आयत फिर कहती है, 'हम तुम्हारे शव को बचाकर रखेंगे जिससे कि तुम उन अन्य लोगों के सामने एक कलंक के रूप में उपस्थित रहो जो तुम्हारे बाद साथ आ रहे हों।' अत: जब हम कहते हैं कि उसका शरीर भर अस्तित्व में है तो हम सामान्यत: इसे ऐसे लेते हैं मानों कोई जीवित है, पर नाममात्र का।

किसी क्रूर या बुरे व्यक्ति के लिये यह कहने में भी यह शब्द प्रयुक्त हो सकता

है कि हां, उसका शरीर तो जीवित है, पर भीतर से वह मृत है। जो भी है, पर यह आयत वास्तव में रैमसेस II की वास्तविक मृत्यु के विषय में कुछ कहती ही नहीं है। परंतु चूंकि यह उस आयत की ऐसी व्याख्या है जिसे मुसलमान प्राथमिकता देते हैं तो हम पद्धति बी पर चलेंगे। प्राचीन मिस्र के इतिहास के विद्वानों में रैमसेस II के जीवन की इस कथा को नकारने को लेकर कोई विवाद नहीं है। तो फिर यह कोरा झूठ कहां से आया? रैमसेस II के शरीर पर डूबने के चिह्न हैं, यह दावा करने वाला पहला और एकमात्र व्यक्ति डॉ. मौरिस बूसैली है। इससे पहले कि मैं इसके विवरण में जाऊं कि डॉ. बूसैली का क्या कहना था, यह देखना महत्वपूर्ण है कि डॉ. बूसैली कौन था?

डॉ. मौरिस बूसैली फ़्रेंच चिकित्सक था और फ़्रेंच मिस्री प्राचीन इतिहास समाज का सदस्य था। मूलत: वह वैसा ही एक सामान्य चिकित्सक था, जैसा कि वो स्थानीय चिकित्सक होता है जिसके पास आप अस्वस्थ होने पर उपचार के लिये क्लीनिक जाते हैं। हां, वह मिस्र के प्राचीन इतिहास समाज का सदस्य अवश्य था, किंतु केवल इससे ही वह प्राचीन मिस्र के इतिहास का विद्वान नहीं हो जाता वैसे ही जैसे कि किसी अव्यवसायिक खगोल विद्या समूह का सदस्य होने भर से कोई खगोलशास्त्री नहीं हो जाता। खगोलशास्त्री होने के लिये हमें खगोल-भौतिकी या ऐसे ही किसी विषय में पीएचडी पूरी करनी होगी। डॉ. बूसैली के पास नृविज्ञान या प्राचीन मिस्र के इतिहास विषय में कोई प्रशिक्षण भी नहीं था।

फिर डॉ. बूसैली ने यह दावा क्यों किया? 1973 में डॉ. बूसैली सऊदी अरब के सुल्तान फैसल के पारिवारिक चिकित्सक बना। सऊदी का इतिहास रहा है कि वह या तो हिंसा अथवा कट्टरपंथ के माध्यम से इस्लाम का प्रचार करते रहे हैं। डॉ. बूसैली ने 80 के दशक में उस समय रैमसेस II की ममी का अध्ययन किया और जब वो फ़्रांस वापस आया तो बताने लगा कि रैमसेस II के शरीर में लवण (नमक) होना यह दर्शाता है कि वह निश्चित ही डूबा होगा। उसने आगे दावा किया कि रैमसेस का शव बहकर समुद्र तट पर आ गया होगा और मिस्रवासियों ने वहां से उसका शव तत्परता से उठाकर ममी के रूप में सुरक्षित रख दिया होगा।

कहानी के अनुसार, डॉ. बूसैली को तब उपरोक्त आयत बतायी गयी। ऐसा कहा जाता है (यद्यपि इसका कोई प्रमाण नहीं है) कि उत्तेजना में उसने कहा, 'मैं इस्लाम

स्वीकार कर रहा हूं।' मेरे संज्ञान में प्राचीन मिस्र के इतिहास का ऐसा कोई प्रतिष्ठित विद्वान नहीं है, जिसने डॉ. बुसैली के उन दावों के जैसा कोई दावा किया हो।

दूसरी बात यह है कि यह कुरआनी आयत ऐसा नहीं कहती है कि रैमसेस II डूब गया था और फिर उसका शव बहकर किनारे पर आ गया तथा इसके बाद उसे ममी के रूप में संरक्षित किया गया। प्राचीन काल के मिस्रवासियों को शव का संरक्षण करने की प्रक्रिया का ज्ञान था। यूनानी इतिहासकार हेरोडोट्स (इतिहास के जनक के रूप में विख्यात) ने ईसा से पांच सौ वर्ष पहले मिस्र में ममी संरक्षण के प्रचलन के विषय में लिखा था, अतः उस समय तक शिक्षित यूनानी लोग मिस्र के इस कर्मकांड से भलीभांति परिचित थे। बाद की सदियों में शिक्षित रोमन भी यूनानी साहित्य से परिचित हो गये थे तो वे भी इस तथ्य को भली प्रकार से जानते थे। इसलिये भले ही हम इस आयत को एक ऐसे दावे के रूप में लें कि अल्लाह ने रैमसेस II के शव को संरक्षित किया था, पर यह दावा गंभीरता से नहीं लिया जा सकता है, क्योंकि प्राचीन मिस्र के लोग अपने राजाओं के शवों का ममी के रूप में संरक्षण रैमसेस II के अस्तित्व के बहुत पहले से किया करते थे। इसके अतिरिक्त डॉ. बूसैली का यह निष्कर्ष इस तथ्य की भी उपेक्षा करता है कि उस समय रैमसेस II की आयु 90 वर्ष थी और वह इस स्थिति में नहीं था कि मूसा का पीछा कर पाता, यहां तक कि वह अपने रथ से भी पीछा नहीं कर सकता था। उस पर गठिया का गंभीर प्रकोप था, इसलिये वह विषम क्षेत्रों में रथ पर खड़े होकर दौड़ना तो दूर, पैदल भी नहीं चल सकता था।

अंत में, रैमसेस II की ममी में लवण होने का कारण संरक्षित करने वाली वह सामग्री है जिसका उपयोग मिस्रवासी ममी बनाते समय करते थे। सभी ममियों में वही लवण तत्व देखा जा सकता है। यदि हम डॉ. बूसैली के दावे को गंभीरता से लें तो हमें यह अवश्य ही मानना पड़ेगा कि प्रत्येक फ़िरऔन की ममी मृत अवस्था में इसलिये मिली कि वे डूब गये थे। यदि डॉ. बूसैली ने अन्य ममियों का अध्ययन किया होता तो इस लवण तत्व के बारे में जान जाते, पर मुझे अचंभा होता है कि उन्होंने यह निष्कर्ष क्यों निकाला कि रैमसेस II डूब गया था। यद्यपि डॉ. बूसैली ने कभी आधिकारिक रूप से इस्लाम स्वीकार नहीं किया और यदि हम मुसलमानों को उस दावे को मान भी लें कि उन्होंने ऐसा किया था तो जो व्यक्ति एक अस्पष्ट अर्थों वाली आयत को सुनकर बोल पड़े 'मैं इस्लाम स्वीकार करता हूं', उसकी बुद्धिमत्ता

की अच्छी छवि तो नहीं ही बनती है। डॉ. बूसैली के बचाव में, मैं यह नहीं सोचता हूं कि वह एक अल्प बुद्धि के व्यक्ति थे तो मुझे इस पर संदेह है कि उन्होंने ममी के अपनी अन्वेषण के बाद कभी कहा भी होगा 'मैं इस्लाम स्वीकार करता हूं।' परंतु यदि उन्होंने ऐसा किया भी होगा तो संसार में बहुत से ऐसे लोग हैं जो विभिन्न कारणों से अपना मज़हब परिवर्तित करते हैं, पर डॉ. बूसैली के इस्लाम स्वीकार करने के पीछे जो कारण बताया गया वह अत्यंत अविश्वसनीय है।

पर्वतों का ज्ञान

जिस प्रकार पहले की तीन आयतों को कुरआन के चमत्कार के रूप में प्रचारित किया जाता है, उस प्रकार इस आयत का प्रचार नहीं किया जाता है। हां, कुछ 'मुस्लिम विद्वान' इस आयत को कुरआन के लेखक के ईश्वरीय होने के साक्ष्य के रूप में अवश्य प्रस्तुत करते है:

क्या हमने धरती को आराम करने वाला स्थान नहीं बनाया? और पहाड़ों को इसके खूंटे के रूप में?

> और उसने धरती में पर्वत गाड़ दिये, जिससे तुम्हें लेकर डोलने न लगे
> और (बनायीं) नदियां और मार्ग, जिससे कि तुम राह पाओ। (16:15)

भले ही आप एक मुसलमान हैं, पर आप भी संभवत: सोच ही रहे होंगे कि इस आयत में कुछ भी विशेष नहीं है। आप सही हैं, क्योंकि इसमें कुछ भी विशेष नहीं है। मूलत: यह आयत कह रही है कि अल्लाह ने मनुष्यों के रहने के लिये धरती बनायी और उस पर पहाड़ को रखा। स्पष्ट है कि इसमें कोई विशेष बात नहीं है, क्योंकि हम देख सकते हैं कि पहाड़ हवा में लटके नहीं होते हैं, अपितु वे धरती पर जमे होते हैं। दूसरी आयत सीधे-सीधे कह रही है कि अल्लाह ने धरती पर पहाड़ों को लाकर जमा दिया, जिससे कि वे हिले नहीं। प्रथम दृष्टया, इसमें कुछ विशेष बात नहीं दिखती है, किंतु सदा के जैसे ये मुस्लिम विद्वान इन अस्पष्ट आयतों के शब्दों को तोड़मरोड़ कर अपना अर्थ निकालते हैं। कुछ मुस्लिम विद्वान यथा इस्लाम-गाइड डॉट कॉम के प्रचारक इस आयत का अनुवाद कर इसकी व्याख्या यूं करते हैं:

> क्या हमने धरती को बिछौना नहीं बनाया, और पर्वतों को मेख़
> (खूंटा)? (78:6-7)

मेख़ शब्द डालकर (उन लोगों के जैसे जो तम्बू गाड़ने के अभ्यस्त हैं), ये

विद्वान यहां यह कह रहे हैं कि जिन पहाड़ों को आप देखते हैं, उनके नीचे गहरी जड़ें हैं जो आप नहीं देख सकते।

नीचे दिये गये आंकड़ों का अवलोकन कीजिये:
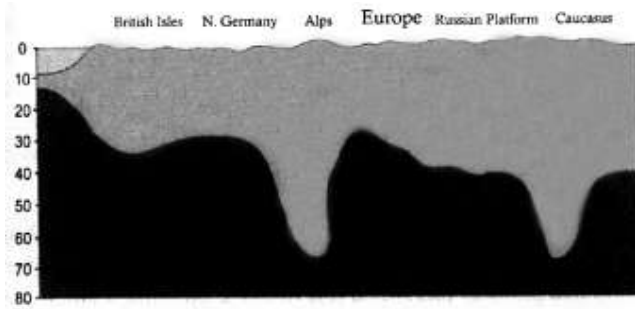
चित्र 7.3

यदि आप इन आंकड़ों को देखेंगे तो कह उठेंगे, 'अहा! कुरआन निश्चित ही ईश्वरीय पुस्तक है।' यद्यपि इन मुस्लिम विद्वानों की अधिकांश बातों के जैसे ही ये चित्र भी धोखा देने वाले और अत्यंत पक्षपाती हैं।
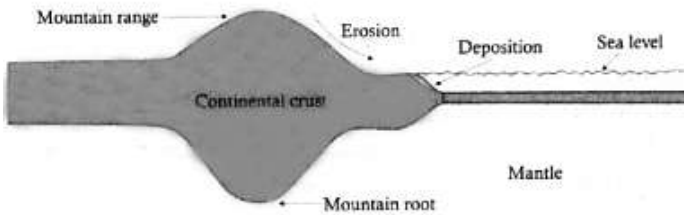
चित्र 7.4

साभार: Islam-guide.com

पहला बिंदु: यह सही है कि पहाड़ों की जड़ें होती हैं, किंतु मुहम्मद को यह पता नहीं होगा। यह दावा उतना ही झूठ से भरा है जितना कि यह दावा कि रैमसेस II की मृत्यु मूसा का पीछा करते हुए हुई। मुहम्मद के समय से पहले ही पुस्तकों ने 'पहाड़ों की जड़ों' के विषय में उल्लेख किया था। जॉब की बाइबिल के इस सूक्त का अवलोकन कीजिये:

> लोग कठोर चट्टानों पर अपने हाथों से प्रहार करते हैं और पहाड़ों की जड़ें दिखने लगती हैं। (28:9)

अथवा जोना के बारे में क्या?

> पहाड़ों की जड़ों तक मैं डूबा। इसके नीचे की धरती ने मुझे सदा के लिये वहीं फंसा दिया। किंतु, हे मेरे ईश्वर, तुम मेरा जीवन उस ख़ंदक़ से ऊपर ले आये। (2:6)

मुसलमानों के विपरीत ईसाई अपनी बाइबिल की उक्तियों को पकड़ने और इसमें उन्नत वैज्ञानिक ज्ञान का दावा करने में उतने अच्छे नहीं हैं। मुहम्मद ने अन्य दूसरी कहानियों के जैसे ही संभवत: इस कहानी को भी बाइबिल से ही चुराया। कुछ मुसलमान कहेंगे कि चूंकि बाइबिल भी ईश्वर की पुस्तक है, तो भले ही इसे मानवों द्वारा विकृत कर दिया गया है, पर इसमें कुछ तो ईश्वरीय ज्ञान जैसे पवर्तों की जड़ें, नूह की बाढ़, आदम व हौव्वा की कहानी आदि होगा ही।

दूसरा बिंदु: पर्वतों और उनकी गहराई का वर्णन करने के लिये मेख, जड़ें या खूंटा का उदाहरण लेना सर्वोत्तम उपाय नहीं है। यदि हम वलित (परतदार) पर्वत श्रृंखलाओं (यथा हिमालय, आल्पस और ऐंडीज) को देखें तो पायेंगे कि इन पर्वत श्रृंखलाओं का निर्माण तब हुआ जब विवर्तनिक पट्टियां आमने-सामने टकराईं और इससे उत्पन्न आवेग ने पदार्थों को ऊपर आकाश की ओर तथा नीचे भू-पर्पटी (सबसे ऊपर की ठोस परत) से धरती के केंद्र की ओर धकेला, जिसके परिणाम स्वरूप पर्वत श्रृंखलाओं का निर्माण हुआ। यह सत्य है कि जो पर्वत हम सतह के ऊपर देखते हैं, वो उसके उस भाग से बहुत अधिक छोटे हैं जो सतह के नीचे है। पर खूंटा, कील, या मेख़ ऊपर से नीचे गहराई में ठोंकी जाती हैं, जबकि ये पर्वत श्रृंखलाएं दो भू-पिंडों के आमने-सामने की टक्कर का परिणाम हैं, न कि अल्लाह द्वारा किसी बड़े चट्टान को धरती की छाती में भारी हथौड़े से गाड़ने से बनी हैं। इसको सादृश्य ऐसे समझ सकते हैं जैसे कि जब मक्खन के दो टुकड़े आमने-सामने से भारी वेग से टकरा जायें तो परिणामस्वरूप आपको मक्खन का एक बड़ा टुकड़ा निकलता दिखेगा, जिसका कुछ भाग ऊपर की ओर जायेगा तो कुछ भाग नीचे की ओर जायेगा। इस प्रयोग से पर्वतों की रचना और उसकी संरचना दोनों की व्याख्या होती है।

स्पष्ट है कि सातवीं सदी के अरबियों के लिये ऐसा विज्ञान अकल्पनीय था, अत: हमें उनकी आयतें वैसी नहीं मिलती हैं। वैसे भी पर्वतों की जड़ों की व्याख्या

के लिये खूंटा वाला वर्णन काम नहीं करता है, क्योंकि यह जड़ वास्तव में किसी एक पर्वत का भाग नहीं है, अपितु यह पूरी पर्वतीय प्रणाली का भाग है। अच्छी आयत तब होती जब इसमें बताया गया होता कि आप जो भी पर्वत देखते हैं, उन सभी का एक ही ठोस पिंड है अथवा उनके नीचे की जड़ें एक ही हैं। फिर भी, 'और पर्वतों को खूंटे के रूप में' वाक्यांश से ऐसा आभास होता है कि कोई पर्वत है और यह सतह के नीचे घुसती है, जबकि वास्तव में ऐसा है ही नहीं।

यह आयत तब अधिक सही लगती, जब एक ही पर्वत होता, जैसा कि चित्र 7.4 में दिखाया गया है, क्योंकि परतदार पर्वत ऐसी पर्वत श्रृंखलाएं होती हैं जिसमें बहुत से पर्वतों की जड़ें एक ही होती हैं।

अस्पष्ट आयतों के साथ यही समस्या होती है कि लोग जैसे चाहें वैसे उनकी व्याख्या कर लेते हैं। कल्पना कीजिये, यदि पर्वत की रचना केवल ऐसे ही होती कि वाह्य अंतरिक्ष के छोटे तारे धरती की सतह पर टकराते और पर्वत का रूप ले लेते! तब तो विघटित होने की अपेक्षा इन छोटे तारों का 70 प्रतिशत भाग धरती की सतह में गहरे धंस जाता और शेष 30 प्रतिशत भाग सतह के ऊपर रह जाता। यह आयत ऐसी किसी स्थिति की व्याख्या करने के लिये पूर्णतया उपयुक्त होती। जैसा कि अल्लाह भी कह रहा है, कि हमने धरती के ऊपर पर्वत रखे और फिर खूंटे के जैसे इसे धरती के भीतर ठोंक दिया।

अल्लाह का आशय संभवतया पहले की अपेक्षा दूसरी व्याख्या से था। वैसे भी कुरआनी संसार की दृष्टि में सबकुछ बड़ा सीधा है। जैसे कि धरती बिछायी गयी, आकाश अदृश्य खंभों पर टिका है और जन्नत को एक पुस्तक के खर्रे के जैसा लपेटा जा सकता है। कुरआन की ये सब बातें विज्ञान की अपेक्षा कविता प्रतीत हो रही हैं।

तीसरा बिंदुः वलित पर्वत का दूसरा कोई प्रकार नहीं होता है। दूसरे प्रकार के पहाड़ों को भ्रंशोत्थ्य (ब्लॉक) पर्वत, ज्वालामुखी पर्वत, पठारी पर्वत और गुम्बदाकार पर्वत कहते हैं। एक ज्वालामुखी के इस क्रॉस-सेक्शन का अवलोकन कीजिये, आप स्पष्ट रूप से देख सकेंगे कि इस ज्वालामुखी की जड़ें किसी कील या खूंटे जैसी नहीं हैं।
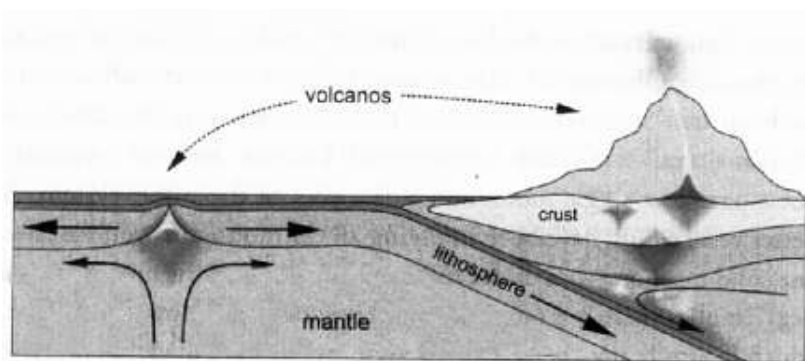
चित्र 7.3

साभार: द डीप रूट्स आफ वॉलकॉनो में रिचर्ड फोआ काट्ज

अथवा एक पठारी पर्वत के क्रॉस-सेक्शन पर विचार कीजिये। इसमें भी खूंटा या कील जैसी कोई जड़ नहीं है।
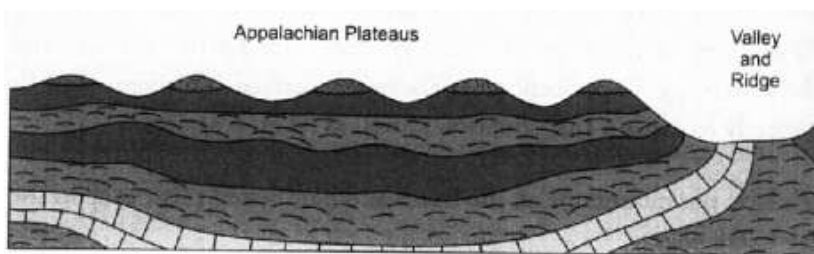
चित्र 7.4

साभार: रैडफोर्ड विश्वविद्यालय

मैं यह तो मान सकता हूं कि यदि आप आलंकारिक भाषा बोल रहे हैं तब आप पर्वतों की जड़ों को खूंटा या कील कह सकते हैं, किंतु आप इसे वैज्ञानिक तथ्य के रूप में नहीं स्वीकार कर सकते हैं। यदि मैं अल्लाह होता तो मैंने यह आयत कुछ यूं लिखा होता:

क्या तुमने नहीं देखा कि कैसे हमने धरती की परतों को टकराया, यद्यपि हमारे पास उसे बनाने के बहुत से अन्य मार्ग हैं? यदि अल्लाह चाहता है कि हम उसमें विश्वास करें तो उसे निश्चित ही इन अस्पष्ट आयतों की अपेक्षा कुछ अच्छी आयत भेजनी चाहिये थी।

समुद्र में अंधकार

> उन अंधकारों के समान हैं, जो किसी ऐसे गहरे सागर में हो जिस पर लहरें छायी हों, जिसके ऊपर समुद्र की लहर हो, उसके ऊपर बादल हों- अन्धकार पर अन्धकार हो। जब कोई (उसमें, अपना हाथ निकाले तो उसे भी न देख सके। और अल्लाह जिसे प्रकाश न दे, उसके लिए कोई प्रकाश नहीं होता है। (24:40)

मैं इस आयत को लगभग छोड़ ही देने वाला था, क्योंकि इसमें भी कुछ विशेष नहीं है। किंतु पूर्णता तक तर्क करने के लिये मैंने सोचा कि इस पर भी बात करूं।

समुद्र में कितना अंधेरा होगा, यह जानने के लिये किसी को उसकी तली में जाने की आवश्यकता नहीं है। आप अपना सिर किसी नदी में भीतर प्रविष्ट कराइये तो पायेंगे कि जैसे-जैसे नीचे जायेंगे अंधेरा बढ़ता जायेगा। मुझे यह अनुभव तब हुआ जब मैं समुद्र में पहली बार तैरने गया। उस आयत का शेष भाग इसी बात को बता रहा है जो सबको पहले से ही पता है। गहरे सागर में घुप्प अंधेरा है (वास्तव में 14 मीटर की गहराई से अंधेरा होना प्रारंभ हो जाता है और समुद्र की वास्तविक गहराई की तुलना में यह गहराई उतनी अधिक है भी नहीं)। जल की तरंगों के ऊपर तरंगे हैं और फिर हमारे पास बादल होते हैं। दस वर्ष का कोई बच्चा भी यह जान सकता है।

कुरआन और प्रमस्तिष्क

> नहीं! यदि वह नहीं रुकता, तो हम उसे नसेयाह (माथा, के बल घसीटेंगे, झूठा, पापी नसेयाह! (96:15-16)

पहला बिंदु: यह बात मुझे सदा अचंभे में डालती है कि कैसे ये आधुनिक मुस्लिम विद्वान अब भी इन शब्दों के लिये ऐसा अर्थ ढूंढ़ लेते हैं जिससे कि इन आयतों की ऐसी मनमानी व्याख्या की जा सके जो उसे उन तथ्यों के निकट ले जायें जिसे विज्ञान ने ढूंढ़ा है। मुस्लिम विद्वान ये दावा करते हैं कि ये आयतें किसी किसी ईश्वरीय लेखक द्वारा लिखी गयी हैं, क्योंकि इनमें संसार का उन्नत ज्ञान है। अपने इस दावे को आगे बढ़ाने के लिये ये मुस्लिम विद्वान इन आयतों की पुनर्व्याख्या करते रहते हैं। निश्चित रूप से यह मुसलमानों का बौद्धिक कपट है,

क्योंकि जब विज्ञान कोई अनुसंधान कर लेता है तो उसके बाद ही मुसलमान उसकी नयी व्याख्या करते हैं। ऐसा क्यों नहीं होता कि मूल आयत की बातें ही वैज्ञानिक अनुसंधान में भी सही सिद्ध हों? किसी विषय पर वैज्ञानिक अनुसंधान सामने आने के बाद शब्दों के अर्थों को तोड़मरोड़ कर इन आयतों की पुनर्व्याख्या करने की आवश्यकता क्यों पड़ती है? उदाहरण के लिये, हाल ही इस आयत के नसेयाह शब्द का अनुवाद 'मस्तिष्क के भीतरी अग्र भाग' के रूप में किया गया है, जबकि सभी पुराने अनुवादों को देखने पर पता चलता है कि इस शब्द का अनुवाद 'माथा' अथवा सिर के आगे माथे पर लटकने वाले केश के रूप में किया गया है। आइये कुछ और अनुवाद को देखते हैं:

> नहीं! यदि वह नहीं मानता है, तो हम निश्चित ही उसे माथे के बल घसीटेंगे। (सही इंटरनेशनल)
>
> उसे सावधान होने दो! यदि वह नहीं रुकता है तो हम उसे माथे के बल घसीटेंगे। (यूसुफ़ अली)

यदि हम इसे 'माथा' के रूप में लें, तभी इस आयत का पूरा अर्थ निकलता है। 'हम उनके माथे के बालों को पकड़कर घसीटेंगे'- यह थोड़ा हिंसक तो है, पर इसका अर्थ तो निकलता है। क्योंकि आप किसी के ललाट खंड (मस्तिष्क के भीतर के अग्रभाग) को पकड़कर कैसे खींच सकते हैं? आप किसी को उसके केशों, हाथों या पैरों आदि को पकड़कर खींच सकते हैं, किंतु आप किसी को उसकी आंतों, यकृत या मस्तिष्क के भीतर के अग्रभाग को पकड़कर नहीं खींच सकते हैं।

इस आयत का दूसरा भाग इस प्रश्न को जन्म देता है: कैसे केश झूठे और पापी हो सकते हैं? जब मुसलमान अल्लाह की इबादत में झुकते हैं तो उनके सिर का माथा केशों के साथ भूमि को स्पर्श करता है। हां तो, यदि आप अल्लाह के सामने नहीं झुक रहे हैं तो इसका अर्थ यह हुआ कि इबादत में आगे के केश अल्लाह के सामने नहीं झुक रहे हैं, इसलिये अल्लाह क्रोधित है और माथे के उन केशों को झूठा और पापी कह रहा है। ये मुस्लिम विद्वान चालबाज़ हैं, क्योंकि ये दावा कर रहे हैं नसेयाह का अर्थ है सिर के आगे का भाग। अरे, अच्छा! ऐसा है! फिर तो मुझे मानना पड़ेगा कि यदि इसका अर्थ सिर के आगे का भाग है तो अल्लाह इसे झूठा व पापी भी कह सकता है। जैसा कि पहले बताया गया है, इन

अस्पष्ट आयतों की व्याख्या मनमाने ढंग से किसी भी प्रकार तोड़मरोड़ कर की जा सकती है। क़ुरआन में इस शब्द का प्रयोग दो अन्य स्थानों पर किया गया है और इससे स्पष्ट भाव मिलता है कि नसेयाह माथे को इंगित कर रहा है, न कि मस्तिष्क के भीतरी भाग के अगले के भाग को:

> पापियों को उनके चिह्न से पहचाना जायेगा: और उन्हें माथे और पैरों से पकड़ लिया जायेगा। (55:41, यूसुफ़ अली अनुवाद)
>
> वे अपराधी अपने चिह्नों से जाने जायेंगे, और वे माथे और पैरों से पकड़ लिये जायेंगे। (55:41, सही इंटरनेशनल)
>
> वास्तव में मैंने अल्लाह, अपने अल्लाह और आप सबके अल्लाह पर विश्वास किया है। और कोई ताक़त नहीं, बस वही है जो उसके माथे के केश को पकड़ता है। वास्तव में, मेरा अल्लाह एक मार्ग पर है, (जो है, सीधा। (11:56, सही इंटरनेशनल)
>
> मेरा अल्लाह, आपका अल्लाह। कोई जीव नहीं, अपितु वही माथे के केशों को पकड़कर जकड़ लेता है! देखो! मेरा अल्लाह सीधे पथ पर है। (11:56, पिक्थाल)

उपरोक्त किसी भी प्रसंग में नसेयाह शब्द का अनुवाद 'मस्तिष्क के अग्र भाग' के रूप में किया जाना उचित नहीं दिखता, क्योंकि यह स्पष्ट है कि अल्लाह की प्रवृत्ति लोगों को उनके माथे के केशों और पैरों को पकड़कर खींचने की है। यदि नसेयाह का अर्थ मस्तिष्क का अग्र भाग होता तो आंतरिक मस्तिष्क का अग्र भाग खींचने और पैरों को खींचने जैसी दोनों बातों का एकसाथ कोई अर्थ नहीं होता।

दूसरा बिंदु: चलिये, हम तर्क के लिये एक बार मान लें कि अल्लाह वास्तव में नसेयाह शब्द का प्रयोग करके ललाटिकापूर्वी मस्तिष्क आवरण (माथा) को इंगित कर रहा है। जबसे मुस्लिम विद्वानों ने यह अर्थ 'ढूंढ़ा' है, उस समय की तुलना में विज्ञान ने तो जाने कितनी सारी और खोज कर ली है। यह निश्चित करने के लिये कि कोई व्यक्ति जीवित है या नहीं, अब एफ़एमआरआई का अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है।

नीचे वह चित्र है जो मस्तिष्क के उस भाग को दर्शाता है जो झूठ बोलने या कपट करने के लिये प्रयुक्त होता है।
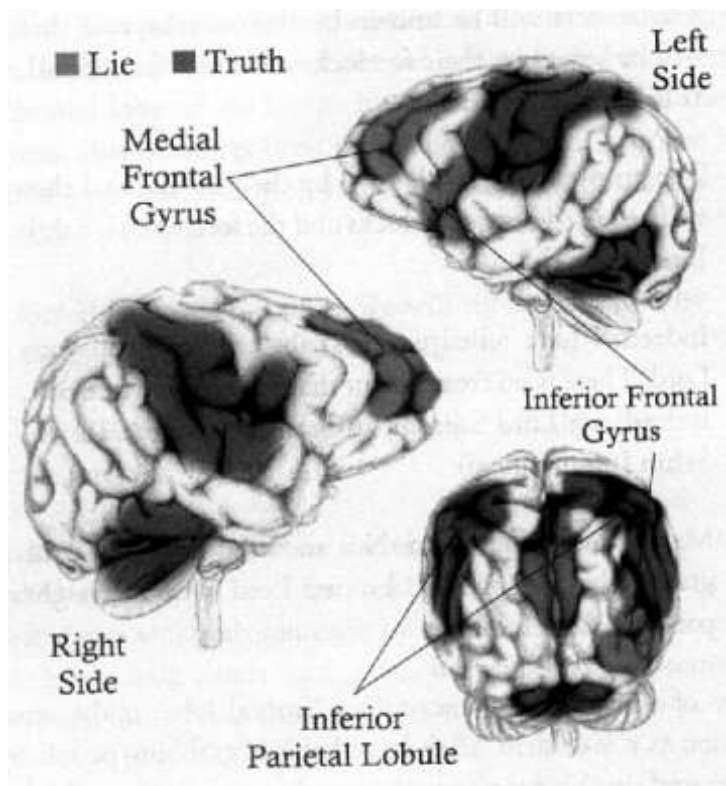
चित्र 7.5

साभार: NolieMRI

इन मुस्लिम वेबसाइटों में मस्तिष्क का पार्श्व चित्र दिखाया जाता है, जिससे ऐसा लगे कि ये मस्तिष्क के आगे का भाग है। पर यदि हम इस चित्र को ऊपर से देखें तो पता चलेगा कि यह वास्तव में मस्तिष्क के केंद्र का बायां भाग है। हां, मस्तिष्क का यह भाग तकनीकी रूप से भले ही मस्तिष्क के अग्र भाग में है, किंतु उसी प्रकार से 'मस्तिष्क का अग्र भाग' है जैसे कि हमने अध्ययन के लिये मस्तिष्क की अपनी मनचाही संरचना बनायी हो।

यदि यही चित्र वैज्ञानिकों ने बनाया होता तो मस्तिष्क के भागों को और भी छोटे-छोटे क्षेत्रों में विभाजित करके सरलता से दिखाते और वे इसे कुछ और कह सकते थे। जैसे कोई कहे कि उत्तरी ध्रुव सच में ऊपर की ओर नहीं है, पर चूंकि हमने धरती का मानचित्र ही ऐसा बनाया है तो यह नीचे की ओर दिखता है। हम

चाहें तो धरती के मानचित्र को उलट दें और तब यही उत्तरी ध्रुव नीचे की ओर दिखने लगेगा।

वर्षा और ओलावृष्टि

> क्या तुमने नहीं देखा कि अल्लाह बादलों को चलाता है? फिर उन्हें परस्पर मिला देता है। फिर उन्हें घनघोर मेघ बना देता है और फिर तुम इसमें से वर्षा की बूंदों को निकलते हुए देखते हो। और वह आकाश से (बादलों के, पहाड़ों को गिराता है जिसमें से ओले गिरते हैं, और वह फिर जिस पर चाहे इसका प्रकोप भेजता है और जिसको चाहे उसे इस प्रकोप से बचा लेता है। उसकी बिजली की चमक आंखों को लगभग अंधा बना देती है। (24:43)

कुछ मुस्लिम विद्वान यह दावा करने का प्रयास करते हैं कि इस आयत में अल्लाह का ज्ञान है। प्राचीन सभ्यताएं बहुत लंबे समय से बादल और वर्षाओले के मध्य संबंधों की प्रक्रिया को समझती थीं। ईसा पूर्व 650 के आसपास बेबीलोन के लोगों ने बादलों के आने और प्रकाश संबंधी परिघटनाओं यथा प्रभामंडल (सूर्य का प्रकाश) देखकर लघु अवधि की मौसम भविष्यवाणी करने का प्रयास किया था।

अरस्तू को मौसम विज्ञान का जनक माना जाता है। उसने चार तत्वों की अंत:क्रिया के माध्यम से मौसम की व्याख्या करने का प्रयास किया था। ये चार तत्व थे: पृथ्वी, अग्नि, वायु और जल। अरस्तू के शिष्य थियोफ़ैरस्तस ने मौसम के संकेतों पर पहली पुस्तक लिखी थी, जिसमें मौसम की भविष्यवाणी के लिये प्रयुक्त प्रेक्षणों की सूची दी गयी थी और इनमें से बहुतों का प्रयोग आज भी होता है। प्राचीन यूनान में लोग वायु की गतिविधि के साथ आकाश में सूर्य व चंद्र की स्थिति का अवलोकन कर ज्वार-भाटा जैसी परिघटनाओं की भविष्यवाणी करने तथा कृषि व समुद्री यात्रा जैसी अपने दैनिक क्रियाकलापों में सुधार के लिये अपने ज्ञान का लाभ उठाते थे।[64] उपरोक्त आयत में कुरआन का लेखक बस यही प्रकट कर रहा है कि अल्लाह बादलों को चलाता है और वर्षा व ओलावृष्टि करता है। इस आयत का दूसरा भाग यह दिखा रहा है कि अल्लाह कितना दयावान है, और फिर कहता है कि उसका उनके ऊपर नियंत्रण है जिन पर वह इस ओलावृष्टि व बिजली की चमक से प्रहार करता है।

मैं पुनः कहूंगा कि ये प्राकृतिक घटनाएं यथा वर्षा, बादल, ओलावृष्टि और बिजली की चमक साथ-साथ होती हैं। इस आयत में ऐसा कुछ विशेष नहीं है।

चपटी धरती

मुहम्मद के समय में धरती के आकार को लेकर दो सामान्य मत थे:

1: धरती गोल है (प्राचीन यूनानी और भारतीय)।

2: धरती चपटी है (सातवीं सदी में अरब में प्रचलित सामान्य मत)।

जैसा कि हमने देखा कि भ्रूण विज्ञान के प्रकरण में मुहम्मद ने प्राचीन यूनानियों के ज्ञान की चोरी की थी, किंतु इस बार वह बड़ा साहस करके अपनी इस कल्पना से चिपका रहा कि धरती चपटी है। आइये, कुरआनी आयतों में से ऐसी कुछ आयतों को देखते हैं जो बताती हैं कि धरती किसी दरी के जैसे बिछायी गयी थी:

> वह, जिसने तुम्हारे लिये धरती का बिछौना बिछाया तथा गगन को छत बनाया और आकाश की छत बनायी। (2:22)
>
> और वह धरती-हमने इसे बिछाया और उसमें पहाड़ों को गाड़कर जमाया तथा उसमें हमने सभी उचित चीज़ों (का कुछ न कुछ, उगाया। (15:19)
>
> (वही है) जिसने तुम्हारे लिये धरती को बिछौना बनाया (बिछाया) और उसमें तुम्हारे चलने के लिए मार्ग बनाये और तुम्हारे लिये आकाश से जल बरसाया तथा वहां पर विभिन्न मूल्यवान पौधे उगाये। (20:53)
>
> (वही एक है) जिसने तुम्हारे लिये धरती का बिछौना बनाया और उसमें तुम्हारे लिए मार्ग बनाये, ताकि तुम मार्ग पा सको। (43:10)
>
> और यह धरती- हमने इसे फैलाया और उसमें पर्वत जमाकर डाल दिये तथा उसमें सभी सुंदर वस्तुओं (का कुछ न कुछ, को उगाया। (50:7)
>
> तथा यह धरती, हमने बिछायी है, तो हम क्या ही अच्छे बिछाने वाले हैं। (51:48)
>
> और अल्लाह ने तुम्हारे लिए यह धरती, विस्तार बनाया है। (71:19)
>
> क्या हमने धरती को आरामगाह नहीं बनाया? और पहाड़ों को खूंटे के रूप में? (78:6-7)

और उसके बाद, उसने धरती बिछायी। (79:30)

उपरोक्त सभी 9 आयतों में पिक्थाल, यूसुफ़ अली और सही इंटनेशनल द्वारा किये गये सभी सामान्य अनुवाद धरती को 'कालीन के रूप में' अथवा 'चौड़ी दरी' के रूप में 'बिछाये गये' की ओर ही इंगित कर रहे हैं। चूंकि किसी गोल वस्तु को कालीन के रूप में लपेटा जाना संभव नहीं होता है तो आप निश्चित ही किसी गोल वस्तु को चौड़ी दरी के रूप में परिभाषित नहीं करेंगे।

पहला बिंदु: अधिकांश मुसलमान इन आयतों को जानते ही नहीं और यह भी नहीं जानते कि कुरआन धरती को चपटी होना बताता है। यदि मुसलमानों को कुरआन की बातें सच में बतायी गयी होतीं तो मुस्लिम दुनिया में भी एक और चपटी धरती आंदोलन चला होता। जिन मुसलमानों ने गोल धरती के विचार को स्वीकार कर लिया है और इन आयतों से भी परिचित हैं, उन्होंने यह मान लिया है कि इन आयतों को अक्षरश: स्वीकार नहीं किया जा सकता है। ऐसे मुसलमान कहते हैं कि आकार की भिन्नता के कारण धरती चपटी प्रतीत होती है, अत: अल्लाह धरती को चपटी होना केवल मानव की दृष्टि को ध्यान में रखते हुए इंगित कर रहा है। देखा आपने, कैसे मुसलमानों को जब सूट करता है तो मानवीय दृष्टि की रट लगाने लगते हैं और जब नहीं सूट करता है तो अल्लाह के ज्ञान का दावा करने लगते हैं। मुहम्मद के समय निश्चित रूप से मनुष्य यह नहीं जानता था कि मस्तिष्क के अग्रभाग का झूठ बोलने से कोई संबंध है या नहीं। किंतु जब मुसलमानों को लगा कि उस आयत को विभिन्न अर्थों में तोड़मरोड़ कर प्रस्तुत किया जा सकता है तो वे वैसा ही करने लगे। यदि हम स्वीकार कर लें कि अल्लाह केवल मानव के दृष्टिकोण से बात कर रहा है तो फिर कुरआन में कोई भविष्य का ज्ञान हो ही नहीं सकता, क्योंकि वे तथ्य उस समय मनुष्य के लिये अज्ञात होंगे। किंतु जब भी मुस्लिम विद्वानों को आवश्यकता पड़ती है, वे कुरआन की आयतों को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत कर देते हैं।

दूसरा बिंदु: इन मुस्लिम विद्वानों के इस चालबाज मानकों के बाद भी सच यह है कि मुसलमानों के लिये उपरोक्त सभी 9 आयतों के अर्थों को तोड़-मरोड़ पाना अत्यंत कठिन है। पहले के जैसे, उन्हें अब एक ऐसी आयत ढूंढ़नी पड़ेगी जिसका अर्थ वे मनचाहे ढंग से बता सकें अथवा आयत में कोई ऐसा शब्द ढूंढ़ना पड़ेगा जिसके अर्थ को परिवर्तित कर आधुनिक संसार के दृष्टिकोण से आयत

को सही ठहरा सकें। अंततः उन्हें ऐसी एक आयत मिल भी गयी। ज़ाकिर नाइक और हारून याहया ने अंतिम आयत का अनुवाद निम्नप्रकार से किया:

और हमने धरती को अंडे के आकार का बनाया। (79:30)

पुनः कहूंगा कि आधुनिक विद्वान ही इन शब्दों के नये अर्थ ढूंढ़ते हैं। उन आठ अन्य आयतों के अन्य शब्दों का अंडा शब्द से कुछ लेना-देना नहीं है। वैसे भी ऊपर की आयत में अरबी शब्द दहाहा का प्रयोग हुआ है और ऐसा माना जाता है कि इस शब्द का दोहरा अर्थ जैसे कि 'अंडा' या 'बिछा हुआ' होता है। तो हमें इनमें से कौन सा शब्दार्थ लेना चाहिये? 'अंडा' या 'बिछा हुआ'(चपटा)? स्पष्ट है कि यदि कुरआन का लेखक अन्य आठ घटनाओं में'बिछा हुआ' कह रहा है और नौवें आयत में एक ऐसा शब्द है जिसका दोहरा अर्थ है तो आपको वही शब्दार्थ लेना चाहिये जो पूर्व की आठ आयतों में प्रयुक्त शब्दार्थ से मिलता-जुलता हो। कुरआन में अंडा के लिये जिस शब्द का प्रयोग किया गया है, वह है बैज़ुन (37:49)। अधिकांश मुस्लिम विद्वान भी ज़ाकिर नाइक और हारून याहया द्वारा शब्दों के अर्थ तोड़मरोड़ कर प्रस्तुत करने को स्वीकार नहीं करते हैं।

तीसरा बिंदु: शब्द के अर्थ परिवर्तित करने वाले नाइक व याहया के विपरीत कुछ मुस्लिम विद्वान शब्दों के अर्थ को तोड़ने-मरोड़ने के लिये भिन्न प्रकार से प्रयास करते हैं। ये मुस्लिम विद्वान दावा करते हैं कि उपरोक्त नौ आयतें वास्तव में धरती के गोल होने की अवधारणा की विरोधाभासी नहीं हैं। वे कहते हैं कि नीचे दी गयी आयत धरती के गोल होने का साक्ष्य है:

> उसने सत्य के आधार पर आकाश व धरती बनाया। वह रात को दिन पर और दिन को रात पर लपेट देता है तथा उसने सूरज और चांद को ऐसा अपने वश में रखा है कि वे निर्दिष्ट अवधि के लिये (अपना चक्र पूरा करते हुए, दौड़ते हैं। कोई संशय नहीं इसमें कि वही अत्यंत प्रभावशाली, शाश्वत क्षमाशील है। (39:5)

वास्तव में इस आयत में भी बड़ी वैज्ञानिक त्रुटि है, जिसका वर्णन मैं संक्षिप्त रूप में करूंगा। वैसे तो मुस्लिम विद्वान दावा करते हैं कि अल्लाह हमें बता रहा है, 'वह रात को दिन के ऊपर और दिन को रात के ऊपर लपेट देता है', जो धरती के गोल होने का संकेत है। यदि धरती चपटी होती तो धरती पर सभी स्थानों पर अचानक एकसाथ दिन हो जाता और अचानक ही रात हो जाती। यदि धरती चपटी होती तो

हां संसार में सभी स्थानों पर दिन और रात एकसाथ होते। वैसे यह बात उस कल्पना के आधार पर निकलती है कि कुरआन का लेखक यह जानता था। संभव ही नहीं है कि मुहम्मद इसके बारे में कुछ भी जानता होगा कि जब मक्का में दिन होता है तो क्या रोम में भी दिन होता था। ये विद्वान यह भी दावा करते हैं कि दिन और रात को 'लपेटना' चक्रीय गति को इंगित करते हैं, क्योंकि आप किसी चपटी वस्तु को लपेट नहीं सकते हैं। अल्लाह स्पष्ट रूप से दिन के विभिन्न चरणों यथा: सूर्योदय, प्रातः, मध्याह्न, अपराह्न, गौधूलि व अंधकार की रूपरेखा दे रहा है।

सबको यह पता है कि दिन धीमे-धीमे रात में परिवर्तित हो जाता है और रात धीमे-धीमे दिन में रूपांतरित हो जाती है तो लपेटना शब्द बस दिन और रात के धीमी रूपांतरण प्रक्रिया को इंगित करता है। सोचिये, किसी ट्रे को धीमे-धीमे लपेटा जा रहा है: आप बायीं ओर से प्रारंभ करते हैं और अब धीरे-धीरे आप ट्रे के दाहिनी ओर बढ़ रहे हैं तथा रैपिंग पेपर से ट्रे का जो भाग ढंकता जा रहा है वह अंधेरे में डूबता जा रहा है। अल्लाह दिन को रात में लपेट कर यही तो इंगित कर रहा है और ऐसा करने के लिये धरती के गोल होने की आवश्यकता नहीं है।

भू-केंद्रिक मॉडल

हिंदुओं और प्राचीन यूनानियों को धरती के गोल होने का ज्ञान था, परंतु इसके विपरीत उस समय विश्व में सामान्य धारणा भू-केंद्रिक मॉडल की थी, जिसका अर्थ है कि सूर्य धरती का चक्कर लगाता है। भू-केंद्रिक मॉडल की धारणा तब टूटी जब कोपरनिकस क्रांति हुई। इसी कारण मुहम्मद के पास उस भू-केंद्रिक मॉडल को मानने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। आइये, नीचे की आयत का अवलोकन करते हैं:

> उसने सत्य के आधार पर आकाश व धरती बनाया। वह रात को दिन पर और दिन को रात पर लपेट देता है तथा उसने सूरज और चांद को ऐसा अपने वश में रखा है कि वे निर्दिष्ट अवधि के लिये (अपना चक्र पूरा करते हुए, दौड़ते हैं। कोई संशय नहीं इसमें कि वही अत्यंत प्रभावशाली, शाश्वत क्षमाशील है। (39:5)

ध्यान दीजिये कि किस प्रकार मुसलमान इस आयत का प्रयोग धरती के गोल होने के दावे का औचित्य सिद्ध करने के लिये करते हैं, किंतु जब यह बात आती है कि दिन और रात का कारण सूर्य की कक्षा है तो वे बगलें झांकते हुए

कहने लगते हैं कि अल्लाह जिस सूर्य की कक्षा की बात कर रहा है, वह आकाश-गंगा (तारा-मण्डल) के केंद्र के चारों ओर स्थित सूर्य की कक्षा है। कोई भी प्राचीन यूनानी, भारतीय या मेसोपोटानियन इस आकाश-गंगा के चारों ओर सूर्य की कक्षा को नहीं जानता था और मुहम्मद को भी यह नहीं पता था। यह दावा उपहासजनक है, क्योंकि इसमें आकाश-गंगा के केंद्र में स्थित महाभीमकाय कृष्ण विवर (ब्लैक होल) के चारों ओर सूर्य की कक्षा के विषय में कुछ नहीं बताया गया है। जब बात धरती के चपटा होने की आयी तो इन मुस्लिम विद्वानों ने बस यही कहा कि अल्लाह मनुष्य की सोच के अनुसार बात कर रहा है, तो फिर अल्लाह यह बात क्यों नहीं कर रहा कि सूर्य धरती का चक्कर लगा रहा है और इससे दिन और रात हो रहे हैं, क्योंकि उस समय के मनुष्य का यही सोचना था? स्पष्ट है कि न केवल उपरोक्त आयतों में, अपितु नीचे दी गयी आयतों में भी सूर्य की कक्षा की बात दिन और रात के संदर्भ में की जा रही है:

> तथा उसने तुम्हारे लिए सूरज और चांद को काम पर लगाया, जो (कक्षा में, निरंतर हैं और तुम्हारे लिये रात और दिन वश में कर दिया। (14:33)
>
> और उसने तुम्हारे लिए रात और दिन एंव सूरज व चांद को काम पर लगा रखा है और सितारे उसके आदेश के अधीन हैं। वास्तव में, इसमें उन लोगों के लिए लक्षण हैं, जो समझ-बूझ रखते हैं। (16:12)
>
> तथा वही है, जिसने रात और दिन एवं सूरज और चांद रचे हैं। सभी (आकाशीय पिंड, एक कक्षा में तैर रहे हैं। (21:33)
>
> क्या तुमने नहीं देखा कि अल्लाह रात को दिन में मिला देता है और दिन को रात में तथा सूरज और चांद को ऐसे वश में कर रखा है कि वे एक-एक कर निर्धारित अवधि के लिये (अपना काम, करते दौड़ते रहते हैं, और कि तुम जो कुछ भी कर रहे हो अल्लाह उससे भली-भांति अवगत है। (31:29)
>
> वह रात को दिन में प्रवेश कराता है और वह दिन को रात में प्रवेश कराता है तथा उसने सूरज और चांद को ऐसा नियंत्रण में रखा है कि दोनों में से प्रत्येक निर्धारित अवधि के लिये

> (अपना काम, करते दौड़ते रहते हैं। (35:13)
> न तो सूरज के लिये ही अनुमति है कि चांद को पा जाये और न ही रात दिन पर नियंत्रण करता है, किंतु दोनों में से प्रत्येक, एक कक्षा में, तैर रहे हैं। (36:40)
> वास्तव में वही अल्लाह तुम्हारा स्वामी है जिसने छह दिनों में धरती और आकाश बनाया और फिर फिर स्वयं को सिंहासन पर आसीन किया। वह रात को दिन से ढंक देता है, (एक और रात, इसका तेजी से पीछा कर रही होती है। और (उसने रचा, सूरज, चांद, तारे और उन्हें अपने आदेशों के अधीन किया। (7:54)
> तथा रात और दिन एवं सूरज और चांद उसके चिह्नों में से हैं। सूरज या चांद के आगे मत झुको, बस उस अल्लाह के आगे झुको जिसने उस सूरज और चांद को बनाया है, यदि यदि तुम उसी (अल्लाह) की इबादत (वंदना) करते हो। (41:37)

मुझे उपरोक्त सभी आयतों की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आप स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि कुरआन का लेखक विश्वास करता है कि दिन और रात सूरज और चांद की कक्षाओं द्वारा घटित होते हैं। इतिहास में मनुष्यों ने दिन को सूर्य के साथ और रात को चंद्रमा के साथ जोड़ा है और मुहम्मद भी इन मनुष्यों से भिन्न नहीं था। उसने भी सोचा कि सूर्य धरती के चारों ओर कक्षा में चक्कर लगाता है जिससे दिन और रात होता है।

यदि अल्लाह आकाश-गंगा के चारों ओर सूर्य की कक्षा की बात कर रहा था तो उसे ऊपर दी गयी प्रत्येक आयत में दिन और रात क्यों ठूंसना पड़ा? ऐसा एक उदाहरण भी है, जहां स्पष्ट होता है कि अल्लाह सूर्य व चंद्रमा की कक्षा की बात दिन और रात के संदर्भ में नहीं कर रहा है:

> अल्लाह ही है, जिसने उस आकाश को बिना खम्भों के खड़ा किया है, जिसे तुम देख सको। तत्पश्चात उसने स्वयं को सिंहासन पर जमा लिया और सूरज व चांद को नियमबद्ध किया, दोनों में से प्रत्येक निर्धारित अवधि के लिए (अपनी चाल से, चल रहे हैं। वही (प्रत्येक, व्यवस्था करता है। वह चिह्नों का विवरण दे रहा है, जिससे कि तुम अपने स्वामी से मिलने के

विषय में आश्वस्त हो सको। (13:2)

यहां भी कुरआन सूरज और चांद की कक्षा का उल्लेख ऐसे कर रहा है, जैसे कि वे दोनों समान हों, किंतु इससे हम यह अनुमान नहीं लगा सकते हैं कि अल्लाह दिन और रात के बारे में बात कर रहा है। पहले की आयतों में यदि अल्लाह यह बात नहीं कर रहा था कि सूरज धरती के चक्कर लगाता है तो वह उसी आयत में दिन और रात का उल्लेख सूरज और चंद्रमा की कक्षा के रूप में क्यों कर रहा था? जैसा कि ऊपर जब वह सूरज और चंद्रमा की रचना की बात कह रहा है तो वह किसी और वस्तु से इसका संदर्भ दिये बिना बता रहा है, मानो इस प्रसंग में कोई संदर्भ देना अप्रासंगिक होता। वैसे जब वह दिन और रात की बात कर रहा है तो वह विशेष रूप से सूरज और चंद्रमा की कक्षाओं का उल्लेख कर रहा है। इस आयत का अवलोकन कीजिये:

> और रात उनके लिये एक चिह्न है। हम इससे दिन (का प्रकाश, हटा देते हैं, अत: उनमें अंधेरा ही (बचता, है। और सूरज (पथ पर, अपने रुकने के बिंदु की ओर दौड़ता है। ये उस प्रभुत्वशाली सर्वज्ञ का निर्धारित किया हुआ है। (36:37-38)

मैं आश्चर्य से सोचता हूं कि सूर्य के रुकने का बिंदु क्या होता है। स्पष्ट रूप से अल्लाह पुन: रात और दिन के प्रसंग में सूरज की कक्षा के बारे में बोल रहा है, किंतु मुस्लिम विद्वान तोड़-मरोड़कर व्याख्या प्रस्तुत करते हैं और कहते हैं कि अल्लाह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण से बोल रहा है। यह अगली आयत सबकुछ स्पष्ट कर देने वाली है:

> क्या आपने नहीं विचारा कि कैसे आपका स्वामी छाया फैला देता है, यदि वह चाहता तो इसे स्थिर बना देता? तब हमने सूर्य को इसके लिये बनाया कि वह प्रमाण हो। (25:45)

इस समय, अल्लाह सूरज की गतिविधि को साया बता रहा है। वह इस बात से अवगत है कि आकाश में सूर्य के चलने के कारण साये की गतिविधि होती है। इसका अर्थ है कि जब सूर्य दिन के मध्य में सीधे आपके सिर पर होता है तो आपकी परछांई का आकार सबसे छोटा होता है, किंतु जैसे-जैसे दिन आगे बढ़ता है आपकी परछांई बड़ी होती जाती है। जैसा कि अल्लाह हर बार डींगे हांकता है, इसमें भी अपनी ताक़त की डींगें हांक रहा है और कह रहा है कि यदि वह चाहता

तो परछांइयों को स्थिर (सदा एक ही आकार में रहने वाला) बना सकता था, पर उसने परछांइयों को आकार परिवर्तित करने के लिये सूरज का प्रयोग किया। यदि ऐसा है तो फिर परछांइयों का सूरज के साथ भला और क्या संभावित संबंध हो सकता था? आकाशगंगा के केंद्र के चारों ओर सूर्य की कक्षा का पृथ्वी पर परछायियों से क्या संबंध? स्पष्टत: इस अंश का आकाशगंगा के चारों ओर सूर्य की कक्षा से कुछ लेना-देना नहीं है। यदि सूर्य पृथ्वी के चक्कर लगाता तो इसका अर्थ होता, किंतु हम जानते हैं कि सूर्य पृथ्वी का चक्कर नहीं लगाता है। इस प्रकार सिद्ध होता है कि कुरआन की यह आयत व्यर्थ व शून्य है। जब कुरआन अज्ञात ब्रह्माण्डीय परिघटनाओं के बारे में बताने का प्रयास करता है तो इसकी संदिग्धता सामने आने लगती है। वैसे इस प्रकरण में यह स्पष्ट रूप से सूर्य की कक्षा के विषय में है। अन्य प्रकरणों के जैसे, हदीस मुहम्मद की विचार-प्रक्रिया का विस्तृत परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करते हैं:

अबू ज़ार के हवाले से बताया जाता है कि अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) ने एक दिन कहा, 'क्या तुम्हें पता है कि सूरज कहां जाता है?' उन्होंने उत्तर दिया, 'अल्लाह और उसका रसूल सर्वोत्तम जानता है।' उसने (पवित्र रसूल) ने कहा, 'वस्तुत: यह (सूरज, जब अपने विश्राम स्थल पर पहुंचता है तो अल्लाह के सिंहासन के नीचे सरक जाता है। फिर यह औंधे मुंह गिर जाता है और तब तक वहां पड़ा रहता है जब तक उससे कहा न जाये, 'उठ खड़े हो और उस स्थान पर जाओ जहां से तुम आये', और यह वापस जाता है तथा अपने उदय होने के स्थान से उगने लगता है और पुन: यह अपने विश्राम स्थल पर पहुंचकर सिंहासन के नीचे सरक जाता है एवं औंधे मुंह गिरकर तब तक उसी अवस्था में पड़ा रहता है जब तक कि उससे कहा ना जाये, 'उठ खड़े हो और उस स्थान पर वापस जाओ जहां से तुम आये' तथा फिर यह वापस लौटता है और अपने उदय होने के स्थान से निकलता है एवं फिर यह (इतने सामान्य ढंग से सरक जाता है कि लोग (इसमें कुछ असामान्य, समझ ही नहीं पाते जब तक कि यह उस सिंहासन के नीचे अपने विश्राम स्थल पर पहुंच नहीं जाता है।

> तब इससे यह कहा जायेगा, ''उठ खड़े हो और अपने अस्त होने के स्थान से उदय हो।' अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) ने कहा, 'और यह अपने अस्त होने के स्थान से उदय होगा।'

> अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) ने कहा, 'क्या तुम्हें पता है कि ऐसा कब होगा? यह तब होगा जब दीन किसी ऐसे व्यक्ति का हित नहीं करेगा जिसने पहले दीन पर विश्वास नहीं किया या दीन से कुछ अच्छा नहीं सीखा।' (सही मुस्लिम, 1:297)

इस हदीस के अनुसार, न केवल सूरज वास्तव में धरती के चक्कर लगाता है, अपितु सूरज वास्तव में औंधे मुंह लोटता (समर्पण में मुख नीचे करके लेट जाना) है। ये यह भी दावा करता है कि प्रलय (क़यामत) के दिन सूरज पश्चिम से उगेगा, जो निश्चित रूप से कभी नहीं हो सकता क्योंकि जब तक धरती विपरीत दिशा में घूमना न प्रारंभ कर दे ऐसा नहीं हो सकता। अब किसी के मन में इस बात को लेकर संदेह नहीं होगा कि कुरआन भू-केंद्रिक मॉडल को मानता है।

सूर्य और चंद्रमा एक समान

कुरआन के लेखक ने सचमुच यही सोचा कि सूर्य और चंद्रमा का आकार समान है और दोनों पृथ्वी से समान दूरी पर स्थित हैं। नीचे की आयत पर विचार कीजिये, जिसमें सदा-दयावान अल्लाह क़यामत के दिन का वर्णन कर रहा है:

> और चंद्रमा में अंधेरा छा जायेगा। और सूरज और चंद्रमा एकसाथ मिल जायेंगे। मनुष्य उस दिन कहेगा, 'भागने (का स्थान, कहां है?' (75:8-10)

मूलत: अल्लाह कह रहा है कि चंद्रमा (चांद) में अंधेरा छा जायेगा और धरती पर विनाश लाने के लिये यह सूरज से मिल जायेगा। सूर्य चंद्रमा से चार सौ गुना बड़ा है और संयोग ऐसा है कि आज जहां हम हैं उस स्थान से सूर्य चंद्रमा से चार सौ गुना दूर भी है। इस ब्रह्माण्डीय संयोग के कारण ही वे आकाश में समान आकार के प्रतीत होते हैं। धरती के इतिहास में प्रथम बार हम इस संयोग के साक्षी बन रहे हैं। उदाहरण के लिये, डायनासोरों के समय पर चंद्रमा धरती के तनिक निकट था और इसलिये सूरज से बड़ा दिखता था। यदि सूरज चंद्रमा और धरती की ओर एक क़दम भी बढ़ा दे तो धरती पर सभी जीवन नष्ट हो जायेंगे। सूरज कभी चंद्रमा से नहीं मिल सकता है, क्योंकि जिस समय सूर्य हमारे पास आयेगा, चंद्रमा और प्राणियों का जीवन दोनों बहुत पहले ही नष्ट हो चुके होंगे। सच तो यह है कि सूरज के निकट आते ही चंद्रमा अपने गुरुत्वाकर्षण बल के कारण टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा, अत: इन दोनों की कभी कोई टक्कर नहीं होगी।

यदि सूरज पर कोई छोटा धक्का लगता भी है तो उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। इन दो खगोलीय पिंडों के बीच कोई तुलना नहीं हो सकती। अच्छे से समझने के लिये चित्र 7.6 देखिये:
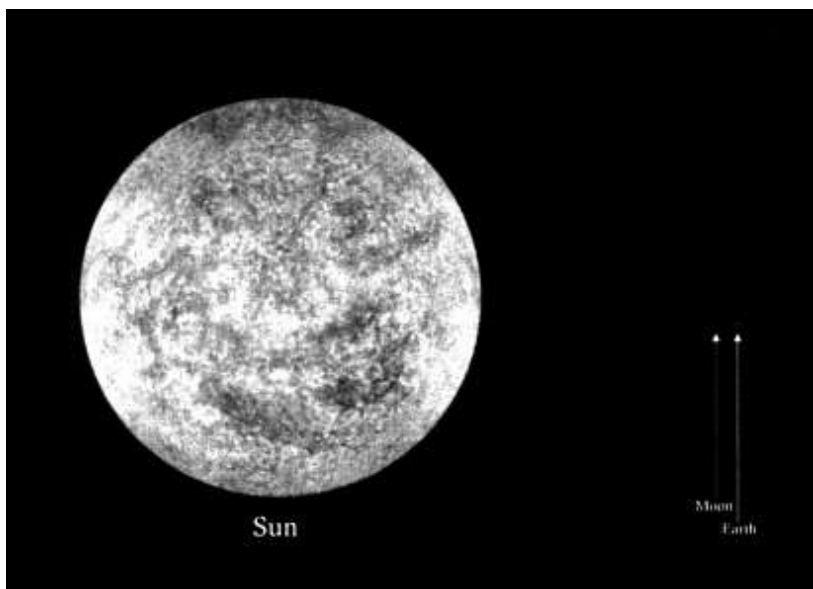
चित्र 7.6

इस आयत को देखिये:

> न तो सूरज के लिये ही अनुमति है कि चांद को पा जाये और
> न ही रात दिन पर नियंत्रण करता है, किंतु दोनों में से प्रत्येक,
> एक-एक कक्षा में, तैर रहे हैं। (36:40)

कुरआन विशेष रूप से दावा करता है कि सूरज और चांद की कक्षाएं प्रकृति में समान हैं, अर्थात धरती के चारों ओर उनकी कक्षाओं का आकार समान है। जब तक अल्लाह नहीं चाहेगा उनकी टक्कर नहीं होगी और अल्लाह क़यामत के दिन ऐसा चाहेगा। जो कोई भी यह कहता है कि इस आयत से यह अर्थ नहीं निकलता है कि चंद्रमा और सूरज दोनों धरती का चक्कर लगाते हैं, उसे यह बताना चाहिये कि तो फिर क्यों अल्लाह इसी आयत में दिन और रात के संबंध में सूरज और चांद की कक्षाओं का उल्लेख कर रहा है। यह कहना कि सूरज को चंद्रमा के साथ टकराने की अनुमति नहीं, वैसे ही है जैसे कि यह कहना कि संयुक्त राज्य अमरीका में स्थित एक

घर से आस्ट्रेलिया में दौड़ रही कार टकराने नहीं जा रही है।

स्पष्ट है कि वे आपस में टकराने नहीं जा रहे, क्योंकि वे एक-दूसरे के सापेक्ष चल नहीं रहे हैं और दूर-दूर तक वे एक-दूसरे के निकट नहीं हैं। अच्छा उदाहरण यह होता कि मंगल को पृथ्वी के साथ टकराने की अनुमति नहीं है, क्योंकि वे दोनों सूर्य के चक्कर लगा रहे हैं।

चांद के टुकड़े होना

> समीप आ गयी प्रलय (क़यामत) और चांद बंट गया (दो टुकड़े में। (54:1)

यह आयत इतनी छोटी है कि मैंने सोचा कि मुसलमान इसे भी रूपक बताकर चाल चलेंगे। यद्यपि मुसलमान मानते हैं कि जब मुहम्मद से कोई चमत्कार दिख़ाने को कहा गया तो उसने सच में चांद को दो टुकड़ों में पृथक कर दिया था। यदि चांद के दो खण्ड कर दिये गये थे तो आज की सभ्यताओं यथाः भारतीय, रोमन, पारसी व चीनी ने भी इसे देखा होता। किंतु उन सभ्यताओं ने कहीं भी इसका उल्लेख नहीं किया है।

इंटरनेट पर आधुनिक मुसलमान सच में चांद के चित्र का प्रयोग अतीत में इसके दो खण्ड हो जाने के प्रमाण के रूप में प्रयोग करते हैं। यह इन मुसलमानों का एक और मूर्खतापूर्ण व बेतुका दावा है।

पहला बिंदुः घाटियां (चित्र में दिख रही पंक्तियां) तंग-घाटियों और खड्डों के समान हैं और ये अन्य ग्रहों यथाः मंगल व शुक्र एवं कुछ अन्य चंद्रमाओं पर भी पाये जाते हैं। क्या वे सभी दो खण्ड हो गये थे?

दूसरा बिंदुः हेडली घाटी केवल 130 किलोमीटर लंबी है। यदि यह घाटी चांद के टुकड़े होने का प्रमाण है तो यह तो चंद्रमा पर चारों ओर होना चाहिये, पर ऐसा तो नहीं है। यह घाटी तो चंद्रमा के तल के केवल एक छोटे से भाग पर ही है।

उड़ने वाला घोड़ा

यद्यपि तिथियां ठीक-ठीक नहीं पता हैं, किंतु सामान्य रूप से यह माना जाता है कि 26 फ़रवरी 621 ईसवी की रात मुहम्मद के पास महादूत (फ़रिश्ता) जिब्राइल आया और वह अपने साथ उड़ने वाला घोड़ा बुराक़ लाया। बुराक मुहम्मद को सबसे दूर स्थित मस्जिद (इसे अल-अक्सा मस्जिद माना जाता है) ले गया और फिर जन्नत के सातों आकाश पर ले गया। मुहम्मद की इस यात्रा के

लगभग सभी विवरण हदीसों में आये हैं, न कि कुरआन में।

चूंकि मुसलमानों के लिये हदीस को नकारना सरल है तो मैं मानता हूं कि इस्लाम के विकासक्रम में बाद की पीढ़ियां पंख लगे घोड़े पर मुहम्मद के उड़कर जाने की हदीस को नकार देंगे। अ-मुस्लिमों में मुसलमानों का उपहास उड़ाने वाला बड़ा स्रोत है यह उड़ने वाला घोड़ा। यह अतीत की सभ्यताओं के मिथकीय चरित्रों जैसे कि पेगासुस (पंख वाला घोड़ा) और आग की बनी चिड़िया बेन्नू जैसा ही है।

पेगासुस और बेन्न के जैसे ही बुराक का भी कोई प्रमाण नहीं है। प्राचीन यूनानी और प्राचीन मिस्र के पौराणिक कथाओं के विपरीत, बुराक़ अपने क्रियाकलाप में मुहम्मद जैसे मनुष्यों के साथ अधिक क्रियाशील है। सही बुख़ारी में पूरा विवरण विस्तार से दिया गया है, मलिक बिन ससा द्वारा बताया गया कि मुहम्मद ने बताया कोई उसके पास आया, उसके सीने को खोला, ओपन-हार्ट सर्जरी के जैसे हृदय को बाहर निकाला, और फिर ईमान की तश्तरी में रखकर 'ईमान' से साफ किया तथा फिर बिना कोई चिह्न छोड़े हृदय को मूल स्थान पर रख दिया।

तत्पश्चात एक सफ़ेद रंग का पशु जो कि आकार में ख़च्चर से छोटा और गधे से बड़ा था, मेरे पास लाया गया। इस पशु के क़दम (इतने लंबे थे कि, उसे जितनी दूर दिखता था उतनी दूरी वह एक क़दम में पार कर लेता था। मुझे इस पर बिठाया गया गया और जन्नत के समीप पहुंचने तक जिबराईल ने मुझे इस पर बिठाकर यात्रा की।[81] इसके बाद मुहम्मद जन्नत गया और जन्नत के भिन्न-भिन्न आसमानों पर ईसा और मूसा से मिला, तथा मूसा के परामर्श पर मुहम्मद ने अल्लाह से एक दिन में पचास बार नमाज पढ़ने के स्थान पर यह संख्या कम कराकर पांच तक करने को कहा। ये हदीसें ये दावा करती हैं कि यह पूरी यात्रा वास्तविक घटना थी, न कि मुहम्मद का सपना। यथार्थ में रहकर सोचें तो ऐसा दो बातों में से एक ही हो सकता है:

या तो मुहम्मद ने सपना देखा और उसे लगा कि यह सच था अथवा यह उसके मन की कपोलकल्पना थी। मुझे लगता है कि उसने संभवत: सपना देखा और फिर उसने सोचा कि वह देखे कि लोग उसका विश्वास करते हैं या नहीं।

मुहम्मद निश्चित ही इसको लेकर सशंकित था, क्योंकि जब कुरआन में चमत्कारों का उल्लेख करने की बात आती है तो वह बहुत अधिक कुछ नहीं कहता है। उससे जुड़े अधिकांश चमत्कार हदीसों में दिये गये हैं, केवल चांद के टुकड़े

करने वाली एक पंक्ति वाली उस कुरआनी आयत को छोड़कर मुहम्मद से जुड़ा कोई भी चमत्कार कुरआन में नहीं दिया गया है। मुहम्मद का यह चमत्कार भी इतना संदिग्ध है कि कोई भी मुसलमान उसे रूपक मानकर नकार सकता है। हदीस मुहम्मद के जीवन और चरित्र का सही प्रतिबिंब दिखाते हैं और उसके बारे में अधिकांश जानकारियां इन्हीं हदीसों से ही मिलती हैं।

जिस प्रकार मेरे पास यह नकारने का कोई उपाय नहीं है कि पेगासुस (पंख वाला घोड़ा), ड्रैगन (पंख वाला अजगर) और एक सींग वाला गैंडा का कभी अस्तित्व में था, वैसे ही मेरे पास इस घटना को नकारने का कोई उपाय नहीं है। हां, इतना अवश्य है कि तथ्यों के आधार पर सामान्य समझ (घोड़े नहीं उड़ते हैं) और विश्लेषणात्मक समझ (जिसकी संभावना अधिक है, उड़ने वाला घोड़ा अथवा झूठ) यही कहते हैं कि यह घटना संभवतया कभी नहीं हुई। तनिक सोचिये, मुहम्मद तो इस उत्तम अंतरिक्षयान पर अद्‌भुत यात्रा से सब ज्ञान ले सकता था। तो फिर यदि वह अंतरिक्ष में उड़ा होता तो उसने अंतरिक्ष से धरती को देखा होता और संभव है कि आकाशगंगा को भी देखा होता तथा समझ लेता कि यह जन्नत वास्तव में है कहां। फिर भी कितनी आश्चर्यजनक बात है कि वह आक्सीजन सिलेंडर लिये बिना, अंतरिक्ष में जाने वाला वस्त्र पहने बिना वहां जाने में समर्थ रहा, किंतु वह यह देखने में सक्षम नहीं रहा कि धरती वास्तव में गोल है तथा सूर्य धरती का चक्कर नहीं लगाता है। हां, वह वहां बस इतना ही कर सका कि ईसा और मूसा से संक्षिप्त वार्ता की और अल्लाह से मुसलमानों के लिये नमाज़ की संख्या कम करने के लिये कहा।

यहां तक कि जब मैं इन बातों को रख रहा हूं तो तो मुझे लग लग रहा है कि मैं किसी काल्पनिक उपन्यास पर बात कर रहा हूं। किंतु एक अरब से अधिक मुसलमान इस काल्पनिक घटना को अक्षरशः सत्य मानते हैं। कैसे कोई समझदार व्यक्ति इस प्रकार की कहानियों में गड़बड़ी नहीं देख पाता है? यह कहानी इतनी उन्मादी है कि मुझे पूर्ण विश्वास है कि मुसलमानों की आने वाली पीढ़ियां इसे नकार देंगी और मुहम्मद के उड़ने वाले घोड़े की कहानी से होने वाली किरकिरी से स्वयं को बचाएंगी।

जोना (यूनुस) और उनका व्हेल

यह किसी का लिखा हुआ चुराने का एक और बुरा उदाहरण है। जोना की पुस्तक में यूनुस को एक विशाल मछली या व्हेल द्वारा निगल लिये जाने की

कहानी मुहम्मद से पहले ही लिखी गयी थी। कुरआन की इन आयतों का अवलोकन कीजिये:

> तथा निश्चय ही यूनुस नबियों में से एक था। (बताओ उन्हें, जब वह भरी नाव की ओर भागा। और उसमें से माल निकाला और फिर वह गंवाने वालों में सम्मिलित हो गया। तभी मछली ने उसे निगल लिया, क्योंकि वह निंदा किये जाने योग्य था। और यदि वह अल्लाह की बंदगी करने वालों में से नहीं होता तो वह उस दिन तक उस मछली के उदर में रहता, जिस दिन सब पुन: जीवित किये जाएंगे। पर जब वह रोगी था तो हमने उसे समुद्र के खुले तट पर फेंक दिया। (37:139-145)

पहली बात तो यह है कि केवल एक ही ऐसी मछली है जो मनुष्य को पूरा निगल सकती है, वह है स्पर्म व्हेल। अन्य सभी व्हेल मछलियों की आहार नली (ओसोफैगी) इतनी छोटी होती है तो वो किसी वयस्क मनुष्य को नहीं निकल सकते हैं।

मुख्य प्रश्न यह है कि जब कोई स्पर्म व्हेल किसी मनुष्य को निगल लेती है तो क्या होता है। जब भी कोई पशु निगला जाता है तो संभवत: एक से तीन मिनट में उसकी सांसें अटकने लगती हैं। यदि किसी प्रकार वह बच निकलने का प्रयास करता भी है तो स्पर्म व्हेल की मांसपेशियां उसको पीस देंगी। कुछ अजगरों द्वारा मनुष्य के बच्चों को निगलने की घटनाएं हुईं हैं, किंतु जब भी अजगर के पेट से उन बच्चों को निकाला गया तो वे सांस अटकने और रगड़ के कारण मृत अवस्था में पाये गये। बाइबिल और कुरआन की अन्य कहानियों के जैसे ही यह कहानी भी उतनी ही झूठी है जितनी कि मुहम्मद के उड़ने वाले घोड़े वाली कहानी।

आकाश एक भौतिक वस्तु के रूप में

आकाश सदैव एक रहस्य रहा है। हमारे सिर के ऊपर की यह नीली वस्तु रात में काले रंग की हो जाती है? दुर्भाग्य से आकाश की प्रकृति के विषय में मुहम्मद के पास कोई स्पष्ट विचार नहीं था। मुहम्मद ने सोचा कि यह कोई वस्तु है, अत: उसने निम्न आयत लिखी:

> और यदि वे आकाश से कोई खण्ड गिरता हुआ देख लें, तो कहेंगे, 'यह है केवल, बादल एक-दूसरे पर जमे हुए।' (52:44)

मुझे मुस्लिम विद्वानों की अयोग्यता पर आश्चर्य होता है, क्योंकि वे बड़ी

सरलता से इस आयत का अर्थ तोड़मरोड़ कर कह सकते थे कि गिरते आकाश से अल्लाह का आशय क्षुद्र ग्रह या उल्कापिण्ड से था। मुझे आशा है कि वे मेरे विचार को ग्रहण नहीं करेंगे और अब आगे से ऐसा कहना शुरू भी नहीं करेंगे, क्योंकि उपरोक्त आयत का तभी कुछ अर्थ निकलेगा जबकि कुरआन का लेखक यह सोच रहा हो कि आकाश एक भौतिक वस्तु है। कुरआन प्रत्यक्ष रूप से मानती है कि आकाश एक विशाल गुम्बद या छत है और उसके ऊपर हमारा जन्नत है। दूसरी बात यह है कि कोई गिरता हुआ छोटा तारा अर्थात क्षुद्र ग्रह गिरते बादल जैसा नहीं दिखेगा।

इस आयत का अवलोकन कीजिये:

> वह, जिसने धरती को तुम्हारे लिए बिछौना तथा आकाश को छत बनाया। (2:22)

अथवा इस आयत को देखिये:

> अल्लाह ही है, जिसने आकाशों को बिना खम्भों के ऐसे खड़ा किया कि तुम देख सको। (13:2)

हम पहली आयत में चपटी धरती वाली त्रुटि पर पहले ही विमर्श कर चुके हैं। उपरोक्त आयतों से यह सर्वथा स्पष्ट है कि कुरआन का मत यह है कि आकाश एक गुम्बद है जो अदृश्य खम्भों पर टिका है जिससे कि वह धरती पर न आ गिरे और जब अल्लाह अप्रसन्न होता है तो उस आकाश को लोगों पर गिरा देता है।

विचार शरीर के हृदय अंग से आते हैं

समस्त इतिहास में हमने विचारों को रूपक देकर हृदय से जोड़ा है, जैसे कि हम कहते हैं, 'मेरा मस्तिष्क कुछ और कहता है और हृदय कुछ और।' दैनिक जीवन में हम अपने भावनात्मक विचारों का श्रेय हृदय को देते हैं, पर निश्चित ही हममें से कोई भी यह नहीं मानता है कि विचारों का जन्म मस्तिष्क में नहीं, अपितु हृदय में होता है। मैं कुरआन को क्षमा कर देता, किंतु यदि उसने शब्दशः ऐसा न कहा होता तो।

नीचे दी गयी इस आयत पर विचार कीजिये:

> निस्संदेह, वे, अ-मोमिन (इस्लाम में विश्वास न करने वाले) अपने सीनों को पीछे घुमा लेते हैं, जिससे कि उससे छिप जायें। निस्संदेह, (तब भी, जब वे स्वयं को वस्त्रों में ढंके होते हैं, अल्लाह जानता है कि वे क्या छिपा रहे हैं और क्या बता

> रहे हैं। वास्तव में वह (अल्लाह) जानता है कि उनके सीने में क्या (भेद) है। (11:5)

यदि इस आयत ने यह नहीं कहा होता कि 'अ-मोमिन अपना सीना पीछे घुमा लेते हैं' तो मैं इस आयत को यहां नहीं ही लाया होता। इस आयत के अंतिम भाग में कहा गया है, 'वह जानता है कि सीने के भीतर क्या भेद है। यदि इस आयत में वह पहला भाग नहीं होता तो हमने सोचा होता कि अल्लाह बस यही कह रहा है कि वह जानता है हमारे हृदयों (दिलों) में क्या है, परंतु पहला भाग पूरा प्रसंग ही उलट देता है, क्योंकि यह कहता है कि बुरे लोग अपना सीना छाती छिपाते हैं या पीछे घुमा लेते हैं जिससे कि वे उन बुरे विचारों को छिपा सकें जो उनके हृदय में छिपा है।'

दूध की शुद्धता

यहां एक और भयानक वैज्ञानिक दावा है जिसकी अधिक व्याख्या की आवश्यकता नहीं है:

> और वास्तव में, तुम्हारे लिए घास ख़ाने वाले पशुओं में एक शिक्षा है। हम तुम्हें उससे, जो उनके पेट में है, गोबर तथा रक्त के बीच से शुद्ध दूध पिलाते हैं, जो पीने वालों के लिए रुचिकर होता है। (16:66)

यह आयत दो त्रुटिपूर्ण वैज्ञानिक दावा करती है:

1. इस दावे की वैज्ञानिक त्रुटि यह कि गाय, बकरी और ऊंट में दूध शरीर के गोबर व रक्त से बनता है अर्थात आंतों के समीप। यह दावा निश्चित ही झूठा है, क्योंकि दूध होने के लिये स्तनधारी ग्रंथि की आवश्यकता होती है और यह ग्रंथि आंतों के समीप कहीं नहीं स्थित होती है। यह दावा इतना बेतुका है कि मैं इस पर मुस्लिम विद्वानों द्वारा दी गयी सफ़ाई को देखने में समय व्यर्थ नहीं करना चाहता।
2. यह कि दूध पीने वालों के लिये शुद्ध व रुचिकर होता है। हम सब जानते हैं कि यह सच नहीं है, क्योंकि दूध अति सरलता से जीवाणुओं से प्रदूषित हो जाता है और आधुनिक संसार में यह लगभग अकल्पनीय है कि दूध को प्रसंस्कृत (अर्थात दूध को जीवाणुओं को नष्ट) किये बिना पिया जाये। इसके अतिरिक्त ऐसे लोगों का प्रतिशत बड़ा है जिनको लैक्टोज सहन नहीं होता

और निश्चित ही ऐसे लोगों को दूध पीने का परामर्श नहीं दिया जा सकता है। किंतु स्पष्ट है कि जब मुहम्मद यह आयत लिख रहा था तो ऐसे लोगों के बारे में सोचना भूल गया, जिन्हें दूध से समस्याएं होती हैं।

पशुओं का उद्देश्य

मुहम्मद के कुरआन के अनुसार पशुओं की रचना वास्तव में मनुष्यों के लिये हुई है और सारे पशुओं का एक ही उद्देश्य है। नीचे दी गयी आयत का अवलोकन कीजिये:

> और घोड़े, ख़च्चर और गधे पैदा किये, जिससे कि तुम उन पर सवारी करो और (वे) शोभा (बनें)। और (अल्लाह) ऐसी चीज़ों की उत्पत्ति करेगा, जिन्हें (अभी) तुम नहीं जानते हो। (16:8)

मैं सोचता हूं कि फिर अल्लाह ने टी-रेक्स (दैत्याकार डायनासोर), गोर्गोनोप्सिड्स (पार्मियन काल में पाये जाने वाले विशालकाय चौपाया स्तनधारी पशु) अथवा करोड़ों की संख्या अन्य ऐसे पशुओं व प्राणियों को क्यों बनाया जो मनुष्य के अस्तित्व में आने के पूर्व ही विलुप्त हो गये। स्पष्ट है कि कुरआन का लेखक डायनासोर या अतीत के अन्य पशुओं के बारे में नहीं जानता था। रोचक बात यह है कि अल्लाह सूअर से घृणा करता है, तो फिर उसे सूअर बनाया ही क्यों? हो सकता है कि मुहम्मद उस समय सुअरों के बारे में भूल गया और इसलिए बस यह कहकर पल्ला छुड़ा लिया कि 'तुम नहीं जानते हो।'

प्रामाणिकता

ईसाइयों का झूठ जब आधुनिक नैतिकताओं व विज्ञान द्वारा पकड़ लिया जाता है तो वे सीधे आकर कह देते हैं कि बाइबिल की वो बातें केवल लाक्षणिक अर्थात रूपक हैं, किंतु इसके विपरीत मुसलमान जब अपने झूठ में पकड़े जाते हैं तो वे यह बहाना नहीं बनाते, क्योंकि उनका दावा है कि कुरआन 100 प्रतिशत अल्लाह द्वारा कहा गया शब्द है। ईसाइयों व मुसलमानों के बीच एक और प्रमुख अंतर दोनों सभ्यताओं के बीच साक्षरता का स्तर है।

जब आप विज्ञान में शिक्षित होते हैं तो पाते हैं कि बाइबिल या कुरआन वैज्ञानिक दृष्टि से त्रुटिहीन पुस्तक नहीं हैं, अतः अधिकांश ईसाई अ-वैज्ञानिक सूक्तियों को स्वीकार नहीं करते हैं। हां, कुछ उन्मादी ईसाई भी हैं जो इतने शिक्षित तो हैं कि इन प्रसंगों के झूठ को पकड़ सकें, किंतु उनके मस्तिष्क में इतना कुछ

पहले ही भरा चुका होता है कि वे इन प्रसंगों को अस्वीकार नहीं कर पाते हैं। वे तो अब चुक गये हैं और हम यही आशा कर सकते हैं कि उनके बच्चे उनके जैसे नहीं होंगे। उन्मादी मुसलमानों की तुलना में कट्टर ईसाइयों की संख्या बहुत कम है और फिर मैं कहूंगा कि इसका कारण दोनों की शिक्षा में अंतर होना है। मुसलमानों की दुनिया उतनी शिक्षित नहीं है, जितनी कि ईसाई या यहूदियों का संसार। हां, ऐसे बहुत से मुसलमान हैं जिन्होंने विज्ञान और मज़हब दोनों की अच्छी शिक्षा ली है, किंतु वे कुरआन के ईश्वरीय होने के अपने विचार को नहीं छोड़ते हैं। ऐसे मुसलमान प्रत्यक्ष रूप से पाखंडी हैं और इनके मन-मस्तिष्क में इतनी विकृति भरी गयी है कि ये अपने बचपन के मतारोपण (ब्रेनवाशिंग) को छोड़ नहीं पाते हैं। अधिकांश मुसलमान वास्तव में अपने मज़हब के बारे में नहीं जानते हैं। अधिकांश मुसलमान नहीं जानते हैं कि इस्लाम में न केवल यौन-दास प्रथा वैध है, अपितु मुहम्मद और उसके अभिन्न मित्र भी यौन-दासी (सैक्स-स्लेव) रखते थे। वे नहीं जानते हैं कि कुरआन चपटी धरती का सिद्धांत और भू-केंद्रिक विचार पढ़ाता है। ये मुसलमान सच में अज्ञानी हैं और उनकी अज्ञानता दूर करने का एकमात्र उपाय शिक्षा है। अपने ईसाई समकक्षों के जैसे ही, जो शिक्षित मुसलमान कुरआन में विश्वास करते हैं वो भी उन्मादी ही होते हैं और ऐसे मुसलमानों के मर-खप जाने की प्रतीक्षा के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया जा सकता है। मुसलमान दावा करते हैं कि कुरआन वाह्य संसार से दूषित हुए बिना और संशोधित हुए बिना 100 प्रतिशत प्रामाणिकता के साथ अल्लाह का शब्द है। यह दावा आरंभिक दिनों में काम भी आया, क्योंकि उस समय इस्लाम की आचार संहिता और वैज्ञानिक ज्ञान आरंभिक सदियों के ज्ञान के समान था। उदाहरण के लिये, नौवीं सदी तक दास रखना एक सामान्य बात थी अथवा यह एक सामान्य धारणा थी कि 16वीं सदी तक सूर्य धरती का चक्कर लगाता है। मानव के इतिहास में अधिकांश समय महिलाएं पुरुषों की तुलना में हेय मानी गयीं। चूंकि कुरआन में भी औरतों को हेय बताया गया है, अत: इसे कभी चुनौती नहीं दी गयी। अक्षरश: अल्लाह का शब्द होने का दावा अब इस्लाम को ही क्षति पहुंचा रहा है, क्योंकि अधिकाधिक लोग पूछ रहे हैं कि कैसे सबकुछ रचने वाला सबसे बुद्धिमान अल्लाह नैतिक रूप से भ्रष्ट व वैज्ञानिक रूप से त्रुटिपूर्ण इन बातों को कह सकता है।

मुझे लगता है कि मुसलमानों के लिये अपने बचाव का सबसे

अच्छा उपाय अब यह होगा कि आधुनिक वैज्ञानिक व सामाजिक विश्व के साथ अनुकूलता दिख़ाने के प्रयास में आयतों का अर्थ तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत करने के स्थान पर वे यह दावा करें कि क़ुरआन में कुछ सीमा तक मिलावट की गयी है। धरती चपटी है, ऐसा बताने वाली आयत के अर्थ को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत करने की अपेक्षा यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि क़ुरआन में ऐसी आयतें हैं जिनमें संभवत: बाद में मिलावट की गयी है। ऐसा करना सरल क्यों होगा? क्योंकि क़ुरआन आने के बाद बहुत लंबा समय बीत चुका है और इस कारण मिलावट की संभावना बनती है। मुहम्मद ने दावा किया कि उसने अपने मन में आवाजें सुनीं जो महादूत जिबराइल के माध्यम से अल्लाह के शब्द थे और वह इस भ्रम को पाले हुए वापस आता था और उन बातों को पहले ख़दीजा को सुनाता, फिर इसके बाद अन्य मित्रों को सुनाता।

मुहम्मद के पास ऐसे लेखक थे जो उसकी उन बातों को कपड़े, चमड़े, हड्डियों के टुकड़े आदि पर लिख डालते थे। ये उद्धरण या आयतें यहां-वहां बिखरी पड़ी थीं। 632 ईसवी में जब मुहम्मद मर गया तो सैकड़ों की संख्या में ऐसे मुसलमान थे जिन्होंने कुरआन की आयतों को कंठस्थ कर लिया। इन आरंभिक मुसलमानों में से बहुत से तो 632 ईसवी के यमामा की जंग में मारे गये, जिसके बाद अबू बक्र ने बचे हुए ऐसे मुसलमानों को जैद बिन साबित की अगुवाई में कुरआन की आयतों को पुस्तक में संकलित करने का आदेश दिया। जैद और उमर कंठस्थकर्ताओं से इन आयतों को सत्यापित करते थे और जब वे सहमत होते थे तो उन आयतों को कुरआन में सम्मिलित करते थे। यदि ज़ैद व उमर को स्मरण नहीं रहता था तो दो स्वतंत्र गवाहों से दावाकृत आयतों का सत्यापन कराया जाता था। कुरआन की मूल संकलित प्रति अबू बक्र के पास 634 ईसवी में उसकी मृत्यु होने तक रखी रही। इसके बाद यह द्वितीय ख़लीफ़ा उमर बिन खत्ताब के पास पहुंची। जब उमर 644 ईसवी में मारा गया तो यह मूल प्रति हफ़्सा (मुहम्मद की विधवा व उमर की बेटी) के पास सुरक्षित रखी गयी। मुसलमान यह भी दावा करते हैं कि अल्लाह ने लोगों को वचन दिया है कि कोई भी कुरआन में परिवर्तन या संशोधन या मिलावट करने में समर्थ नहीं होगा, जैसा कि उनसे पहले ईसाइयों व यहूदियों ने ग्रंथों में मिलावट की थी। इस समय अल्लाह ने स्वयं अपने शब्दों की रक्षा का उत्तरदायित्व ले लिया। मैं सोचता हूं, क्यों उसने

अपनी पहले की पुस्तकों जैसे बाइबिल व तोरा को संरक्षित करने के लिये कुछ नहीं किया? इसका अर्थ तो यह है कि यदि अल्लाह नहीं जानता था कि ईसाई और यहूदी उसके शब्दों में मिलावट कर देंगे तो वह अत्यंत अदूरदर्शी था। उस्मान इस्लाम का अगला ख़लीफ़ा हुआ और मध्य पूर्व में इस्लाम बड़ी तेजी से फैला। इन नये विजित क्षेत्रों में बड़ी संख्या में ऐसे लोग थे जो इस्लाम के मूल संस्करण पर विवाद उत्पन्न कर रहे थे।

उस्मान शीघ्र ही यह समझ गया और बोला कि कुरआन की नई बनायी गयी सभी प्रतियों को नष्ट कर दिया जाये और वह इनके स्थान पर कुरआन के अबू बक्र वाले संस्करण को ले आया। इसका ज्ञान नहीं है कि उन्होंने नयी तैयार की गयी प्रत्येक प्रति को नष्ट कैसे किया। केवल यह दावा कर देना भर पर्याप्त नहीं है कि 'हमने इसे नष्ट कर दिया।'

हम सभी ने यह चीनी कहावतें सुनी हैं कि किस प्रकार कोई बात बहुत से लोगों से होते हुए कहीं पहुंचती है तो उसका अर्थ परिवर्तित हो गया होता है। यह कहना अत्यंत अव्यवहारिक है कि अबू बक्र के समय तैयार कुरआन उसी की प्रतिकृति है जो मुहम्मद बोलता रहता था और मुसलमानों का यह बहाना चलेगा नहीं। उस्मान के समय तैयार की गयी कुरआन की बहुत सारी प्रतियां थीं और सारी प्रतियों को नष्ट कर दिया गया था? सब की सब नष्ट कर दी गयी थीं? मैं पुनः कहूंगा कि यह दावा अतिश्योक्तिपूर्ण है। यह सच है कि मुसलमान आज लगभग शून्य त्रुटि के साथ पूरी कुरआन कंठस्थ करने का प्रयास करते हैं, किंतु इसकी तुलना कुरआन की रचना के आरंभिक दिनों से नहीं की जा सकती है, क्योंकि उस समय ऐसा करना उन कुछ मुट्ठीभर लोगों पर निर्भर था जो मुहम्मद द्वारा कही गयी बातों को स्मरण में रखते थे। मुहम्मद 632 ईसवी में मरा और कुरआन का संकलन 634 ईसवी में हुआ। आधुनिक मुसलमान कुरआन को एक स्थापित पुस्तक से कंठस्थ करते हैं और उनके पास यह विकल्प होता है कि यदि वे कहीं ग़लत हों तो उस स्थापित पुस्तक को पढ़कर सुधार कर लें, किंतु उन आरंभिक मुसलमानों के पास स्वतः त्रुटि दूर करने वाली कोई प्रणाली नहीं थी। हमारे लिये बड़ा सरल होता है कि स्मृति का बहाना बनाकर झूठी कहानियां गढ़ दें अथवा यह भी संभावना होती है कि हमें सही उद्धरण का स्मरण न रहे। जब हम अपने प्रिय उद्धरणों को कहते हैं तो हम उसे सांकेतिक शब्दों में रूपांतरित करते हैं और तब

भी उसका अर्थ निकलता है, किंतु वे मूल वर्णनकर्ता के सटीक शब्द नहीं होते हैं। यह मानने का कोई कारण नहीं है कि जिन आरंभिक मुसलमानों ने कुरआन की आयतों को कंठस्थ किया था, उन्होंने सब कुछ वैसा ही स्मृति में संजोकर रखा था जैसा कि मुहम्मद उनके समक्ष बोला था।

त्रुटिपूर्ण आयतें

कुरआन की प्रमाणिकता को लेकर एक और बड़ी विसंगति है। इब्ने इस्हाक़ के अनुसार एक ऐसी आयत थी जो मानी जाती है कि अध्याय 53 की आयत 20 और 21 के बीच आती थी। इस आयत को प्राय: 'शैतान की आयत' के रूप में इंगित किया जाता है। इस्हाक़ के अनुसार, वह आयत बाद में मुहम्मद द्वारा हटा दी गयी थी, क्योंकि मुहम्मद ने कहा कि शैतान ने उसे चालबाज़ी से ऐसा विश्वास करा दिया था कि वह आयत अल्लाह के पास से आयी है। निम्नलिखित बिंदु ध्यानाकर्षण योग्य हैं:

1. यदि मुहम्मद इस समय चालबाज़ी से फंसा लिया गया था तो हमें यह कैसे पता कि दूसरी आयतों में भी शैतान ने उसे नहीं फंसाया होगा?
2. यदि मुहम्मद वास्तव में छल से फंसा लिया गया था तो स्पष्ट है कि वह सिद्ध मनुष्य नहीं था, क्योंकि वह शैतान द्वारा भी छल से फंसाया जा सकता था।

आधुनिक मुस्लिम विद्वान इब्ने इस्हाक़ के इस प्रमाण को झुठलाते हुए दावा करते हैं कि यह घटना कभी हुई ही नहीं, किंतु यही विद्वान इस्हाक़ के उन बातों को झट से प्रमाणिक मान लेते हैं जिसमें मुहम्मद को अच्छे रूप में दिखाया गया होता है।

विलुप्त आयतें

आयशा के अनुसार दूसरों के संग यौन संबंध बनाने वालों की पत्थर मार-मार कर हत्या किये जाने के संबंध में एक कुरआनी आयत थी जो खो गयी थी, क्योंकि यह जिस पत्रक पर लिखी थी वह बकरी खा गयी थी।

पत्थर मार कर हत्या किये जाने और किसी वयस्क महिला के स्तन को दस बार चूसने की एक आयत उतरी थी और वे एक पत्रक पर (लिखे हुए, थे तथा मेरे तकिये के नीचे रखी थी। जब अल्लाह के रसूल (सल्ललाहु..., की मृत्यु हुई और हम सब उसमें व्यस्त थे तो एक बकरी घुसी और वह पत्रक खा गयी।[71]

ये लुप्त आयतें अर्थपूर्ण हैं, क्योंकि ये आयतें मुहम्मद की सोच से मिलती हैं। अनेक हदीसें हैं जो बताती हैं कि किस प्रकार मुहम्मद दूसरे के साथ यौन संबंध

बनाने वाले को पत्थर मार-मार कर हत्या किये जाने के दंड को प्राथमिकता देता था और इस प्रकार यह समझ में आने योग्य है कि वह आयत क़ुरआन में थी। मुस्लिम जगत के ऐसे सभी लोगों को उस बकरी का धन्यवाद देना चाहिये, जो किसी और के साथ यौन संबंध बनाते हैं, क्योंकि यदि इस महान बकरी ने वह आयत नहीं खायी होती तो सभी मुसलमान इस बर्बर दंड से सहमत होते।

यह दूसरी आयत एक और हटायी गयी आयत है और यदि यह अभी रही होती तो इसके अर्थ को बहुत ही तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किया जाता, क्योंकि यह आयत मुसलमानों के लिये बड़ी समस्या खड़ी करने वाली होती। **मुहम्मद के अनुसार, जिस किसी को भी किसी महिला के स्तन से कम से दस बार दूध पिला दिया जाता है, वह व्यक्ति उस महिला का रक्त सम्बंधी (बेटे जैसा) हो जाता है और इसलिये वह व्यक्ति उसके बाद जीवन में कभी उस महिला से शादी नहीं कर सकता है। यदि किसी महिला के आसपास और कोई न हो तो ऐसा व्यक्ति उस महिला के साथ अकेले रह तो सकता है, पर मां और बेटे के जैसा बनकर। यह लोगों को रक्त सम्बंधी बनाने का एक उपाय था। बाद में दस बार स्तन चूसने के स्थान पर पांच बार का नियम बना दिया गया।** अब तक तो सब अच्छा है? अच्छा तो फिर यह हदीस आती है:

आयशा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हों) ने बताया कि अबू हुज़ैफ़ा का मुक्त किया हुआ दास सलीम व उसका परिवार उनके साथ उनके घर में रहता था।

> वह (सुहैल की बेटी, अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) के पास आयी और बोली, 'सलीम एक पुरुष के जैसा बड़ा हो गया, जैसे कि कोई पुरुष सबकुछ समझता है, वैसे ही वह वह भी सबकुछ समझता है और वह हमारे घर में बिना रोकटोक आता-जाता है, वैसे मुझे लगता है कि अबू हुज़ैफ़ा के मन में कुछ (क्षोभ, है, जिस पर अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) ने कहा, 'उसको अपना स्तन पिलाओ और वह तुम्हारे लिये अवैध हो जायेगा और जो (क्षोभ, अबू हुज़ैफ़ा के मन में है वह दूर हो जायेगा।' वह लौटकर आयी और बोली, 'उसने उसे अपना स्तन पिला दिया, और अबू हुज़ैफ़ा के मन में जो था वह दूर हो गया।' (सही मुस्लिम, पुस्तक 8, संख्या 3425)

कुछ मुस्लिम विद्वान बताते हैं कि मूलत: उस महिला ने अपने स्तर ने दूध निकालकर एक कप में रखा था जिसे उसने पिया। ऐसा था या नहीं, पता नहीं, पर इससे हम मुहम्मद के मसखरापन को देख सकते हैं। जब उस औरत ने इस पर प्रश्न उठाया कि कैसे वह किसी वयस्क व्यक्ति को अपना दूध पिला सकती है तो दूध निकालकर कप में रखने का निर्देश देने के स्थान पर मुहम्मद बस मुस्कुराया और बोला, 'हां, मुझे पता है।' तनिक हटकर सोचें तो यह घटना दर्शाती है कि किस प्रकार मज़हब किसी औरत को इस सीमा तक परतंत्र बनाने वाले होते हैं कि यदि औरत को किसी आदमी के आसपास अकेले रहना है तो उसे उस आदमी को अपना दूध पिलाना पड़ता है। यदि कोई आदमी और औरत एक दूसरे के प्रति कोई कामुक दृष्टि नहीं रखते हैं, पर साथ रहकर एक व्यस्क के जैसा व्यवहार करते हैं तो ऐसा क्या बुरा हो जायेगा? **इस्लाम औरत और आदमी को ऐसे बुद्धिहीन पशुओं के रूप में देखता है, जो सदैव एक-दूसरे के साथ यौनाचार का अवसर ढूंढते रहते हैं।**

कुरआन में संशोधन

मुस्लिम विद्वानों द्वारा इन लुप्त आयतों पर किसी न किसी प्रकार विवाद उत्पन्न किया जाता है, अत: हमारे पास बहुत कुछ करने को नहीं है। हम बस इतना कर सकते हैं अपने पक्ष पर स्थिर रहें और उन मुसलमानों को शिक्षित करते रहें जो इनके बारे में नहीं जानते हैं। कुरआन में एक और जो विसंगति है वह है 'आयतों को हटाना' या अरबी में नस्ख़ के नाम से जानते हैं। मुसलमानों ने कुछ आयतों को हटाने का निर्णय किया जिसका सीधा अर्थ है कि ये आयतें विरोधाभासी थीं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिये, क्योंकि कुरआन का संकलन लोगों की स्मृतियों से ही तो हुआ था और नये विजित लोगों ने कुरआन का अपना संस्करण भी तैयार कर लिया था तो इसमें भूलवश आयतों के रूप में ऐसी बातों को लिख दिया जाना स्वाभाविक था जो कभी कही ही नहीं गयी थीं।

निम्नलिखित कुरआनी आयत के आधार पर निरसन (हटाने का) सिद्धांत अपनाया गया:

> हम अपनी कोई आयत निरस्त नहीं करते हैं अथवा भुलाते नहीं हैं, जब तक कि हम उससे उत्तम (कोई, अथवा उसके समान कोई आयत न ला दें। क्या तुम नहीं जानते कि अल्लाह जो चाहे कर सकता है? (2:106)

सच तो यह है कि अरबों आकाशगंगाओं का रचयिता एक वाक्य भी ऐसा नहीं ला सकता है जो पहली ही बार में पूर्ण हो। यही कारण है कि उसे दूसरी बार उससे कुछ अच्छा वाक्य लेकर आना पड़ता है। जो भी है, क़ुरआन के विरोधाभासों को हटाने के लिये मुस्लिम विद्वानों द्वारा इसी सिद्धांत को अपनाया जाता है, क्योंकि क़ुरआन में अनेक स्थानों पर ऐसा है कि एक बात को एक आयत में कुछ कहा जाता है और दूसरी आयत में इसी बात को कुछ और कहा जाता है। इसी कारण मुस्लिम विद्वानों ने पहले की आयतों के ऊपर बाद की आयतों को रखने का निर्णय किया। एनसाइक्लोपीडिया आफ़ इस्लाम में बुर्तोन और निरसन के इस्लामी सिद्धांत की पुस्तक के अनुसार कहा गया है कि मुशफ़ (कुरआन) से 564 आयतें अर्थात कुल आयतों का ग्यारहवां भाग निकाल दिया गया है।[72] आशा है कि जैसे-जैसे इस्लाम का आधुनिकीकरण होगा, और भी आयतों को हटा दिया जायेगा।

हिंसा

मुस्लिम पक्षकार बड़ी रुचि से यह दावा करते हैं कि ये हिंसक आयतें एक निर्दिष्ट समय के विशेष प्रसंग के बारे में बात करती हैं। जब इस्लाम की हिंसक आयतों का विश्लेषण कर रहे हों तो मुहम्मद के जीवन के इतिहास का विश्लेषण करना महत्वपूर्ण हो जाता है। मुहम्मद के पास कुरआन उसके जीवन के अंतिम 23 वर्षों में भेजी गयी। इन तेईस वर्षों में दो बड़ी महत्वपूर्ण घटनाएं हुईं। चूंकि हम कुरआन का आकलन करने में विश्लेषणात्मक बुद्धि का प्रयोग कर रहे हैं तो यह मानना अधिक व्यवहारिक है कि कुरआन मुहम्मद के शब्द थे, अतः जब तक कि यह बताया न जाये कि इस अध्याय में उद्धृत कोई भी आयत अल्लाह से आयी है, इन उद्धृत आयतों को मुहम्मद से आया हुआ माना जाता है।

कुरआन कालक्रम में संकलित नहीं है, अतः इसे दो भागों में विभाजित करना महत्वपूर्ण है:

1. मदीना जाने से पूर्व की कुरआनी आयतें, जिन्हें मक्का की आयतें कहा जाता है।
2. मदीना जाने के बाद की आयतें, जिन्हें मदीना की आयतें कहा जाता हैं।

मक्का की आयतें

कुरआन में जो आयतें नरम व अच्छी दिखती हैं उनमें से अधिकांश मुहम्मद के मदीना जाने से पूर्व की अवधि में आयीं। ये आयतें प्रकृति में अधिक सैद्धांतिक

व कम व्यवहारिक थीं। मुहम्मद ने अच्छाई की अपनी परिभाषा का उपदेश दिया: 'अल्लाह के पास आओ', 'अपने में के अन्य लोगों की देखभाल करो' आदि। ये सारी आयतें तब आईं जब मुहम्मद के पास कोई ताक़त नहीं थी और उसका ऐसा कोई अस्तित्व नहीं था कि उस पर ध्यान दिया जाये। सच तो यह है कि इन आयतों में जो भी धमकी दी गयी है वह अल्लाह की ओर से दी गयी तथा अभी तक जिहाद का सीधा आदेश नहीं आया था। इस समय मुहम्मद एक नये मज़हब को शुरू कर रहा था और उसके पास किसी ऐसे अल्लाह का नया संदेश था, जिस पर उस समय के अरबी लोग विश्वास नहीं करते थे। मुहम्मद का दिन-प्रतिदिन उपहास उड़ाया जाता और अपमान किया जाता। मक्का से जाने से पूर्व की इन आयतों का अवलोकन कीजिये:

> क्या वह नहीं जानता कि अल्लाह उसे देख रहा है? निश्चय यदि
> वह नहीं रुकता, तो हम उसे माथे के बल घसीटेंगे। (96:14-15)

जैसा कि आप देख सकते हैं कि अल्लाह की ओर से एक संभावित दंड की बात कही गयी है, किंतु मुहम्मद किसी सांसारिक दंड को नहीं थोप रहा है, क्योंकि वह सत्ता में नहीं है और इसलिये अ-मोमिनों (ग़ैर मुसलमानों) को अल्लाह के कोप की धमकी दे रहा है। (उपरोक्त आयत में 'वह' शब्द से अल्लाह का आशय उस व्यक्ति से है जो मुहम्मद को उसकी इबादत करने से रोक रहा हो)। मक्का के लोगों ने मुहम्मद से कहा होगा कि वह अपने इस नये गढ़े मज़हब का प्रचार करना बंद कर दे, किंतु इससे उसकी अपना नया मज़हब शुरू करने की महत्वाकांक्षा मंद नहीं पड़ी।

> वे चाहते हैं कि तुम (अपनी स्थिति में, मंद पड़ जाओ तो (वे
> भी तुम्हारे प्रति, व्यवहार नरम कर लें। (68:9)

चूंकि मुहम्मद उन्हें बाइबिल व तोरा की पुरानी कहानियां सुना रहा था, तो कोई प्रमाण देने की अपेक्षा उसने आयतों को ऐसे गढ़ा:

> जब उसके सामने हमारी आयतें पढ़ी जाती हैं तो वह कहता है,
> 'ये पूर्वजों की कल्पित कथायें हैं।' (68:15)

इसमें संदेह नहीं कि दोज़ख़ की आग और किसी प्रकार के ईश्वरीय दंड के बिना किसी प्रभावशाली मज़हब का काम नहीं चलता है, इसलिये मुहम्मद उन लोगों को अनंत काल तक दंड भोगने की धमकी देने लगा, किंतु वह इस स्थिति

में नहीं था कि स्वयं उन्हें दंड दे पाता। वास्तव में मुहम्मद उन लोगों के साथ कहासुनी से भी बचता रहता था:

> और जो वो कह रहे हैं उसे सहन करो और शांत व नरम रहकर उनसे दूर हो जाओ। (73:10)

अपितु मुहम्मद अपने लोगों से कह रहा है कि अ-मोमिनों से उलझो मत, अल्लाह उनसे निपटेगा। इन आयतों को देखिये:

> तो (हे मुहम्मद), उन लोगों (के प्रकरण), को मुझ पर छोड़ दो जो कुरआन को अस्वीकार कर रहे हैं। हम उन्हें इस प्रकार धीरे-धीरे (दंड की ओर, खींच लायेंगे कि वे जान भी नहीं पायेंगे। (68:44)
>
> और छोड़ दो उन अस्वीकार करने वाले लोगों को जो सुखी (सम्पन्न) हैं तथा उन्हें कुछ समय की छूट दे दो। (73:11)
>
> वस्तुत:, हमारे पास (उनके लिए, बहुत-सी बेड़ियां और दहकती आग है। (73:12)

ऐसी दसियों आयतें हैं जिनमें मुहम्मद अ-मोमिनों (ग़ैर-मुस्लिमों) को अल्लाह के दंड की धमकी देता है, किंतु जिहाद के लिये अल्लाह का सीधा आदेश नहीं है। 'वैज्ञानिक आयतों' में से अधिकांश इसी अवधि में आयीं, क्योंकि मुहम्मद की पैग़म्बरी का पहला भाग लोगों को अपने ईश्वरीय ज्ञान व व्यक्तिगत प्रतिभा का विश्वास दिलाने में ही बीता।

619 ईसवी में मुहम्मद के ताक़तवर चाचा अबू तालिब और मुहम्मद की बीवी ख़दीजा की मृत्यु हो गयी। इन दोनों की मृत्यु से मुहम्मद के पास से सुरक्षा जाती रही और अब उस पर प्रभुत्वशाली मूर्तिपूजक कुरैश जनजाति से सीधा ख़तरा आ गया था। मुहम्मद कुछ दिनों के लिये सुरक्षित ठिकाने को ढूंढ़ते हुए ताइफ़ गया, पर वहां उसका स्वागत नहीं हुआ। मुहम्मद मक्का वापस आ गया और तब यसरब (बाद में इसे मदीना के नाम से जाना गया) चले जाने का निर्णय किया। 622 ईसवी में लगभग सभी मुसलमान मदीना चले गये।

मदीना की आयतें

मदीना में मुख्यत: ईसाइयों व यहूदियों की जनसंख्या थी और ये लोग इस नये स्व-घोषित पैग़म्बर की अपेक्षा मक्का के मूर्तिपूजकों को लेकर अधिक चिंतित

थे तो उन्होंने मुहम्मद को मदीना आने की अनुमति दे दी। मुहम्मद ने एक कहानी गढ़ी कि उसे अपनी हत्या के षडयंत्र का पता चला है और एक रात धीरे से वह अबू बक्र के साथ मक्का से निकल गया। नीचे उसके बच निकलने की रोचक कहानी है:

मक्का में एक रात कुरैश एकत्र हुए। उनमें से कुछ ने कहा, 'प्रातः होने पर उसे ज़ंजीरों में बांधकर बंदी बना लो- उनका आशय रसूल (उन्हें अल्लाह शांति दे तथा कृपा प्रदान करे) से था। कुछ ने कहा, 'नहीं, उसे मार डालो।' अन्य लोगों ने कहा, 'नहीं, उसे यहां से निकाल बाहर करो।' अल्लाह ने अपने रसूल (उन्हें अल्लाह शांति दे तथा कृपा प्रदान करे) को यह बताया तो 'अली उस रात रसूल (उन्हें अल्लाह शांति दे तथा कृपा प्रदान करे) के बिछौने पर सो गये और रसूल (उन्हें अल्लाह शांति दे तथा कृपा प्रदान करे) बाहर निकले और खोह में छिप गये। मुश्रिक़ों को (मूर्तिपूजकों), अली की प्रतीक्षा में पूरी रात बिता दी, क्योंकि वे सोच रहे थे वो रसूल (उन्हें अल्लाह शांति दे तथा कृपा प्रदान करे) थे। जब प्रातः हुई तो वे उन पर झपट पड़े और तब उन्हें वहां अली मिले। अल्लाह ने उनके षडयंत्र को विफल कर दिया। तब उन्होंने कहा, 'तुम्हारा वह मित्र कहां है?' उन्होंने कहा, 'मैं नहीं जानता।' तो वे उन्हें (मुहम्मद को) ढूंढ़ने निकल पड़े और जब वे पहाड़ियों पर पहुंचे तो वे भौंचक्के रह गये। वे पहाड़ी पर चढ़े और खोह के पास से निकले और देखा इसका द्वार मकड़ियों के जाले से बंद था। उन्होंने कहा कि यदि इसके भीतर कोई गया होता तो मकड़ी द्वार पर जाला नहीं बुन पाती।' और वे वहां तीन रात रुके रहे।

मुहम्मद को चोरों के जैसे मध्यरात्रि में अपने ही नगर से भागना पड़ा और यह अच्छा नहीं होने जा रहा था। इससे संभवतया मुहम्मद सबसे अधिक प्रेरित हुआ कि वह पहले अपने मज़हब को सफल बनाये और फिर मक्का को जीतने वापस आये। जून 622 ईसवी में मुहम्मद लगभग सभी मुसलमानों के साथ सफलतापूर्वक मदीना में प्रवेश कर गया। जब मुसलमान चले गये तो मक्का के लोगों ने मुसलमानों की संपत्ति पर अधिकार कर लिया और मुहम्मद के लिये मक्का वालों के विरुद्ध जंग छेड़ने का यह पर्याप्त आधार था। मुहम्मद मक्का के लोगों की पहुंच से जैसे ही बाहर निकला, उसके पास जिहादी आयतें आनी प्रारंभ हो गयीं।

उन्हें अनुमति (जंग करने की, दे दी गयी, जिनसे जंग किया जा रहा है, क्योंकि उन पर अत्याचार किया गया है। और अल्लाह उनको जीत प्रदान करने में पूर्णतः सामर्थ्यवान है। जिन्हें उनके घरों से अकारण निकाल दिया गया, केवल इस बात पर कि वे कहते थे कि 'हमारा स्वामी अल्लाह है'। यदि अल्लाह प्रतिरक्षा न कराता कुछ लोगों की, कुछ लोगों द्वारा,

> तो वे आश्रम तथा गिरजाघर और यहूदियों के धर्मस्थल तथा मस्जिदें जिनमें अल्लाह का नाम अधिक लिया जाता है, ध्वस्त कर दिये गये होते। और अल्लाह निश्चित ही उनकी सहायता करेगा जो उसका समर्थन करेंगे। वस्तुतः अल्लाह अति सामर्थ्यवान व प्रभुत्वशाली है। (22:39-40)

ध्यान दीजिये कि यह आयत ईसाइयों व यहूदियों की आलोचना नहीं करती हैं। अपितु मुहम्मद यह कहकर उनको मक्खन लगा रहा है कि मक्का के मूर्तिपूजकों ने गिरिजाघरों व यहूदियों के धर्मस्थलों को नष्ट कर दिया होता, क्योंकि उनमें अल्लाह का नाम लिया जाता है। स्पष्ट है कि यहूदी और ईसाई उसके इस दावे से सहमत नहीं थे। वैसे भी यहूदी और ईसाई दोनों मक्का के मूर्तिपूजकों को अपने शत्रु के रूप में देखते थे। वास्तव में सभी हिंसक आयतें तब आयीं जब मुहम्मद मदीना में था और उसकी ताक़त बढ़ रही थी। अब चूंकि मुहम्मद का प्रभाव बढ़ रहा था तो यह समय जंग करने और विस्तार करने का था।

कह दो (हे नबी, 'यदि तुम्हारे बाप, तुम्हारे पुत्र, तुम्हारे भाई, तुम्हारी बीवियां, तुम्हारे परिवार, तुम्हारा धन जो तुमने कमाया है और जिस व्यापार के मंद हो जाने का तुम्हें भय है तथा वो घर जिनसे मोह रखते हो, तुम्हें अल्लाह, उसके रसूल और अल्लाह की राह में जिहाद से अधिक प्रिय हैं, तो देखते जाओ, अल्लाह अपने आदेश को लागू करा लेगा। और अल्लाह विद्रोही अवज्ञा करने वाले लोगों को मार्ग नहीं दिखाता।' (9:24)

यह आयत और कुछ नहीं, बस पिता, भाई अथवा बीवी आदि से ऊपर अल्लाह के प्रेम के विचार को रख रही है। यह आयत कह रही है कि अल्लाह और जिहाद सबसे पहले आता है और यही एकमात्र उपाय है जो क़यामत के दिन दोज़ख़ की आग से बचा सकता है।

> (हे मोमिनो!) उनसे जंग करो, जो न तो अल्लाह पर विश्वास

> करते हैं, न ही अन्तिम दिन (क़यामत) पर और न जिसे अल्लाह और उसके रसूल ने वर्जित (हराम) किया है उसे वर्जित (हराम) समझते हैं, न सत्य के मज़हब को अपना मज़हब बनाते हैं, उनमें से जो पुस्तक में दिये गये हैं- (जंग करो, जब तक कि वे अपने हाथ से जज़िया न दें और वे अपमानित होकर न रहें। (9:29)

यह आयत विशेष रूप से उन यहूदियों और ईसाइयों के लिये है जो अल्लाह में विश्वास करने का दावा तो करते हों, किंतु वास्तव में मुसलमान न हों, क्योंकि वास्तव में वे यहोवा में विश्वास करते हैं। यह आयत उनको चिह्नित और अलग-थलग कर रही है और दर्शा रही है कि वे अब मित्र नहीं रहे।

यहां कुरआन मुसलमानों को आदेश दे रही है कि उनसे तब तक जंग करो, जब तक कि वे अपमानित न हो जायें, अर्थात वे मुस्लिम शासन को स्वीकार न कर लें और जज़िया देने वाले द्वितीय श्रेणी का नागरिक बनकर न रहें।

अल-तबरी ने एक सामान्य वर्णन दिया है कि जब मुहम्मद ने बैजेंटाइन सम्राट के पास अपना दूत भेजा तो उसने उस दूत का सिर काट लिया। उस दूत की हत्या के उत्तर में यह आयत आयी। इब्ने क़सीर इस आयत के प्रसंग का वर्णन तनिक भिन्न ढंग से करता है।

> यह प्रतिष्ठित आयत पुस्तक के लोगों से जंग करने के आदेश के साथ उतरी। जब मूर्तिपूजक पराजित कर दिये गये तो लोग बड़ी संख्या में अल्लाह के मज़हब में आये और अरब प्रायद्वीप मुस्लिम नियंत्रण में सुरक्षित कर लिया गया। अल्लाह ने अपने पैग़म्बर को ग्रंथों के लोगों अर्थात यहूदियों व ईसाइयों से जंग करने का आदेश दिया। हिजरा के नौवें वर्ष मुहम्मद ने रोमन लोगों से जंग करने के लिये अपनी फ़ौज तैयार की और अपनी मंशा व गंतव्य की घोषणा करते हुए मुसलमानों को जिहाद के लिये बुलाया। रसूल ने फ़ौज एकत्र करने के लिये अल-मदीना के आसपास के क्षेत्रों की अनेक अरब जनजातियों के पास अपनी मंशा का संदेश भेजा और उन्होंने तीस हज़ार की फ़ौज तैयार की। मदीना के कुछ लोग और मदीना व आसपास के मुसलमानों के

वेश में कुछ बहुरूपिये पीछे रह गये, क्योंकि उस वर्ष भयानक सूखा पड़ा था और भयानक गर्मी थी। अल्लाह के रसूल आगे बढ़े, रोमनों से जंग के लिये अश-शाम की ओर बढ़ते हुए वो तबूक पहुंचे, जहां वे वहां के जल स्रोतों के समीप बीस दिन तक पड़ाव डाले रहे। उन्होंने तब अल्लाह से निर्णय की गुहार लगायी और अल-मदीना वापस लौट गये, क्योंकि वह अत्यंत कठिन वर्ष था और लोग दुर्बल थे, जैसा कि हम उल्लेख करेंगे, अल्लाह ने उनकी बात मान ली।[125]

यदि हम अल-तबरी के संस्करण को मानें तो फिर प्रश्न उठता है कि उस पत्र में क्रुद्ध करने वाली ऐसी क्या बात लिखी थी कि बैजेंटाइन सम्राट ने दूत को मारने का निर्णय किया? यदि हम इब्ने क़सीर का संस्करण लें तब इसका कुछ अर्थ निकलता है। वह आयत आयी, मुहम्मद ने अपनी मंशा स्पष्ट करते हुए दूत भेजा और इस प्रकार उस सम्राट ने प्रतिक्रिया दी।

नीचे उस पत्र का अनुवाद दिया गया है:

सर्वाधिक दयावान, दया के सागर अल्लाह के नाम अब्दुल्लाह का बेटा मुहम्मद की ओर से, रोमनों के नेता हरकुलिस को:

उस पर शांति हो जो सही मार्ग का पालन करता है।

आगे मैं इस्लाम के निमंत्रण के साथ तुम्हें आमंत्रित करता हूं। यदि तुम इस्लाम स्वीकार करते हो तो तुम्हें शांति मिलेगी। अल्लाह तुम्हें दोहरा पुरस्कार देगा। यदि तुम निमंत्रण अस्वीकार करते हो तो तुम एरियन के पाप के भागी बनोगे।

(हे नबी!) बता दो, 'हे अहले किताब! एक ऐसी बात की ओर आ जाओ, जो हमारे और तुम्हारे बीच समान रूप से मान्य है- कि हम अल्लाह के सिवा किसी की इबादत नहीं करेंगे और अल्लाह के अतिरिक्त किसी और को पालनहार के रूप में नहीं मानेंगे।' किंतु यदि वे विमुख हो जायें, तो बता दो 'तुम साक्षी रहो कि हम मुसलमान (अल्लाह के आगे झुकने वाले) हैं।' (3:64)[126]

हरकुलिस ने इसे धमकी के रूप में लिया और निश्चित ही इससे आहत भी हुआ। मुहम्मद ने या तो इस आयत के व्यर्थ चले जाने के पहले या फिर बाद में बैजेंटाइन साम्राज्य पर हमला करने का निर्णय किया। मुहम्मद ने दूसरे राष्ट्राध्यक्षों

को जो अन्य पत्र लिखे, उसके आलोक में यह स्पष्ट है कि मुहम्मद सभी को इस्लाम के झंडे के नीचे आने अथवा परिणाम भुगतने की धमकी दे रहा था। निश्चित ही ये सब जंग की धमकी के रूप में देखा जा रहा था। यदि आप पहले और बाद की आयतों को पढ़ेंगे तो यह समझ में आ जायेगा। पहले की आयत कहती है:

> हे मोमिनो! वास्तव में मुश्रिक़ (बहुदेववादी) मलिन अर्थात गंदे हैं तो उन्हें इस (अंतिम, वर्ष के पश्चात आगे से अल-मस्जिद अल-हराम के निकट न आने दो। और यदि तुम्हें इससे आर्थिक हानि का भय हो रहा हो तो अल्लाह की इच्छा होगी तो वह तुम्हें अपनी आर्थिक सहायता देकर धनी कर देगा। वस्तुत: अल्लाह सर्वज्ञ, तत्वज्ञ है। (9:28)

इब्न क़सीर के अनुसार एक बार मुहम्मद ने इस आयत को प्रभावी बनाकर मस्जिद अल-हराम में अ-मुस्लिमों (ग़ैर-मुस्लिमों) का प्रवेश प्रतिबंधित कर दिया तो मुसलमानों की बड़ी आर्थिक हानि हुई, क्योंकि वे वहां अ-मुस्लिमों द्वारा दिये जा रहे आर्थिक योगदान से वंचित हो गये। मुसलमानों की क्षतिपूर्ति के लिये अल्लाह ने एक और आयत भेजकर यहूदियों व ईसाइयों से जंग करने और उनसे जज़िया उगाहने का आदेश दिया।

आयत 9.29 के बाद की आयत कहती है:

> तथा यहूदियों ने कहा, 'उज़ैर अल्लाह का पुत्र है और नसारा (ईसाईयों) ने कहा कि मसीह अल्लाह का पुत्र है।' ये उनके अपने मुंह की बातें हैं। वे उनके जैसी बातें कर रहे हैं जो (इनसे पहले, काफ़िर हो गये। अल्लाह उन्हें नष्ट करेगा वे कहां बहके जा रहे हैं? (9:30)

अल्लाह अब उचित ठहरा रहा है कि ये यहूदी और ईसाई कितने बुरे हैं, इनके विरुद्ध जंग को उचित ठहरा रहा है, इस प्रकार आयत 9.29 मुसलमानों को यहूदियों व ईसाइयों के विरुद्ध जंग छेड़ने को कह रही है।

628 ईसवी में मुहम्मद मक्का जाना चाहता था और वहां काबा में तीर्थयात्रा (उमरा) करना चाहता था, परंतु मूर्तिपूजकों ने उसको इसकी अनुमति देने से मना कर दिया। बहुत बातचीत के बाद दोनों पक्ष एक शांति संधि करने को तैयार हुए।

इस संधि को हुदैबिया की संधि कहा जाता है। इस संधि में स्पष्ट रूप से कहा गया था, यदि कोई कुरैश अपने अभिभावकों की अनुमति के बिना मुहम्मद के पास आता है, अर्थात कोई कुरैश इस्लाम स्वीकार करता और अपने अभिभावकों की अनुमति के बिना मुहम्मद के पास जाता तो उस व्यक्ति को कुरैशों के पास वापस भेजना पड़ता। एक कुरैशी औरत उम्मे कुलसुम बिंते-उक़्बह ने इस्लाम स्वीकार कर लिया और मुहम्मद के पास मदीना भाग आयी। जब उसके भाइयों उसे वापस मांगा तो मुहम्मद ने वापस भेजने से मना कर दिया और अपनी सुविधानुसार यह आयत ले आया:

> हे मोमिनो! जब तुम्हारे पास (दूसरा धर्म छोड़कर इस्लाम स्वीकार करने वाली) मुसलमान औरतें भागकर आयें, तो उनकी परीक्षा ले लिया करो। अल्लाह अधिक जानता है उनके ईमान को। और जब तुम्हें ये ज्ञान हो जाये कि वे ईमान वालियां (इस्लाम में विश्वास करने वाली) हैं, तो उन्हें काफ़िरों (ग़ैर-मुसलमानों) को वापस न करो। वे औरतें (बीवियां) उनके (काफ़िरों) के लिये वैध नहीं हैं और न ही वे वे (काफ़िर) उनके वैध पति रह गये। किंतु उन काफ़िरों को वो दे दो जो उस औरत पर व्यय किया है। (60:10)

मूलत: अल्लाह अब कह रहा है कि यदि वह मुसलमान हो गयी है तो उसे उसके अभिभावकों को वापस मत लौटाओ, इस प्रकार मुहम्मद ने उस संधि का उल्लंघन किया। मुहम्मद ने उम्मे-कुलसुम को वापस लौटाने से मना कर दिया और उसके पति को वह राशि लौटाने का प्रस्ताव दिया जो उसने शादी पर व्यय किया था। मैं यह कहना चाहूंगा कि उम्मे-कुलसुम को न लौटाना वास्तव में ठीक काम था, क्योंकि उसे यह स्वतंत्रता होनी चाहिये थी कि वह जहां चाहे जाये, किंतु स्पष्ट रूप से यह उस समझौते का उल्लंघन था जो मुहम्मद ने कुरैशों के साथ किया था। पहले के जैसे ही मुहम्मद ने इस बार भी अपने लाभ का समझौता (संधि) किया और जब उसे आवश्यकता पड़ी तो उसने अपने लाभ के लिये समझौता तोड़ भी दिया। झूठ यह फैलाया गया है कि कुरैशों ने समझौता तोड़ा था, जबकि सच यह है कि समझौता तोड़ने वाला मुहम्मद ही था।

मुस्लिम पक्षकार दावा करते हैं कि यह समझौता पहले ही टूट गया था, क्योंकि कुरैशों की सहयोगी जनजाति बनू बक्र ने एक बनू ख़ुज़ा की मुसलमान जनजाति पर आक्रमण किया था। संधि टूटने के औचित्य को सिद्ध करने का यह अत्यंत घटिया बहाना है, क्योंकि वह समझौता कुरैशों के साथ था, न कि पड़ोसी बहुदेववादी जनजातियों के साथ। मुसलमान जानते थे कि यह झूठा बहाना है और समझौते को तोड़ने के लिये यह बहाना पर्याप्त नहीं होगा, इसलिये उन्होंने अल्लाह से आयत मांगी। पहले के जैसा ही मुहम्मद ने अपनी सुविधानुसार यह आयत प्राप्त की:

> और जब पवित्र मास बीत जायें तो बहुदेववादियों (काफ़िरों) को जहां पाओ वहीं हत्या कर दो और उनको बंदी बना लो और उनकी घेराबंदी करो और घात लगाने के प्रत्येक स्थान पर बैठकर उनकी प्रतीक्षा करो। किंतु यदि वे प्रायश्चित कर लें, नमाज़ पढ़ें और ज़कात दें तो उन्हें उनके मार्ग पर छोड़ दो। वास्तव में अल्लाह क्षमाशील व दयावान है। (9:5)

उम्मे कुलसुम की घटना से कुरैश प्रसन्न नहीं थे। मुसलमानों ने यह भी दावा किया कि समझौता कुरैशों द्वारा तोड़ा गया था, क्योंकि उनके सहयोगी जनजाति ने मुसलमान क़बीले पर आक्रमण किया था। जो भी हो, मुहम्मद ने कुरैशों को चार माह का समय दिया और फिर बोला कि उनसे जंग लड़ी जायेगी।

इस आयत में मुहम्मद दावा करता है कि अल्लाह उसे बता रहा है कि पवित्र माह बीत जाने की प्रतीक्षा करो और तब बहुदेववादियों को जहां पाओ वहीं उनकी हत्या कर दो।' अल्लाह ने उन्हें छूट दी है जो समझौते के टूटने से अनभिज्ञ थे। इस्लाम के आलोचक जान-समझकर इस आयत को मूल प्रसंग से हटाकर सुनाते हैं और बताते हैं कि यह आयत अल्लाह के मंत्रालय द्वारा काफ़िरों की हत्या के लिये निर्गत अनुज्ञप्ति (लाइसेंस) है। किंतु वास्तविकता इससे भिन्न है। वैसे कुलसुम को न लौटाकर इस समझौते का जो उल्लंघन किया गया था, उसका दोषी मुहम्मद को ठहराया जाना चाहिये। मुहम्मद अत्यंत प्रभावशाली व्यक्तित्व था और उसे यह आभास हो रहा था कि इस्लाम फल-फूल रहा है तो उसे लगने लगा था कि इस समझौते को तोड़ देना उसके व्यापक हित में है। इसके बाद कुरैशों से कोई और समझौता करने का प्रयास भी नहीं किया गया। हमारे आधुनिक संसार में जब समझौता-वार्ताएं विफल हो जाती हैं तो युद्ध छेड़ने की अपेक्षा बातचीत करने एवं

सारी बातों पर पुनः विचार करने का प्रयास किया जाता है।

आइये कुछ अन्य आयतों को देखते हैं:

> अल्लाह की राह में उनके विरुद्ध जंग करो जो तुमसे जंग करते हैं, किंतु सीमाएं मत लांघो, क्यों अल्लाह को उल्लंघन करने वाले प्रिय नहीं हैं। (2:190)

यह आयत किसी विशेष घटना पर आधारित नहीं है। यह आयत अल्लाह की ओर से अपने शत्रुओं से लड़ने का सामान्य आदेश है। इस्लामिक स्टडीज़ डॉट आर्ग 70 व्याख्याओं में यह स्वीकार किया गया है कि जब मुसलमान दुर्बल थे तो उनसे धैर्य रखने और केवल विनम्रता से अपनी बात रखने को कहा गया था, किंतु अब चूंकि उनके पास मदीना में एक छोटा सा राज्य था तो अल्लाह के संदेश को फैलाना ठीक था। जब आईएसआईएस अथवा तालिबान अपनी जीत के लिये इन आयतों को अल्लाह के आदेश के रूप में व्याख्या करते हैं तो उन पर कोई प्रश्न कैसे उठा सकता है? इस आयत के परिणामस्वरूप बद्र की जंग लड़ी गयी और मुसलमान विजेता हुए।

जनवरी 624 ईसवी में मुहम्मद ने अब्दुल्लाह बिन ज़हश के नेतृत्व में आठ आदमियों के एक गिरोह को कुरैशों की गुप्तचरी के लिये मक्का के बाहरी क्षेत्र नखला भेजा। इसका परिणाम रजब के माह में एक कुरैशी व्यक्ति की मृत्यु के रूप में सामने आया। रजब वह पवित्र माह था जिसमें लड़ना प्रतिबंधित था। मुहम्मद ने पहले स्वीकार किया कि मुसलमानों को वहां पर हमला नहीं करना चाहिये था और उसने गिरोह द्वारा बंदी बनाकर लाये गये लोगों और लूटे गये माल को लेने से मना कर दिया और तभी उसे अल्लाह की ओर से एक और आयत मिली। सदा के जैसे अल्लाह ने मुहम्मद को इस असमंजस से बाहर निकाला और उसे निम्नलिखित आयत दी:

> (हे नबी!) वे तुमसे प्रश्न करते हैं कि पवित्र माह में जंग करना कैसा है? उनसे बता दो, 'उसमें जंग करना घोर (पाप, है, परन्तु अल्लाह की राह से रोकना, उसको मानने से अस्वीकार करना तथा मस्जिदे हराम (तक पहुंचने से रोकना, और उसके निवासियों को वहां से भगाना अल्लाह की दृष्टि में उससे भी बड़ा पाप है तथा फ़ितना हत्या से भी भारी है।' और वे तो तुमसे

> जंग करते ही जायेंगे, जब तक कि तुम्हें मज़हब से दूर न कर दें, यदि उनके वश में हो। और तुममें से जो भी अपने मज़हब (इस्लाम) से (इस्लाम छोड़ने, की ओर जायेगा, फिर कुफ़्र पर ही वह मरेगा- ऐसे लोगों का किया-कराया, संसार तथा परलोक दोनों में व्यर्थ हो जायेगा तथा वे आग में जलने वालों के साथ रहेंगे। वे वहीं अनंत काल तक पड़े रहेंगे। (2:217)

यह आयत स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि इसे किसी मनुष्य द्वारा गढ़ा गया था। हो सकता है कि मुहम्मद से कहा गया होगा कि उन्हें यह हमला नहीं करना चाहिये था जिसमें पवित्र माह में एक व्यक्ति मारा गया। किंतु इस अपराध के लिये समझौता करने के स्थान पर मुहम्मद आगे बढ़ा और बोला कि अल्लाह ने कहा है जो हुआ ठीक हुआ। आयत के इस भाग पर ध्यान दीजिये:

> वे तब तक तुमसे लड़ते रहेंगे, जब तक कि तुम्हें तुम्हारे मज़हब से दूर न कर दें, यदि उनके वश में हो।

मुहम्मद ने अपने दोष को पूर्णत: दूसरों पर थोप दिया और दिखाया कि किस प्रकार उन लोगों से लड़ते रहना महत्वपूर्ण है, मानों यदि तुम नहीं लड़ोगे तो वे तुमसे लड़ेंगे। यह पुन: एक स्पष्ट सूचक था कि उस समय तक मुहम्मद मूर्तिपूजकों पर तब तक हमला करते रहने पर उतारू हो चुका था, जब तक कि मूर्तिपूजक समाप्त न हो जायें। यह इस्लाम के प्रसार का समय था। बद्र की जंग को रक्षात्मक युद्ध के रूप में नहीं माना जा सकता है। ऊपर जो पूरी आयत दी गयी है, उसके आने के बाद मुहम्मद ने उस हमले में बंदी बनाये गये लोगों को ले लिया। बद्र की जंग से पहले मुहम्मद के पास सुविधाजनक ढंग से एक और आयत 'आयी':

> तो जब (जंग में) काफ़िरों का सामना हो तो जब तक कि तुम उनको कुचल न दो, (उनके, गले काटते रहो। यहां तक कि जब वे हथियार डाल दें तो उन्हें दृढ़ता से बांध दो। फिर उन्हें बंदी बना लो और इसके बाद या तो उन पर कृपा (करो, अथवा (उनसे, फ़िरौती लेकर छोड़ दो। ये (आदेश है,। और यदि अल्लाह चाहता तो वह स्वयं उनसे बदला ले लेता, किन्तु (उसने सशस्त्र संघर्ष का आदेश दिया) जिससे कि एक-दूसरे द्वारा तुम्हारी परीक्षा ले। और जो अल्लाह की राह में मार दिये गये-उनके कर्मों को

अल्लाह कदापि व्यर्थ नहीं करेगा। (47:4)

निश्चित ही मुसलमान कहेंगे कि अल्लाह तुम्हें आदेश दे रहा है कि काफ़िरों से जंग शुरू होने पर क्या करना चाहिये, और अल्लाह वैसे ही आदेश दे रहा है जैसे कि कोई जनरल देता है। यह तो है ही कि कोई जनरल अपने सैनिकों से नहीं कहेगा कि शत्रु की हत्या न करो, किंतु कोई जनरल नोबल शांति पुरस्कार भी जीतने नहीं जा रहा है। तो जब युद्ध प्रारंभ होगा तो वे लड़ेंगे। हमने देखा कि किस प्रकार 'काफ़िरों' के साथ जंग से बचा जा सकता था और किस प्रकार वह मुहम्मद ही था जिसने वास्तव में समझौते का उल्लंघन किया था।

विचित्र बात है कि चाहे अपने बेटे की बीवी से शादी करने की बात हो अथवा जंग जीतने की बात हो, ये सभी आयतें मुहम्मद के पक्ष में ही दिखती हैं। इसके कुछ ही समय बाद मुहम्मद ने बद्र की जंग लड़ी और बड़ी जीत प्राप्त की।

> वो (जंग में) तुम्हें जहां मिलें वहीं उनकी हत्या करो और उन्हें वहां से निकाल भगाओ जहां से उन्होंने निकाला था। (क्योंकि यद्यपि हत्या करना पाप है, अनधिकृत फ़ित्ना (अशांति) हत्या से भी बुरा है। उनसे मस्जिदे-हराम के पास जंग न करो, जब तक कि वे तुमसे वहां युद्ध न करें किंतु यदि वे तुम्हारे विरुद्ध लड़ते हैं तो उनकी हत्या कर दो, क्योंकि ऐसे अ-मोमिनों (ग़ैर मुसलमानों) अर्थात काफ़िरों का यही पुरस्कार है। 2:191)

तफ़्सीर अल-जलालैन के अनुसार यह आयत तब आयी जब मुहम्मद मक्का जीत चुका था। मुसलमानों ने बिना किसी विशेष प्रतिरोध के मक्का पर जीत प्राप्त कर ली। मुहम्मद कह रहा है कि मूर्ति पूजा करना हत्या करने से भी अधिक बुरा है, अतः मूर्तिपूजकों की हत्या कर दो। ध्यान दीजिये, इस आयत में फ़ित्ना (अशांति) से पहले अनधिकृत शब्द लिखा है, जिसका अर्थ हुआ कि कुछ प्रकरणों में अशांति भी उचित हो सकती है। मैं सोचता हूं कि उचित अशांति क्या होती होगी। स्पष्ट है, इसका अर्थ है कि यदि कोई ग़ैर-मुसलमान या ऐसा व्यक्ति जो मुसलमानों के बीच इस्लाम के प्रति अविश्वास अशांति फैला रहा है तो उसका उत्पीड़न करना अनधिकृत और अनुचित नहीं है। किंतु यदि कोई मुसलमानों का उत्पीड़न कर रहा है तो आप हथियार उठा सकते हैं और उनकी हत्या करनी पड़े तो कर सकते हैं।

कुरैश लोग मुहम्मद के शब्दों और उसके मज़हब पर विश्वास करने के लिये बाध्य किये गये। हां, मुहम्मद को अवरोध में मक्का छोड़ना पड़ा था, किंतु इसका यह अर्थ नहीं हुआ कि मुहम्मद वापस आ सकता था और नगर पर बलपूर्वक अधिकार कर सकता था। यह वैसे ही है जैसे मैं अब पाकिस्तान नहीं जा सकता, किंतु यदि मैं किसी प्रकार एक सुदृढ़ सेना तैयार कर पाऊं तो मैं वहां वापस जाने योग्य हो जाऊंगा और फिर मैं उस देश को बल से अपने अधिकार में ले लूं तथा वहां के प्रत्येक व्यक्ति को या तो नास्तिक बना दूं या उन्हें अपने शासन में द्वितीय श्रेणी का नागरिक बनकर रहने पर विवश करूं। मुहम्मद ने यही तो किया। जिस क्षण उसे ताक़त मिली, वह अपने जन्म के नगर वापस गया और इसे जीता, काबा के मंदिर की सभी मूर्तियों को तोड़ा और अपना मज़हब स्थापित किया। यद्यपि मैं इस पर तनिक और विस्तार से बात करने जा रहा हूं, पर उससे पहले मुस्लिम पक्षकारों की एक प्रिय आयत पर बात करना महत्वपूर्ण है:

दीन (स्वीकार करने, में कोई दबाव नहीं। (2:256)

यह सही है कि इस आयत में अल्लाह लोगों से कह रहा है कि दीन में दबाव नहीं, किंतु इसके बाद भी सबकुछ अच्छा नहीं है। यह आयत उन लोगों के संदर्भ में है जो इस्लामी शासन के अधीन हैं और जज़िया कर दे रहे हैं। दूसरे शब्दों में वे पहले से ही द्वितीय श्रेणी के नागरिक हैं। पाकिस्तान जैसे देश इस आयत का उपयोग ग़ैर-मुस्लिमों को राष्ट्रीय पहचान पत्रों पर ग़ैर-मुस्लिम के रूप में चिह्नित करने को सुनिश्चित करने के लिये करते हैं और इसका परिणाम ग़ैर-मुसलमानों के साथ संस्थागत भेदभाव के रूप में सामने आता है।

जब मुसलमानों के नियंत्रण में ग़ैर-मुसलमान हों तो केवल मुसलमानों के पास ही यह विकल्प होता है कि ग़ैर-मुसलमानों पर अपना मज़हब थोपें या नहीं थोपें। द्वितीय श्रेणी के नागरिक मानकर व्यवहार करने से उत्पन्न भेदभाव ग़ैर-मुसलमानों को मुसलमान बनाने के लिये पर्याप्त होता है।

vè;k; 8

इस्लामोफ़ोबिया

आपने मुस्लिम पक्षधरों एवं तथाकथित वामपंथी उदारवादियों को बहुधा इस शब्द का प्रयोग करते सुना होगा। पहले तो आइये देखते हैं कि फ़ोबिया का अर्थ क्या होता है। आक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार फ़ोबिया 'किसी बात के प्रति चरम या अतार्किक (अज्ञात) भय अथवा अरुचि' होता है। इस का अर्थ हुआ कि कोई भी भय जिसके पीछे अतार्किक कारण हों। उदाहरण के लिये, आप सर्पभीति (ओपहीडियोफ़ोब) की समस्या से ग्रस्त हो सकते हैं और आपमें सांपों का अज्ञात भय हो सकता है। आप नगरों में रहते हैं जहां इसकी संभावना अति न्यून है कि आप सांप देखें, फिर भी आपको सदा उनसे भय लगता है और आप कल्पना करने लगते हैं कि जब आप सो रहे होंगे तो वे आपके ऊपर रेंगेंगे। आप न्यूजीलैंड में रहकर भी सर्पभीति से ग्रस्त हो सकते हैं, जबकि वह एक ऐसा देश हैं जहां सांप नहीं हैं। आप पार्क, पहाड़ों या गलियों में घूम-टहल सकते हैं और आपको कभी सांप नहीं दिखेगा, फिर भी आप किसी सांप द्वारा काट लिये जाने के भय से भयानक रूप से ग्रस्त होते हैं। अब यह एक अतार्किक भय है।

मैं आस्ट्रेलिया में रहता हूं, जहां बहुत अधिक सांप पाये जाते हैं, पर मैंने उनको चिड़ियाघर के बाहर कभी नहीं देखा है और चूंकि मैं सर्पभीति से पीड़ित नहीं हूं तो मैं सांप के काटने के भय से चिंतित हुए बिना जीवन जीता हूं। इसका यह अर्थ नहीं है कि यदि मैं उसे अपनी ओर आता देखूंगा तो मुझे भय नहीं लगेगा। यदि मैं झाड़ियों के समीप टहल रहा हूं और सांप देखता हूं तो क्या मैं उसकी ओर जाऊं अथवा अपने हाथों से उसे छूकर देखूं? यह तो नितांत मूर्खतापूर्ण होगा, क्योंकि वह सांप काट लेगा और मुझे उसके काटने से भयभीत होना चाहिये, किंतु तब उसके साथ न उलझना पूर्णत: तार्किक कारण होगा। मुझे सांपों से भय रहना चाहिये, किंतु सांपों से भय रखना वैसा ही नहीं है, जैसा कि सर्पभीति से ग्रस्त होना।

आइये, अब इस्लामोफ़ोबिया के विषय में बात करते हैं। परिभाषा के अनुसार

इसका अर्थ है इस्लाम से अज्ञात भय रखना। जैसे ही आप इस्लाम की आलोचना करेंगे, आपको तुरंत ही इस्लामोफ़ोबी कह दिया जायेगा। मेरे फ़ेसबुक पेज के एडमिनों में एक महिला थी। किसी भी महिला को इस्लाम से भयग्रस्त होना चाहिये, क्योंकि जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि इस्लाम शौहर द्वारा बात न मानने वाली बीवी को पीटने को प्रोत्साहित करता है।

इस्लाम की इस विशेष शिक्षा से भयभीत होना अतार्किक नहीं है। क्या आप चाहेंगे कि आपके दाम्पत्य जीवन का साथी आपको पीटे? मेरा अनुमान है कि कोई भी समझदार व्यक्ति कहेगा, 'नहीं!' अत: आपको उस विचारधारा की निंदा करनी पड़ेगी जो इसे प्रश्रय देता है। इससे आप फ़ोब नहीं हो जायेंगे। यह आपको वैध रूप से और तार्किक आधार पर इस विचारधारा से भयभीत बनाता है।

इस्लामी दृष्टिकोण से बात तब और बिगड़ जाती है, जब कि मेरे पेज की एडमिन सीवी एक समलिंगी हैं। इस्लाम में समलैंगिकता एक भयानक पाप है और यदि व्यक्ति समलैंगिकता की प्रवृत्ति नहीं छोड़ता है तो उसकी हत्या की जा सकती है। क्या उस महिला को इस्लाम से भयभीत होना चाहिये? क्योंकि इस्लाम की विचारधारा उसे मार देना चाहती है। तो क्या कोई मुझे बता सकता है कि उसका इस्लाम से भयभीत होना अतार्किक कैसे है? मुझे नहीं लगता है कि कोई भी ऐसा कह सकेगा, तो वह इस्लामोफ़ोबी नहीं हुई।

यदि वह एक मुस्लिम देश में मुस्लिम माता-पिता से नहीं जन्मी होती तो वह इंटरनेट पर अपनी पहचान उजागर करने में उसे भय नहीं लगता। इस्लाम से उसका भय नितांत तार्किक है और भले ही वह पश्चिमी देश में रहती है, पर फिर भी उसे इस्लामियों का भय सताता रहता है कि वे उसे पापी, नास्तिक, समलैंगिक पूर्व मुस्लिम घोषित कर देंगे तथा उसकी हत्या का प्रयास करेंगे।

मैं आस्ट्रेलिया में रहने वाला एक पाकिस्तानी पूर्व-मुस्लिम हूं। मैं भी इस्लाम से भयभीत हूं, क्योंकि यह इस्लाम छोड़ने वालों की हत्या को प्रोत्साहन देता है, चाहे वह व्यक्ति कहीं भी हो। न्यू साउथवेल्स विश्वविद्यालय में मेरी एक परिचर्चा के समय 2018 में हिज़्ब उत-तहरीर के प्रवक्ता उस्मान बदर ने कहा कि इस्लामी शिक्षाओं के अनुसार इस्लाम छोड़ने वाले मेरे जैसे सारे लोगों की हत्या कर दी जानी चाहिये। हो सकता है कि उनका कोई भी अनुयायी किसी दिन मेरा दरवाज़ा खटखटाये और मेरी हत्या का प्रयास करे। अब मैं इस्लाम से भयभीत हूं तो ऐसा

करना तार्किक है या अतार्किक?

इस्लाम से भय वास्तविक है और किसी भी समझदार व्यक्ति को इस्लाम और उसकी शिक्षाओं से भयभीत होना चाहिये। इस्लामोफ़ोबिया दूसरी ओर छद्‌म शब्द है और इसका कोई ऐसा कोई आधार नहीं है। किसी को इस्लामोफ़ोबी कह देना केवल मूर्खतापूर्ण है। यदि मैं सीधे कहूं कि मुझे आर 'एन' बी म्यूजिक अच्छा नहीं लगता, क्योंकि इसमें हिंसक गीत होते हैं अथवा यदि मुझे फुटबाल अच्छा नहीं लगता है तो इस तर्क से मुझे आर-'एन'-बी-फ़ोबी या फुटबालफोबी होना चाहिये। अब आइये विस्तार से देखें कि क्यों ग़ैर-मुस्लिम इस्लाम से भयभीत रहते हैं।

जैसा कि पहले बताया गया कि ग़ैर-मुस्लिमों के प्रति कुरआन का दृष्टिकोण अत्यंत हिंसक है। मुझे यह स्वीकार करने में प्रसन्नता होती है कि अधिकांश मुसलमान अपने दैनिक जीवन में उन हिंसक आयतों का पालन नहीं करते हैं, पर फिर भी ऐसे लोगों की बड़ी संख्या है जो इन हिंसक आयतों सहित कुरआन के प्रत्येक शब्द को अक्षरशः मानते हैं।

हम मुसलमानों को चार श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं:

1. जिहादी
2. इस्लामवादी
3. भोले-भाले
4. धर्मनिरपेक्ष

जिहादी: ये वो मुसलमान होते हैं जिनसे ग़ैर-मुसलमान सबसे अधिक भयभीत होता है, क्योंकि ऐसे मुसलमान न केवल हिंसक आयतों में विश्वास करते हैं, वरन् ये लोग उन आयतों के अनुसार काम करने की भी इच्छा रखते हैं। इनके सामान्य उदाहरण आईएसआईएस और तालिबान हैं।

इस्लामवादी: ये लोग भी ऐसे धर्मांध होते हैं जो कुरआन के प्रत्येक शब्द पर अक्षरशः विश्वास करते हैं, यद्यपि ये लोग इस्लाम के प्रसार के लिये आवश्यक कार्रवाइयों में सामने आकर भाग नहीं लेते हैं। इसका सामान्य उदाहरण लिंडा सरसोर और हिज़्ब उत-तहरीर हैं। यदि अवसर मिले तो ऐसे लोग एक झटके में ग़ैर-मुस्लिम जगत पर क़ब्ज़ा कर लें। ये लोग आईएसआईएस व तालिबान के प्रति सहानुभूति रखते हैं।

भोले-भाले: ये ऐसे मुसलमान होते हैं दैनिक जीवन जिनका सामना हम

सबसे होता है और मुस्लिम जनसंख्या में इनकी ही संख्या अधिक होती है। ये मुसलमान सर्वाधिक भ्रम में होते हैं। ये लोग इस्लाम की कुछ मूल बातों को जानते हैं और अधिकांशत: उन बातों को जानते हैं जो अच्छी दिखती हैं, किंतु ये लोग हदीस व कुरआन की बुरी बातों से कम परिचित होते हैं। उन्हें इस्लाम की मूल आचार संहिता पता होती है, जैसे कि मदिरापान न करना या सुअर का मांस न ख़ाना, किंतु ये लोग मुहम्मद द्वारा अपने विरोधियों का सिर काट लेने और उसकी अति कामुकता से अपरिचित होते हैं। ये मुसलमान मूलत: ऐसे सांस्कृतिक मुसलमान होते हैं जो केवल इसलिये मुसलमान हैं, क्योंकि उनका जन्म मुसलमान परिवार में हुआ है। ये मुसलमान मज़हबी परिचर्चा में भी सम्मिलित नहीं होते हैं, क्योंकि जब तक ये लोग सीधे प्रभावित न हों, इस्लाम की बर्बर शिक्षाओं पर तनिक भी ध्यान नहीं देते हैं। ऐसे लोगों के सामान्य उदाहरण वो मुसलमान हैं जो कभी-कभार बाहर भी जाते हैं और पार्टी करते हैं, यद्यपि ये लोग यह मानते हैं कि अल्लाह की दृष्टि में समलिंगी पापी होते हैं।

धर्मनिरपेक्ष: हां, इस्लामी दुनिया में भी धर्मनिरपेक्ष लोग हैं। ये मुसलमान सुशिक्षित होते हैं और कुरआन की गड़बड़ियों और मुहम्मद के जीवन की बुराइयों से भली-भांति परिचित होते हैं, यद्यपि ये या तो इस इच्छा से मुसलमान बने रहते हैं कि भीतर रहकर परिवर्तन लायेंगे या फिर अपनी सुरक्षा को ध्यान में रखकर। जो भी हो, ऐसे मुसलमान संख्या में बहुत, बहुत ही कम हैं और इन्हें अपने पश्चिमी समकक्षों से अधिकाधिक समर्थन की आवश्यकता होती है। ऐसे मुसलमानों के कुछ उदाहरण माजिद नवाज़, परवेज़ हूडभॉय और स्वर्गीय अस्मा जहांगीर हैं।

अधिकांश मानव समाजों में कुछ लोग दायीं ओर और कुछ लोग बायीं ओर होते हैं, जबकि बहुसंख्यक जनता मध्य में रहती है। मुस्लिम दुनिया की सबसे बड़ी समस्याओं में एक यह है कि धर्मांध और उदारवादी के बीच भयानक विषमता है। धर्मांध संख्या में न केवल अधिक हैं, अपितु वे हिंसक भी हैं। जबकि उदारवादियों की संख्या कम भी है और ये लोग सामान्यत: नख-दंतहीन बुद्धिजीवी होते हैं।

आइये कुछ आंकड़ों को देखें जो स्पष्ट रूप से इस्लामी दुनिया में इस्लाम की अज्ञानता को दर्शाते हैं। प्यू रिसर्च सेंटर (2013 में किये गये सर्वे) के अनुसार पाकिस्तान की 84 प्रतिशत जनता मानती है कि शरिया देश का क़ानून होना चाहिये। वैसे पाकिस्तान में इस्लामी पार्टियां संसद की 5- 7 प्रतिशत से अधिक

सीटें नहीं जीत पाती हैं। ऐसा मुख्यत: इसलिये है, क्योंकि जो पाकिस्तानी शरिया क़ानून क्रियान्वित कराना चाहते हैं, आदर्श लोक को लेकर उनकी अपनी कल्पना होती है। ये लोग जब इस्लामी पार्टियों को शरिया क़ानून की व्याख्या करते देखते हैं तो भाग खड़े होते हैं और उनके पक्ष में वोट नहीं करते हैं। अब आइये 2013 और 2015 में द्वारा किये गये प्यू पोल के आंकड़ों को देखें। 2013 का सर्वे शरिया के पक्ष विरोध को दिखाता है और 2015 में हुआ सर्वे आईएसआईएस के प्रति पक्ष विरोध को दिखाती हैं। इन पोल के अनुसार 84 प्रतिशत पाकिस्तानी शरिया क़ानून चाहते हैं, फिर भी वे शरिया लागू करने वालों को संसद में केवल 5 से 7 प्रतिशत सीटें जिताते हैं। इसके अतिरिक्त केवल 9 प्रतिशत पाकिस्तानी आईएसआईएस का समर्थन करते हैं। यही पोल दिखाते हैं कि इंडोशिया के 72 प्रतिशत लोग शरिया क़ानून चाहते हैं, यद्यपि वहां केवल 11 प्रतिशत आईएसआईएस का समर्थन करते हैं। शरिया और आईएसआईएस के बीच यह विरोधाभास कहीं न कहीं अनेक मुस्लिम समाजों में कम या अधिक एक जैसा है।

2015 के प्यू पोल के अनुसार 28 प्रतिशत पाकिस्तानियों का मत आईएसआईएस के प्रति नकारात्मक था, 9 प्रतिशत लोगों का मत इसको लेकर सकारात्मक था, जबकि 62 प्रतिशत लोगों ने कहा कि उन्हें पता नहीं है कि आईएसआईएस सच्चे इस्लाम का प्रतिबिंब है या नहीं। चूंकि पाकिस्तान आईएसआईएस से बहुत कम प्रभावित है तो इसलिए वहां की बहुसंख्यक जनता उनको लेकर चिंतित नहीं है। पाकिस्तान के लोग तालिबान को लेकर अधिक चिंतित हैं। तालिबान आईएसआईएस से थोड़ा कम चरमपंथी संगठन है। विभिन्न प्यू सर्वे 77 के अनुसार 72 प्रतिशत पाकिस्तानियों का दृष्टिकोण तालिबान के प्रति नकारात्मक है और केवल 6 प्रतिशत पाकिस्तानी ही उसका पक्ष लेते हैं। ये 72 प्रतिशत पाकिस्तानी निश्चित रूप से नहीं चाहते कि तालिबान उनके देश पर शासन करे। वैसे वे इस बात से अनभिज्ञ हैं कि तालिबान व शरिया क़ानून के बीच सीधा संबंध है (यह स्थिति तब है जबकि 84 प्रतिशत पाकिस्तानी कहते हैं कि वे शरिया का समर्थन करते हैं)। सच तो यह है कि तालिबान मुहम्मद के इस्लाम की तुलना में कम हिंसक है, क्योंकि वे दूसरों के साथ यौनाचार करने वालों को सदैव पत्थर मार-मार कर हत्या नहीं करते हैं, इसके स्थान पर वे उनके सिर में गोली मारते हैं। मुहम्मद के विपरीत तालिबान दास या यौन-दासी नहीं रखते हैं, फिर भी

पाकिस्तानी तालिबान को बुराई के रूप में देखते हैं, पर विडम्बना यह है कि इन्हीं पाकिस्तानियों का मानना है कि मुहम्मद उनके लिये आज भी धरती पर आये हुए सभी मनुष्यों में महानतम है। आईएसआईएस ठीक वही कर रहा है जो मुहम्मद 1400 वर्ष पूर्व कर रहा था, वे पड़ोस के नगरों पर हमले करते हैं और सीधे-सीधे सच्चा इस्लामिक स्टेट बनाने के लिये निरंतर संघर्षरत रहते हैं। वे अपने विरोधियों का सिर काट लेते हैं, दूसरों के साथ यौन संबंध बनाने वालों एवं समलिंगियों की हत्या कर देते हैं आदि। यदि आप अपने देश में शरिया चाहते हैं तो आपको आईएसआईएस जैसी सरकार बनानी होगी। ऊपर दिये गये सभी उदाहरण दिखाते हैं कि अधिकांश मुसलमान या तो इस्लाम से अनभिज्ञ हैं अथवा सही अर्थों में शरिया क़ानूनों का चित्र समझ पाने में अक्षम हैं। यही कारण है कि इन मुसलमानों का अधिकांश प्रतिशत शरिया क़ानून चाहता है, किंतु जब ऐसी सरकार चुनने की बात आती है जो शरिया को लागू कर सके तो वे भाग खड़े होते हैं। ये उदाहरण इस बात के भी साक्ष्य हैं कि किस प्रकार अधिकांश मुसलमान भोले-भाले हैं। इन मुसलमानों को बताया गया है कि शरिया उत्तम है और वे भोलेपन में इसमें विश्वास भी कर लेते हैं, पर जब उन्हें शरिया का सही रूप दिखाया जाता है तो वे इसे नहीं चाहते हैं। यद्यपि इस्लामोफ़ोबिया एक फर्जी शब्दावली है, मुस्लिमफ़ोबिया वास्तविक तथ्य हो सकता है। हो सकता है कि मेरे साथी पूर्व-मुस्लिम मेरी यह बात सुनकर क्षुब्ध हों, किंतु यदि आप ध्यान से देखेंगे तो पायेंगे कि मेरे इस कथन में तर्क है। जैसा कि ऊपर के दो उदाहरणों में देखा गया है तो हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि मुसलमान अपनी ही विचारधारा का पालन नहीं करते हैं और इससे वे बुरे मुसलमान तो हो जाते हैं, पर ऐसा करने से वे अच्छे मनुष्य भी हो जाते हैं। आप तार्किक रूप से इस्लाम से तो भयभीत हो सकते हैं, पर आपको सभी मुसलमानों से भयभीत नहीं होना चाहिये।

इस्लाम वह विचारधारा है जो हमें मुहम्मद द्वारा दी गयी है, अतः यह सुगमता से या तो स्वीकार किया जा सकता है या अस्वीकार किया जा सकता है। मुसलमान लोगों का वो समूह होता है जो इस्लाम के भिन्न-भिन्न संस्करणों में विश्वास करता है और स्वभाव से जटिल होता है। हम लोगों के किसी समूह का सामान्यीकरण नहीं कर सकते हैं। जिहादियों व इस्लामवादियों से भयभीत होना पूर्णतः तार्किक है, किंतु हम भोले-भाले मुसलमानों को भी इसी दृष्टि से कैसे देख

सकते हैं? ये भोले-भाले मुसलमान संगीत, साहित्य, कला, खेल और मानव समाज के अन्य भागों में योगदान देते हैं तो हम उनसे भयभीत कैसे हो सकते हैं? मेरा विचार है कि जो इस्लाम को उसके वास्तविक स्वरूप में ग्रहण करते हैं उन पर सूक्ष्म दृष्टि रखी जानी चाहिये और पश्चिमी लोकतंत्रों को अपने देशों में ऐसे लोगों को आने की अनुमति नहीं देनी चाहिये। साथ ही सभी मुसलमानों के लिये आव्रजन पर रोक नहीं लगायी जानी चाहिये। इस दावे का समर्थन करने के लिये मेरे निकटवर्ती मित्र व परिजन सबसे अच्छा उदाहरण है। मेरी बहन निश्चिंत मुसलमान की श्रेणी में आती है जो आस्ट्रेलिया चली गयी है। वह आस्ट्रेलिया के समुदाय के लिये मूल्यवान है, क्योंकि उसके पास नौकरी है, कर चुकाती है और आस्ट्रेलिया के क़ानून का सम्मान करती है। मेरे ऐसे बहुत से मित्र हैं जो सीधे-साधे मुसलमान हैं और वे आस्ट्रेलिया के मूल्यवान अंश हैं। यदि हमने पॉलीन हैन्सन अथवा ट्रम्प की पद्धति को अपनाया होता तो यहां आस्ट्रेलिया में हमारे पास ये सीधे-साधे मुसलमान नहीं होते। फिर ग़ैर-मुस्लिम और विशेषकर पश्चिम के लोगों को मुसलमानों को लेकर चिंतित क्यों होना चाहिये? यूरोप निश्चित रूप से इस समय बड़ी दुविधा में जी रहा है और ऐसा लगता है कि मुस्लिम आव्रजन को लेकर भटक गया है। पश्चिम की समस्या यह है कि उन्हें पता ही नहीं कि रुकना कहां हैं। मेरा मानना है कि यूरोप निश्चित रूप से सीरिया, अफ़ग़ानिस्तान और ईराक़ से आयी प्रवासियों की बाढ़ के कारण जर्मनी और स्वीडन में हो रही समस्याओं से अवगत होगा, किंतु बड़ा प्रश्न यह है कि वे इस समस्या के समाधान के लिये कर रहे? दक्षिणपंथी कहते हैं कि सभी मुस्लिम प्रवासियों के आने पर रोक लगा दी जाये, चाहे वे वैध रूप से आने वाले हों या अवैध रूप से। दूसरी ओर वामपंथी कहते हैं कि हम उनके लिये द्वार बंद नहीं कर सकते जो हमसे सहायता मांगते हैं। सामान्यत: मैं वाम पक्ष के साथ हूं, यद्यपि मैं मुस्लिम प्रवासियों के आने पर होने वाली समस्याओं पर से अपनी आंखें भी नहीं बंद करना चाहता हूं। आप इस तथ्य को अस्वीकार नहीं कर सकते हैं कि मुस्लिम प्रवासियों को अपने यहां स्थान देने में जोखिम है। हां, हमें पता है कि अधिकांश मुसलमान मुहम्मद के सच्चे इस्लाम के अनुयायी नहीं हैं और न ही वे वास्तव में समझते हैं कि शरिया क़ानून क्या है, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि पश्चिमी देशों में प्रवेश करने वाला प्रत्येक मुसलमान सीधा-साधा या भोला-भाला है।

2015 में समुद्र के मार्ग से यूरोप पहुंचने वाले प्रवासियों में 58 प्रतिशत 18 वर्ष की आयु से ऊपर के वयस्क पुरुष थे, 17 प्रतिशत 18 वर्ष की आयु से ऊपर की वयस्क महिलाएं थीं तथा 25 प्रतिशत बच्चे थे। इस बात पर चिंता व्यक्त की जा रही है कि शरणार्थियों के वेश में बड़ी संख्या में इस्लामवादी और जिहादी भी यूरोप में प्रवेश कर गये हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जहां.जहां इन शरणार्थियों को बसाया गया है, वहां अपराध बढ़ गये हैं, मुख्यतः स्वीडन के मालमो तथा जर्मनी में। संघीय आपराधिक पुलिस कार्यालय 118 के अनुसार, 2013 में प्रवासियों (जुवांडरर) ने यौन अपराध की 599 घटनाएं कीं अथवा यूं कहें कि प्रतिदिन औसत रूप से दो आपराधिक घटनाएं कीं। वर्ष 2014 में प्रवासियों ने यौन अपराध की 949 घटनाएं कीं अथवा कहें कि औसत रूप से तीन घटनाएं प्रतिदिन। वर्ष 2015 में प्रवासियों ने यौन अपराध की 1,683 घटनाएं कीं अथवा औसत रूप से पांच घटनाएं प्रतिदिन। 2016 के प्रथम तीन माह में प्रवासियों ने यौन अपराध की 2790 घटनाएं कीं अथवा दस घटनाएं प्रतिदिन। जर्मनी में प्रवासियों द्वारा किये गये यौन अपराध की संख्या आधिकारिक आंकड़ों की तुलना में कम से कम दो या तीन गुना अधिक है। उदाहरण के लिये, आपराधिक पुलिस संघ (बंड ड्यूशर क्रीमिनालबीमटरध्बीडीके) आंद्रे शुल्ज के अनुसार जर्मनी में हुए यौन अपराध के केवल 10 प्रतिशत ही आधिकारिक आंकड़े दिखाये जाते हैं। स्वीडन की अपराध निरोधक परिषद (बीआरए) के अनुसार स्वीडन में 2010 में बलात्कार की 77 प्रतिशत घटनाएं इस्लामिक देशों से आये प्रवासियों द्वारा की गयीं। ये मुसलमान स्वीडन की जनसंख्या का केवल 2 प्रतिशत ही हैं।74 आइये तनिक समझें 77 प्रतिशत यौन अपराध (बलात्कार) मुसलमान समुदाय द्वारा किये गये, जबकि वहां मुसलमानों की जनसंख्या केवल 2 प्रतिशत हैं। स्पष्ट है कि इन दो प्रतिशत लोगों के मन, मस्तिष्क में कुछ तो विकृति है। वैसे इन यौन अपराधों को करने वाले अपराधी इसके पीछे भिन्न-भिन्न कारण गिनाते हैं और मुसलमान प्रवासियों के इस दुर्व्यवहार को उनके मज़हब से जोड़ना निश्चित रूप से उचित नहीं है। पर यह समझ में नहीं आता कि पश्चिम के लोग अपने नागरिकों की सुरक्षा ख़तरे में क्यों डाल रहे हैं? यूरोप के अन्य क्षेत्रों में भी स्थिति अच्छी नहीं है। आइये यूरोपीय कारागारों के बंदियों की जनसांख्यिकी पर दृष्टिपात करते हैं।

पाकिस्तान के एक मुसलमान मुहम्मद आसिफ ने एक जर्मन लड़की पर यौन हमला करने को उचित ठहराते हुए कहा, 'शरणार्थी के रूप में कोई गर्लफ्रेंड पाना कठिन होता है।' 73 स्पष्ट है कि इस लड़के ने अपने यौन अपराध को यह कहते हुए उचित नहीं ठहराया कि मुहम्मद सैक्स-स्लेव रखता था, इसलिये उसके तर्क के पीछे उसका मज़हब नहीं था।

वास्तव में बलात्कार पाकिस्तानी समाज में अत्यंत ग़ैर-इस्लामी समझा जाता है। यह भी सच है कि इन अपराधियों में से बहुतों ने अपने अपराध को मज़हबी आधार पर उचित ठहराते हुए यह कुतर्क दिया कि 'यदि महिला ने ढंग से कपड़े नहीं पहने हैं तो उसके साथ यही होना चाहिये।'

सामान्यत: निम्नलिखित आयत से इस प्रकार के कुतर्क को वैधता दी जाती है:

> हे रसूल, अपनी बीवियों, बेटियों और मोमिनों की औरतों से कह दो कि अपने ऊपर अपनी चादरें डाल लिया करें। ऐसा करना अधिक उत्तम है जिससे कि वे पहचान ली जायें और उनके साथ दुर्व्यवहार न हो। और अल्लाह अति क्षमाशील, दयावान है। (33:59)

यह आयत मूलत: मुसलमान औरतों को यह विश्वास दिलाने का प्रयास कर रही है कि वे स्वयं का ढंक कर रखें जिससे कि उनके ग़ैर-मुसलमान होने का भ्रम न उत्पन्न हो और इस कारण बाद में उनके साथ दुर्व्यवहार न हो। इसकी व्याख्या ऐसे भी की जा सकती है कि आप चाहे मुसलमान हों या नहीं, यदि आप ने स्वयं को ढंककर नहीं रखा है तो आपके साथ दुर्व्यवहार किया जा सकता है। वामपंथी और मुस्लिम पक्षधर इस तथ्य को जैसे चाहें वैसे तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत कर सकते हैं, किंतु मुसलमान शरणार्थियों और पश्चिमी महिलाओं से बलात्कार की इन शरणार्थियों की प्रवृत्ति के बीच संबंध है, इससे मुंह नहीं मोड़ा जा सकता है। कारण पता नहीं क्या है, किंतु वास्तविकता यही है कि आने वाली मुस्लिम जनसंख्या में बलात्कार एक समस्या है। समय आ गया है कि पश्चिमी यूरोप इस समस्या को पहचानना प्रारंभ करे और शरणार्थी का वेश बनाकर आने वाले प्रत्येक मुसलमान आदमी को प्रवेश देना बंद करे। मुसलमानों द्वारा किये जा रहे अपराध बलात्कार तक ही सीमित नहीं हैं। आइये यूरोपीय देशों के कुल बंदियों के आंकड़ों को देखें।

देश	बंदी	प्रतिशत	जनसंख्या प्रतिशत
बेल्जियम	119	35%	5-2%
यूनाइटेड किंगडम	120	14-4%	4-4%
डेनमार्क	121	20%	0-5%
फ़्रांस	122	60%	5-6%

जैसा कि मैंने इस अध्याय के प्रारंभ में उल्लेख किया है कि इस्लामोफ़ोबिया एक फ़र्ज़ी शब्दावली है, पर हमें मुस्लिमफोबिक नहीं होना चाहिये।

अधिकांश मुसलमान धर्मांध उन्मादी नहीं होते हैं और उन्हें अपनी योग्यता के आधार पर पश्चिमी देशों में जाने देना चाहिये। कौशलयुक्त आव्रजन खुला रहना चाहिये। यद्यपि शरणार्थियों को लेने पर ध्यान से निगरानी की जानी चाहिये, क्योंकि हम नहीं जानते कि शरणार्थी के वेश में कितने धर्मांध उन्मादी हैं।

अत: अगली बार जब कोई आपको इस्लामोफ़ोबी कहे तो उसे यह उत्तर देकर चुप करा दीजिये कि, 'इस्लामी विचारधारा समलिंगियों, इस्लाम छोड़ने वालों और महिलाओं के प्रति हिंसा को प्रोत्साहन देती है। यही कारण है कि मैं इस विचारधारा की निंदा करता हूं। इससे मुझे इस्लाम से भय प्रतीत होता है। वैसे मैं मुस्लिमफ़ोबी नहीं हूं और मुझे धर्मांधतामुक्त मुसलमानों के अपने देश में आने से कोई समस्या नहीं है।'

जब मुसलमान पश्चिम की ओर आते हैं तो वे देखते हैं कि यहां समलिंगियों के साथ रहना, महिलाओं को समान अधिकार देना अथवा कुछ धार्मिक स्वतंत्रता देना पूर्णत: सामान्य हैं। यही कारण है हम इनके बीच से भी ऐसे स्वर सुन रहे हैं जो कभी अनसुने रह जाते थे। जब ये लोग (समलिंगी, इस्लाम छोड़ने वाले अथवा औरतें) मुखर होते हैं तो वे खुले रूप से इन पश्चिमी देशों के इस्लामी प्रतिष्ठानों से लड़ाई मोल ले रहे होते हैं। सैम हारिस या डगलस मूरे जैसे कुछ ऐसे लोग जिन्हें हम सोचते थे कि वामपंथ के साथ हैं, वे भी मुसलमानों के बीच के मुखर अल्पसंख्यक मुसलमानों के साथ खड़े हुए और चरम वामपंथियों ने ऐसे लोगों को नकार ही नहीं दिया, वरन् इन पर नस्लवादी या इस्लामोफ़ोबिक होने का आरोप भी लगा दिया। जो कोई भी डगलस मूरे या सैम हारिस को सुनता है, वह स्पष्ट रूप से जान सकता है कि ये लोग नस्लवादी नहीं हैं। ये लोग केवल मुस्लिम जनसंख्या के बारे में सत्यापित आंकड़ों को दिखा रहे हैं, जिससे कि मुसलमानों

के बीच के उन मुखर अल्पसंख्यकों की सहायता व समर्थन कर सकें। पर फिर भी वामपंथी इन दोनों पर निरंतर हमलावर रहते हैं। मैंने इस्लाम छोड़ दिया है और मैं शारीरिक हिंसा के भय से किसी ऐसे उपनगर में नहीं जा सकता जहां मुससलमानों की संख्या अधिक हो। आस्ट्रेलिया के अपने 'ईमाम आफ पीस' ईमाम तौहीदी धर्मांध-उन्मादी इस्लाम के आलोचक हैं और इस्लाम को आधुनिक बनाने का प्रयास कर रहे हैं। ईमाम तौहीदी पर सार्वजनिक रूप से थूका गया और सिडनी के उपनगरीय क्षेत्र में चौनल 7 न्यूज टीम के सामने ही उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया। ऐसा एक ईमाम के साथ हो सकता है जो कि अभी भी मुसलमान है तो क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि सार्वजनिक रूप से इस्लाम छोड़ने की घोषणा करने वाले किसी पूर्व-मुस्लिम के साथ क्या हो सकता है? जब हम इस्लाम की आलोचना करते हैं तो वामपंथी हमारा समर्थन भी नहीं करते और चरम वामपंथी हम पर 'इस्लामोफोबिक' होने या पक्षपाती होने का आरोप भी मढ़ देते हैं। यदि आपके पास एक ऐसा अल्पसंख्यक है जो जानबूझकर अपने भीतर के छोटे अल्पसंख्यक समूह के साथ द्वेष रखता है तो वामदल को किसका पक्ष लेना चाहिये?

बेन अफ़लेक इस अज्ञानता का स्पष्ट उदाहरण है जब सैम हारिस ने होमोफ़ोबिया और मुस्लिम समुदाय में महिलाओं के प्रति द्वेष की सच्चाई की ओर इंगित किया तो इस्लामी दुनिया के समलिंगियों का समर्थन करने के स्थान पर बेन अफ़लेक ने सैम हारिस पर प्रहार किया और उन्हें इस्लामोफ़ोबी कहा। उन्होंने इस तर्क का उत्तर देने का प्रयास तक नहीं किया, बस उन्होंने अपशब्द कहना प्रारंभ कर दिया।

जब ग़ैर-मुस्लिम की बात आती है तो यही वामपंथी समलैंगिकों तथा धार्मिक उत्पीड़न व नस्लवाद आदि से मुक्ति मांग रहे लोगों के पक्ष में खड़े होते हैं, किंतु जैसे ही इस प्रकार के स्वर मुस्लिम समुदाय के बीच से आते हैं वे किनारे हट जाते हैं।

वामपंथ ने स्पष्ट रूप से अपनी दिशा खो दी है। अल्पसंख्यकों पर इन वामपंथियों की विरोधाभासी स्थिति के कारण माजिद नवाज़ इन्हें 'पश्चगामी वामपंथी' कहते हैं। वामपंथियों की इस विफलता का सबसे बुरा प्रभाव यह है कि पश्चिम में दक्षिणपंथी राजनीति का उभार हो रहा है। दस वर्ष पूर्व कोई भी यह

भविष्यवाणी नहीं कर सकता था कि अमरीकी लोग डोनॉल्ड ट्रम्प जैसे राष्ट्रपति का समर्थन करेंगे। ट्रम्प झूठ बोलते हुए, युद्ध वरिष्ठों व अल्पसंख्यकों का अपमान करते हुए और नारी-विद्वेषी टिप्पणियां करते हुए पकड़े गये हैं, किंतु लोग वामपंथियों की इस 'चाटुकारिता' वाली राजनीति से ऊब चुके हैं और उन्होंने डोनाल्ड ट्रम्प जैसे व्यक्ति को राष्ट्रपति बना दिया। ट्रम्प दक्षिणपंथी राजनीति के उभार के एकमात्र उदाहरण नहीं हैं। आस्ट्रेलिया में पॉलीन हैन्सन, हॉलैंड में ग्रीट वाइल्डर्स, जर्मनी में अल्टरनेट फॉर जर्मनी (यह पार्टी केवल 5 वर्ष पुरानी है), स्वीडन में स्वीडन डेमोक्रेट्स आदि भी ऐसे ही उदाहरण हैं। फ़्रांस, जर्मनी और स्वीडन वो देश हैं जो बढ़ती मुस्लिम जनसंख्या से सर्वाधिक प्रभावित हैं। इस कारण इन देशों के मतदाताओं का अचानक मानस परिवर्तन हुआ है। मुझे आश्चर्य होता है कि फ़्रांस इस आसन्न ख़तरे पर जाग क्यों नहीं रहा है। ब्रिटेन भी ब्रिटेन फ़र्स्ट जैसे दक्षिणपंथी राष्ट्रवादी दलों के उभार को देख रहा है और यदि जो स्थिति है वह बनी रही तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा कि मैं आने वाले वर्षों में इन दलों की बड़ी राजनीतिक शक्ति के रूप में देखूंगा। निश्चित रूप से मैं ऊपर-उल्लिखित राजनीतिक दलों या उनके नेताओं का समर्थक नहीं हूं, किंतु दक्षिणपंथ के उभार को रोकने के लिये एकमात्र उपाय यही है कि वामदल जगें।

vè;k; 9

मुस्लिम पक्षधरों से तर्क कैसे करें

किसी मुसलमान के साथ तर्क करते समय आप पायेंगे कि वे अपने मज़हब का बचाव तीन प्रकार के दावों से करते हैं:

1. दावे जिनका कोई आधार नहीं होता (जैसे चमत्कार)।
2. दावे जिनमें थोड़ा तर्क तो होता है, किंतु आप इस पर विमर्श कर सकते हैं कि ये अच्छे तर्क हैं या नहीं (जैसे चोरों का हाथ काटना, हत्यारों का सिर काटना आदि)।
3. दावे जो तार्किक प्रतीत हो सकते हैं, यद्यपि ये दावे सत्यापित किये जाने योग्य नहीं होते, ये दावे संभवत: सत्य नहीं होते हैं, जैसे कि 'अल्लाह के होने का दावा'।

1. ऐसे दावे जिनमें कोई तर्क नहीं होता

यह मज़हबी पक्षधरों द्वारा बचाव के लिये प्रयोग किया जाने वाला सबसे दुर्बल तर्क होता है और इस्लाम छोड़ने वाला कोई भी व्यक्ति बहुत सरलता से ऐसे दुर्बल तर्क की धज्जियां उड़ा सकता है। मुस्लिम पक्षधरों के लिये इसका बचाव करना कठिन होता है। सभी मज़हबों में किसी न किसी प्रकार के चमत्कार की कहानियां होती हैं, जैसे कि मुहम्मद का पंख लगे घोड़े पर उड़ना या ईसा का मरने के बाद पुन: जी उठना। हम जानते हैं कि भौतिकी के नियमों के कारण ये तथाकथित चमत्कार संभव नहीं हैं। हम जानते हैं कि घोड़े उड़ते नहीं हैं और अपनी शारीरिक संरचना के कारण उड़ भी नहीं सकते हैं। हम जानते हैं कि जब आपकी मृत्यु हो जाये तो आप पुन: जीवित नहीं हो सकते। इस्लाम छोड़ने वाले व्यक्ति अर्थात नास्तिक के रूप में आपके पास किसी अतार्किक मज़हबी व्यक्ति के विरुद्ध यह सबसे बड़ा अस्त्र होता है। अधिकांश मनुष्यों में तार्किक होने की प्रवृत्ति होती है, किंतु वे इसे दबाने का कोई न कोई उपाय ढूंढ़ लेते हैं। उदाहरण के लिये, जब किसी मज़हबी के पास नमक समाप्त हो जाता है तो वह यह अपेक्षा नहीं करता

कि उसके सामने नमक चामत्कारिक रूप से हवा में से प्रकट हो जाये जिससे कि वह भोजन तैयार कर सकें, पर जब बात इसकी आती है कि मुहम्मद पंख लगे घोड़े पर उड़ा था तो वह अपनी 'तर्कशीलता के स्विच' को बंद कर देता है। जब उनकी इस दोहरी प्रवृत्ति पर प्रश्न किया जाता है या इस ओर इंगित किया जाता है तो वे या तो अत्यंत व्याकुल दिखने लगते हैं अथवा इस विषय को ही टाल जाते हैं। जो भी हो, आप जिस व्यक्ति के साथ तर्क कर रहे हैं उसे परिवर्तित नहीं कर सकते, किंतु हो सकता है कि जो आपके तर्कों को सुन रहा है वह इन अतार्किक दावों के झूठ पर चिंतन करना प्रारंभ कर दे।

एक बार आपने मिथकों, मज़हब की अतार्किक कहानियों पर अविश्वास करना प्रारंभ कर दिया तो संभव है कि तार्किकता और नास्तिकता की ओर आपकी प्रवृत्ति बढ़ने लगे।

2. ऐसे दावे जिनमें थोड़ा-बहुत तर्क होता है

मज़हबी पक्षधर कभी-कभी अपने तर्क-वितर्क में तर्कों का भी प्रयोग करते हैं, पर हम इन तर्कों को भी काट सकते हैं। यद्यपि ऐसा करना तनिक कठिन होता है। ऐसे तर्कों की काट इस पर निर्भर करता है कि आपको विषय का कितना ज्ञान है। उदाहरण के लिये चोरों का बलात् अंगभंग करने को उचित ठहराना मुसलमानों को अत्यंत प्रिय होता है, क्योंकि इस दंड में चोरी की घटनाओं को कम करने की संभावना होती है। वैसे भी हम सभी चाहते हैं कि हमारे समाज में चोरी की घटनाएं कम हों, है न? अथवा वे दूसरों संग यौन संबंध बनाने वालों की हत्या पत्थर मार-मार कर किये जाने को उचित ठहराते हैं, क्योंकि इससे युगल कुफ़्र से बचते हैं। वैसे भी हम सभी चाहते हैं कि हमारा यौनसाथी केवल हमारा ही हो, है न?

मुस्लिम पक्षधरों के साथ तर्क-वितर्क करते समय चाहे जितना निराश करने वाली स्थिति हो, पर जब उत्तर देने के लिये आप उन्हीं तकनीकों को अपना लेते हैं जिसका प्रयोग मुसलमान पक्षधर करते हैं तो स्थिति सरल हो जाती है। ऐसी तकनीकें नीचे उदाहरण सहित विस्तार से दी गयी हैं।

यूएमई तकनीक

जब हम मुसलमान पक्षधर के साथ हिंसा, महिला के प्रति विद्वेष अथवा समलिंगियों के साथ व्यवहार आदि विषयों पर विमर्श कर रहे हों तो मुसलमान जिस साधारण तकनीक का प्रयोग करते हैं उसे मैं 'यूएमई तकनीक' कहता हूं। 'यूएमई'

तकनीक वह है जिसमें मुसलमान ऐसा दिखाने का प्रयास करता है कि सामने वाला अशिक्षित या भ्रमित है और जब उनकी ये चाल भी विफल हो जाती है तो वे टालमटोल करने लगते हैं।

मुसलमान जिस मूल तकनीक का प्रयोग करते हैं, उसको समझकर आपको यह सोचना होगा कि उनके तर्कों का उत्तर कैसे दिया जाये और इससे आपको मुस्लिम पक्षधर के साथ तर्क-वितर्क में जीत मिल सकती है। मुस्लिम पक्षधर से तर्क-वितर्क करते समय आपको सर्वाधिक अचंभे में डालने वाली जो बात पता चलेगी, वह यह है कि उनके तर्क सदियों पुराने हैं और सदियों से उनके तर्कों को खोखला सिद्ध भी किया जाता रहा है। जब आप तनिक विस्तार से देखेंगे तो पायेंगे कि उनके तर्क अत्यंत दोहराव वाले, त्रुटिपूर्ण और मनमाने हैं। मुस्लिम पक्षधर से तर्क करते समय आप उनके द्वारा प्रयोग की जाने वाली निम्न तकनीकों को देखेंगे:

1. वे आप पर आरोप लगायेंगे कि आपको विषय की जानकारी नहीं है। अर्थात आपने कुरआन नहीं पढ़ी है।
2. वे आपसे बार-बार कहेंगे कि आपने संदर्भ ग़लत समझा है अथवा आप संदर्भ से हटकर बात कर रहे हैं।
3. जब उनके दोनों दावे विफल हो जायेंगे तो वे फिर तुरंत परिचर्चा से भागने लगेंगे और प्रयास करेंगे कि आप मूल बिंदु से भटक जायें तथा वे आपको भटकाने के लिये कुछ दूसरा विषय छेड़ देंगे।

यह ध्यान देने वाली बात है कि जब आप ठोस तर्क देकर उनको निरुत्तर कर देते हैं तो उनका विश्वास डगमगाने लगता है। फिर वे बार-बार इस तीसरे चरण का प्रयोग करते हैं। तीसरे चरण में उनसे जीतने का एकमात्र उपाय यह है कि आप उनके द्वारा प्रस्तुत विचार में विरोधाभास को सिद्ध कर दीजिये। शीघ्र ही मैं उनके द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले मत को बताऊंगा।

आइये इन बिंदुओं को चरणबद्ध ढंग से लेते हैं और हिंसा पर एक आयत को देखते हैं। यदि आप दावा करते हैं कि कुरआन हिंसा का समर्थन करता है तो तुरंत आप पर आरोप मढ़ दिया जायेगा कि आपने कुरआन नहीं पढ़ी है अर्थात आप इस विषय पर अज्ञानी हैं। अगले चरण में केवल यह कहने के स्थान पर कि 'मैंने कुरआन पढ़ी है और इसकी अच्छी जानकारी रखता हूं, आपको अपनी बात सिद्ध करने के लिये कुछ उदाहरण भी देने होंगे। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि नीचे

दी गयी आयत इस्लाम द्वारा हिंसा के समर्थन का सर्वोत्तम उदाहरण है:

> उनसे जंग करो जो अल्लाह या क़यामत के दिन पर विश्वास नहीं करते हैं और जो उसे हराम (वर्जित) नहीं मानते हैं जिसे अल्लाह और उसके रसूल ने हराम बनाया है तथा जिन्हें ग्रंथ (बाइबिल, तोरा आदि) दी गयी थीं उनमें से जो लोग सत्य के मज़हब (इस्लाम) को स्वीकार नहीं करते हैं उनसे-जंग करो, जब तक कि वे अपनी इच्छा से जज़िया न देने लगें, जब तक कि वे अपमानित न हो जायें। (9:29)

जैसे ही आप यह हिंसक आयत का उदाहरण देंगे, आपसे कहा जायेगा कि आपने कुरआन को ग़लत ढंग से समझा है और आपसे संभवत: यह भी कहा जायेगा कि अधिकांश आयतें विशेष स्थितियों में आयी थीं, जैसे कि जब ग़ैर-मुस्लिमों ने मुसलमानों को जंग के लिये उकसाया अथवा ग़ैर-मुसलमानों पर हमला करना नितांत आवश्यक था।

इब्न क़सीर के तफ़्सीर के अनुसार जब मुसलमानों ने मूर्तिपूजकों को पराजित कर दिया तो उसके बाद फिर 'बाइबिल, तोरा, इंजील मानने वाले लोगों' से जंग करने के लिये अल्लाह का आदेश आया। यह हमला करने का सीधा निर्देश था और इसमें बचाव जैसी कोई बात सम्मिलित नहीं थी। इस व्याख्या का अवलोकन कीजिये:

> उनसे जंग करो जो अल्लाह या क़यामत के दिन पर विश्वास नहीं करते हैं और जो उसे हराम (वर्जित) मानते हैं जिसे अल्लाह और उसके रसूल ने हराम बनाया है तथा जिन्हें वो पुस्तकें (बाइबिल, तोरा, इंजील) दी गयी थीं, अर्थात 'ईसाई, यहूदी व अन्य प्राचीन धर्मों के उपासकों' में से जो लोग सत्य के मज़हब (इस्लाम) को स्वीकार नहीं करते हैं। यह प्रतिष्ठित आयत 'ईसाई, यहूदी व अन्य प्राचीन धर्मों के उपासकों' से जंग करने के आदेश के साथ तब आयी जब मूर्तिपूजकों पराजित हो गये थे और बड़ी संख्या में लोग अल्लाह के मज़हब में आये तथा अरब प्रायद्वीप मुस्लिम शासन के अधीन आ गया था। अल्लाह ने हिजरा के नौवें वर्ष अपने रसूल को 'ग्रंथों के लोगों' अर्थात ईसाइयों व यहूदियों पर

हमला करने का आदेश दिया और उसके रसूल मुहम्मद ने रोमनों से जंग करने के लिये फ़ौज तैयार की तथा अपनी मंशा व गंतव्य स्पष्ट करते हुए लोगों को जिहाद के लिये बुलाया। रसूल ने फ़ौज एकत्र करने के लिये अल-मदीना के आसपास अरब के विभिन्न क्षेत्रों को अपनी मंशा से अवगत कराया तथा तीस हज़ार की फ़ौज तैयार की। अल-मदीना के कुछ लोग और मदीना के भीतर व बाहर के कुछ असंतुष्ट पीछे रह गये, क्योंकि उस वर्ष भयानक सूखा व गर्मी पड़ रही थी। रोमनों से जंग करने के लिये अल्लाह का रसूल फ़ौज के साथ आगे बढ़ा, अश-शाम की ओर बढ़ते हुए तब रुका जब तबूक पहुंच गया। वहां जलस्रोतों के निकट उसने लगभग बीस दिनों के लिये पड़ाव डाला। फिर उसने निर्णय के लिये अल्लाह से प्रार्थना की और अल-मदीना वापस लौट गया, क्योंकि यह वर्ष अत्यंत कष्टकारी था और लोग अति दुर्बल हो गये थे, जैसा कि हम उल्लेख करेंगे, अल्लाह की इच्छा।[79]

जब आप यह सिद्ध कर देते हैं कि आपने कुरआन पढ़ी है और संदर्भ को समझने में आपको कोई भ्रम नहीं है तो फिर मुसलमान द्वारा आपको किसी अन्य विरोधाभासी आयत का उल्लेख कर भटकाने का प्रयास किया जायेगा अथवा अन्य कोई ऐसा बिंदु उठाकर आपको मूल बिंदु से भटकाने का प्रयास किया जायेगा जो उन्हें लगता होगा कि आपके मूल बिंदु को नकार देगा। उदाहरण के लिये, आपको यह आयत दिखायी जायेगी:

दीन (को स्वीकारने) में कोई दबाव नहीं। (2:256)

इस प्रकरण में मुसलमान वास्तव में मूल बिंदु से आपका ध्यान भटकाना चाहते हैं। यहां तक कि हम भी जब इस आयत को पृथक करके पढ़ते हैं और इसके पीछे की व्याख्या पर ध्यान नहीं देते हैं तो इसका दो अर्थ निकलता है:

इस्लाम स्वीकार करने के लिये ग़ैर-मुसलमानों पर बलप्रयोग या दबाव मत डालो।

लोगों को उसमें विश्वास करने दो जिसमें वह विश्वास करना चाहते हैं।

हां, यह ग़ैर-मुसलमानों पर धर्म-परिवर्तन के लिये बल प्रयोग को नहीं कहता है, किंतु इसमें यह भी स्पष्ट नहीं होता है कि ग़ैर-मुस्लिमों से जंग लड़ना चाहिये या

नहीं। आप यह अर्थ निकाल सकते हैं कि लोग जिस धर्म को मानना चाहें, उसे मानने के लिये स्वतंत्र हैं। पर जब आप ग़ैर-मुस्लिमों पर नियंत्रण कर लेंगे तभी तो आपके पास उनको इस्लाम में धर्मांतरित करने या उनको अपना धर्म मानने की स्वतंत्रता देने की ताक़त होगी। आप ग़ैर-मुस्लिमों की भूमि पर जीतें और उनको इस्लाम में धर्मांतरित होने के लिये बाध्य न करें। इसे शांति फैलाने वाली आयत मानना कठिन है। आप इस आयत का कुछ भी अर्थ निकालें, पर एक बात स्पष्ट है कि यह आयत नहीं बताती है कि आप लोगों को इच्छानुसार अपने धर्म को मानने देने या न मानने देने का निर्णय कैसे करेंगे। स्पष्ट है कि आपके पास यह विकल्प तभी होगा जब आप उन पर शासन करने की स्थिति में हों। अत: यह आयत उस मूल हिंसक आयत का विरोधाभासी नहीं है जिसका हमने उल्लेख किया है। यह आयत लोगों को जानबूझकर दिग्भ्रमित करने का थोथा प्रयास कही जायेगी। यदि हम इस आयत को वैसा ही स्वीकार करें जैसा कि मुसलमान चाहते हैं अर्थात ग़ैर-मुस्लिमों को अकेला छोड़ दो, तो फिर यह स्पष्टत: पहली आयत की विरोधाभासी है।

मेरे विचार से इस आयत का एकमात्र अर्थ यह निकाला जा सकता है कि जीतने के बाद ग़ैर-मुस्लिमों को बलपूर्वक धर्मांतरित न करो (जब तक कि वे ग़ैर-मुस्लिम कर अर्थात जज़िया दे रहे हैं)। जब भी आप मुसलमानों से 'इस्लाम में हिंसा' पर बात कर रहे हों तो यह आवश्यक है कि आप मक्का और मदीना के अध्यायों के बीच अंतर को बतायें। जैसा कि पहले व्याख्या की गयी है कि मक्का के अध्याय केवल धैर्य व अशारीरिक हमले को प्रोत्साहित करते हैं, किंतु जब आप मदीना के आयतों पर जायेंगे तो उनमें लड़ाका मानसिकता स्पष्ट दिखेगी। जैसा कि पहले आयतों के निरसन (हटाने) के प्रकरण में बताया गया है कि मदीना की आयतें बाद में आयीं, इसलिये हिंसक मदीना आयतों ने कम हिंसक मक्का की आयतों को पीछे छोड़ दिया।

अब जबकि हमने हिंसा की बात उठायी है तो आइये महिला के प्रति विद्वेष की भी बात करें, क्योंकि जब कुरआन द्वारा महिलाओं को हेय बनाने की बात आती है तो यह प्रत्यक्ष दिखता है। जैसे ही आप कहना प्रारंभ करते हैं कि इस्लाम महिलाओं के प्रति विद्वेष को प्रोत्साहित करता है तो यह आरोप मढ़ दिया जायेगा कि आपको इस्लाम के बारे में जानकारी नहीं है और आपने कुरआन नहीं पढ़ी है। तब आप इस आयत का उद्धरण दे सकते हैं:

मर्द का औरतों पर नियंत्रण है, क्योंकि अल्लाह ने आदमी को औरतों पर प्रधानता दी है और मर्दों ने अपने धन में से (उनके भरण-पोषण के लिये) व्यय किया है। अत: सदाचारी औरतें वो होती हैं, जो समर्पण भाव से आज्ञाकारी तथा उनकी (शौहरों की) अनुपस्थिति उसके माल व अधिकार की रक्षा करती हैं, जिस प्रकार उनके पीठ पीछे अल्लाह ने रक्षा की। फिर वो (बीवियां, तुम्हें जिनकी अवज्ञा का संदेह हो- तो (पहले, उन्हें समझाओ (उस पर वो न मानें तो) तुम उनके साथ सोना छोड़ दो और अंतत: उनकी पिटाई करो। यदि वे (फिर से, तुम्हारी बात मानने लगें, तो उन पर अत्याचार का बहाना न ढूंढ़ो। वास्तव में अल्लाह सबसे ऊपर, सबसे महान है। (4:34)

किसी मुस्लिम पक्षधर से तर्क-वितर्क करते समय यह आयत किसी ग़ैर-मुस्लिम का सबसे बड़ा अस्त्र होता है। यह आयत स्पष्ट रूप से मुसलमान आदमियों को अपनी बीवियों को पीटने को कहती है, भले ही 'अंतिम उपाय' के रूप में, पर यदि वे उनकी बात न मानें तो उनकी पिटाई करने को कहती तो है। जब आप यह आयत बतायेंगे तो आपसे कहा जायेगा कि आपने प्रसंग को ग़लत समझा है। इस पर आप यह उत्तर दे सकते हैं कि ऐसी कोई परिस्थिति नहीं हो सकती है जिसमें कि किसी औरत को पीटा जाये। इससे मुसलमान तनिक हिलेंगे, क्योंकि वे असहज अनुभव कर रहे होंगे। तब वे आपसे ऐसे प्रश्न पूछेंगे:

- 'यदि आप पाते हैं कि आपकी बीवी का किसी अन्य के साथ संबंध है, फिर क्या?'
- 'यदि आप पाते हैं कि आपकी बहन शादी से बाहर किसी के साथ सो रही है तो फिर?'

यद्यपि पश्चिमी देशों में मुसलमान ऐसे प्रश्न पूछने में असहज अनुभव करेंगे, पर मुस्लिम देशों में रहने वाला मुस्लिम विद्वान आपसे इस प्रकार के प्रश्न पूछ सकता है। मैं आश्वस्त हूं कि आप वैसा ही उत्तर देंगे जैसा कि आपने प्रसंग वाले दावे में दिया था, अर्थात आपको तर्क देना चाहिये कि 'किसी भी परिस्थिति में औरत को पीटा

नहीं जाना चाहिये!' इसके अतिरिक्त, आपको उनसे कहना चाहिये कि अल्लाह ने पहले ही बताया है कि व्यभिचार पकड़े जाने पर क्या करें अर्थात (यदि वे विवाहित हों) पत्थरों से मार-मार कर उनकी हत्या कर दें और (यदि वे अविवाहित हों) तो उन्हें कोड़े लगाएं, जिसका अर्थ हुआ कि अल्लाह स्वयं अवज्ञा जैसी इतनी छोटी सी बात के लिये हिंसा (पिटाई) करने का आदेश दे रहा है।

आपको लगेगा कि जैसे ही आप यह तर्क देंगे, मुसलमान निरुत्तर होकर चुप हो जायेगा, पर ऐसा नहीं है, क्योंकि मुसलमान इस्लाम के बचाव में तीसरे चरण को छोड़ेगा नहीं। वह अभी भी हदीसों को सुनाकर आपको मूल बिंदु से भटकाने का प्रयास करेगा। जैसे कि निम्नलिखित हदीस:

> एक आदमी रसूल के पास गया और बोला, 'हे अल्लाह के रसूल! लोगों में वह कौन है जो मेरा साथ पाने के लिये सबसे योग्य है?' रसूल ने कहा, 'तुम्हारी अम्मी।' उस आदमी ने कहा, 'उसके बाद कौन?' रसूल ने कहा, 'उसके बाद तुम्हारी अम्मी।' उस आदमी ने फिर पूछा, 'फिर उसके बाद कौन?' रसूल बोले, 'उसके बाद तुम्हारी अम्मी।' उस व्यक्ति ने पुनः पूछा, 'फिर उसके बाद कौन?' रसूल ने कहा, 'उसके बाद तुम्हारे अब्बा।' (बुख़ारी, मुस्लिम)

ये सभी हदीसें कहती हैं कि अम्मी की स्थिति (दर्जा) तुम्हारे अब्बा से तीन गुना बड़ी है- पुनः मूल बिंदु को भटकाने का घटिया प्रयास। वे कुछ और हदीसों या आयतों को सुनाकर दावा कर सकते हैं कि इस्लाम में औरतों को विशेष अधिकार दिये गये हैं, जो ईसाई या यहूदी धर्म में नहीं दिये गये हैं। वे कहेंगे, 'यदि इस्लाम मुसलमानों के लिये इतना बुरा है तो फिर हमारे प्रिय रसूल ने औरतों को इतना महत्व कैसे दिया?'

पहली बात तो यह है कि किसी मां को अधिक अधिकार देने का शौहरों द्वारा बीवियों को पीटने के अधिकार से कोई लेना-देना नहीं है। दूसरी बात यह कि भले ही हम यह दावा मान भी लें कि ईसाई या यहूदी धर्म की तुलना में इस्लाम औरतों को अधिक अधिकार देता है तो भी इसका कोई बहुत महत्व नहीं है, क्योंकि निश्चित रूप से हमारा आधुनिक समाज इन मज़हबों की अपेक्षा महिलाओं को अधिक अधिकार देने में समर्थ रहा है। यदि नश्वर मनुष्य ऐसा समाज बना सकता

है, जहां महिलाओं को इस्लाम या ईसाई धर्म से अधिक अधिकार मिले हैं तो फिर सबकुछ रचने वाला अल्लाह यह क्यों नहीं कर सका?

3 . दुराग्रही दावे

अभी तक हमने ऐसे दावों को देखा है जो बिना किसी आधार के हैं अथवा जिनका थोड़ा-बहुत आधार है, पर हमने अभी तक उन दावों की बात नहीं की है जो दुराग्रही होते हैं। दुराग्रही दावे वो होते हैं जिन्हें किसी भी परिस्थिति में असत्य सिद्ध नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिये यदि मैं कहूं कि हम एक उन्नत पारग्रहीय प्राणी के कम्प्यूटर प्रोग्राम में जी रहे हैं और हमारे जन्म से कुछ सेकंड पूर्व इस प्रोग्रामर ने हमारे मस्तिष्क में मेमोरी डाल दी है। इस दावे पर चाहे जितना भी प्रति-तर्क दे दीजिये, पर आप मेरे मूल दावे को कभी भी झूठा सिद्ध करने में सफल नहीं होंगे। निश्चित रूप से मैं ऐसा कहने वाला पहला व्यक्ति नहीं हूं, बहुत सारी ऐसी वीडियो आनलाइन उपलब्ध हैं जहां आप देख सकते हैं कि लोगों ने इसे झूठा सिद्ध करने का कितना प्रयास किया, पर इसे कभी असत्य सिद्ध नहीं किया जा सका।

वहीं दूसरी ओर विज्ञान में उन्हीं सिद्धांतों को ही कोई सम्मान मिलता है जो सत्य सिद्ध की जा सकें- उदाहरण के लिये उद्विकास का सिद्धांत जिसे भूगर्भीय समयचक्र में कहीं यूं ही पड़े हुए जीवाश्म को ढूंढ़कर सरलता से असत्य सिद्ध किया जा सकता है। यदि आप डायनासोर के काल में किसी बंदर का जीवाश्म पा जाते हैं तो आप उद्विकास के सिद्धांत को नष्ट करने में समर्थ होंगे और इससे यह सिद्धांत असत्य सिद्ध हो जायेगा। यद्यपि अभी तक कोई भी व्यक्ति ऐसा कोई जीवाश्म नहीं पा सका है।

चाहे हम डायनासोरों अथवा सरीसृपों (रेंगने वाले जंतुओं) को देखें या स्तनधारियों को, हम प्राणियों में धीमे क्रमिक परिवर्तन को देख सकते हैं और समय के साथ ये परिवर्तन इतने बड़े हो जाते हैं कि हमें नये प्राणी मिलते हैं। यदि हम पाषाण काल अर्थात 3 करोड़ वर्ष पूर्व के किसी चिम्पांज़ी अथवा महावनमानुष जैसा कोई जीवाश्म पा जायें तो उद्विकास का सिद्धांत नष्ट हो जायेगा। किंतु अभी तक हमने प्राणियों का क्रमिक विकास ही देखा है अर्थात हमारे पास बंदर से लंगूर और फिर मानव बनने तक की यात्रा के प्रमाण हैं। अल्लाह का दावा भी ऐसा ही दुराग्रही दावा है, क्योंकि उसे असत्य सिद्ध करने का कोई उपाय नहीं है। दुर्भाग्य से केवल यह कह देना कि ये दुराग्रह है और इसलिये वैध दावा नहीं है, अल्लाह

को मानने वालों को चुप कराने के लिये पर्याप्त नहीं है। आइये अल्लाह के बचाव में मज़हबी लोगों द्वारा प्रयुक्त कुछ तकनीकों को देखें।

जीओएल तकनीक

जब मज़हब के उद्देश्य पर प्रश्न उठाया जाता है तो आपसे कहा जाता है कि यह एक परीक्षा है और अल्लाह का लक्ष्य आपको इसमें सफल देखना है। जब आप इस दावे पर अपने सामान्य तर्कों से प्रश्न उठाते हैं तो आपको भ्रमित करने के लिये निम्न तकनीक अपनाये जाते हैं:

- अल्लाह रहस्यमयी ढंग से कार्य करता है।
- केवल अल्लाह ही इसका उत्तर जानता है।
- आप उत्तर पाने के लिये तर्क नहीं लगा सकते, क्योंकि अल्लाह मनुष्य की समझ से परे है।

यह व्यर्थ की बात है कि जीवन एक परीक्षा है, क्योंकि यह केवल अल्लाह की मनोविकृत प्रकृति को ही दर्शाता है। जब कभी हम इस पर प्रश्न करते हैं तो हमें शिक्षक-विद्यार्थी परीक्षा के परिदृश्य का भयानक चित्र दिखाया जाता है और यह कुछ इस प्रकार का होता है:

> जिस प्रकार शिक्षक आपको वाह्य वास्तविक संसार के लिये तैयार करने के क्रम में परीक्षा लेता है, वैसे ही अल्लाह भी इस संसार में आपकी परीक्षा ले रहा है।

जिससे कि आप दूसरी दुनिया के लिये तैयार हो सकें। अंत में मैंने टोका और कहा कि लोगों के पास स्कूली परीक्षा में सफल होने या असफल होने का विकल्प होता है, पर यदि अल्लाह परीक्षा ले रहा था तो दो वर्षीय उस बच्चे के पास क्या विकल्प था जो निर्धन अफ्रीकी देश में भूख से मर गया? उसे तो जीवन जीने तक का विकल्प नहीं मिला। इसका अर्थ हुआ कि अल्लाह जानबूझकर मनुष्य को धरती पर भेजता है और भूख से बच्चों की मृत्यु या चक्रवात, भूकंप और अन्य प्राकृतिक आपदा में लोगों की मृत्यु आदि कष्ट व पीड़ा देता है और वह यह खेल केवल कुछ ब्रह्माण्डीय गेम शो के लिये करता है।

हम कभी नहीं चाहते कि इस परीक्षा का भाग बनें और अल्लाह के अस्तित्व का कोई प्रमाण भी नहीं है (यदि अल्लाह निरीह मनुष्यों की परीक्षा लेने पर इतना उतारू है तो वह अपने को प्रकट करके इससे अच्छा काम कर सकता था)। अल्लाह जैसे किसी अस्तित्व के होने का दावा विरोधाभासों व तार्किक त्रुटियों से भरा है और

इसकी कोई सार्थकता नहीं दिखती। हमें अल्लाह नामक दावे को फेंक देना चाहिये और आकाश में अपने सिंहासन पर बैठकर प्रति पल हमारा गुण-दोष देख रहे उस काल्पनिक न्यायाधीश के बिना ही श्रेष्ठ जीवन जीना प्रारंभ करना चाहिये।

चक्रीय (गोलमोल) तर्क

जब आप इस्लाम की प्रामाणिकता पर सत्ता-मीमांसक रूप से बात करेंगे तो मुसलमान चक्रीय (गोलमोल) तर्क देने लगेंगे। चक्रीय तर्क में समस्या तब आती है जब किसी तर्क का निष्कर्ष प्रभावी रूप से वही होता है जो कि तर्क का पूर्वपक्ष।

आइये स्वतंत्र इच्छा का तर्क देखें। यह तर्क कुछ इस प्रकार होता है:

> अल्लाह ने तुम्हें सही या ग़लत और अच्छा या बुरा चुनने के लिये स्वतंत्र इच्छा दी है (आशय, यह कि इस प्रकार तुम्हारे पास वह विकल्प है जो तुम करते हो (निष्कर्ष)

इसके समर्थन में वे आपको इस प्रकार की कोई आयत भी देंगे:

> हम उन्हें क्षितिज पर और उनके भीतर अपना चिह्न दिखायेंगे, जब तक कि उनके सामने स्पष्ट न हो जाये यही सत्य है। किंतु क्या तुम्हारे स्वामी के संबंध में यह पर्याप्त नहीं है कि वही प्रत्येक वस्तु का साक्षी (गवाह) है? (41:53)

स्वतंत्र इच्छा के दावे की पोल खोलने के लिये आप इस प्रकार की किसी आयत का उद्धरण दे सकते हैं:

> अल्लाह ने उनके दिलों तथा कानों को बंद कर दिया है और उनकी आंखों पर पर्दे पड़े हैं। तथा उनके लिए बड़ा दंड है। (2:7)

पहली आयत कहती है कि अल्लाह उन्हें (ग़ैर-मुसलमानों) अपने होने का प्रमाण दिखायेगा, जब तक कि वे उसे मानने न लगें।

दूसरी आयत में अल्लाह कह रहा है कि ऐसे लोगों को कितना भी 'प्रमाण' दे दिया जाये, पर ये लोग इस्लाम को नहीं स्वीकार कर पायेंगे, क्योंकि अल्लाह ने इनके कानों को बंद कर और इन्हें अंधा बनाकर इनके मन-मस्तिष्क पर अविश्वास की मुहर लगा दी है।

प्रश्न यह उठता है कि यदि अल्लाह ने मुझे वास्तविकता की ओर अंधा बना दिया है और मेरे मन में अविश्वास की मुहर लगा दी है तो मैं उन 'चिह्नों' को देख कैसे सकूंगा? यह भयानक विरोधाभास मुझे सर फुल्के की कविता 'मुस्तफ़ा' के उद्धरण का स्मरण कराता है:

रोगी बनाया और स्वस्थ होने का आदेश दिया[123]

दूसरी आयत 'अल्लाह ने तुम्हें स्वतंत्र इच्छा दी है' के तर्क की विरोधाभासी है, क्योंकि यदि उसने जानबूझकर मुझे एक काफ़िर बनाया तो वह मुझसे कैसे अपेक्षा कर सकता है कि मैं उसमें विश्वास करूंगा? कोई भी तार्किक व्यक्ति यह देख सकता है कि इस आयत में विसंगति है, पर फिर भी मुसलमान इस आयत में भी कुछ न कुछ ऐसा ढूंढ़ेंगे जिससे कुतर्क कर सकें कि वे स्वयं ही इस्लाम को मानना चाहते हैं। यहां आकर आप बंद गली में पहुंच जाते हैं जिसे हम चक्रीय तर्क कहते हैं।

अल्लाह ने तुम्हें स्वतंत्र इच्छा दी है, 41:53 के अनुसार

मैं कैसे विश्वास कर सकता हूं, यदि मैं इस गतिरोध को नहीं हटा सकता? अल्लाह ने मेरी स्वतंत्र इच्छा में गतिरोध उत्पन्न कर दिया है, 2:7 के अनुसार

किंतु यदि आप विश्वास करते हैं तो आप इस गतिरोध को हटा सकते हैं।

'वाद के बारे में क्या'

यह एक और ऐसी तकनीक है जिसे न केवल मज़हबी पक्षधर, अपितु वे
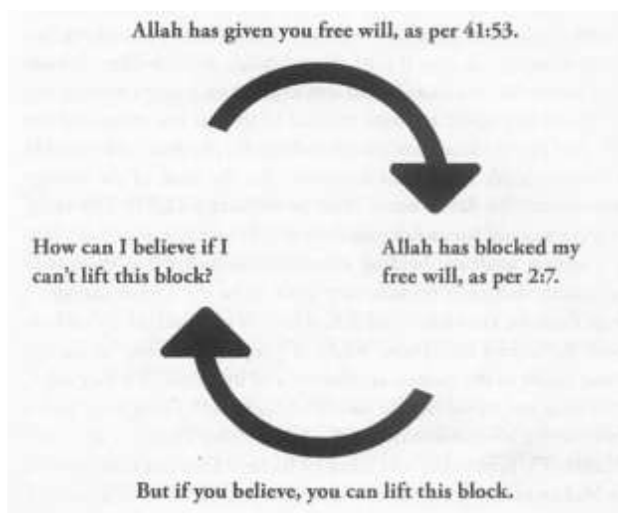
What-about-ism

लोग भी प्रयोग करते हैं जिनके पास अपने दावों के समर्थन में ठोस तर्क नहीं बचते हैं। यदि आप कुरआन में हिंसा का उल्लेख करेंगे तो मुस्लिम पक्षधर तत्परता से कहेगा, 'ओल्ड टेस्टामेंट के बारे में क्या? वह भी तो हिंसा का समर्थन करता है!' इसी प्रकार का कुतर्क वे नारी के प्रति विद्वेष, होमोफ़ोबिया या इस्लाम छोड़ने वाले

व्यक्तियों आदि के बारे में भी करेंगे कि 'उनके बारे में क्या?' यह एक भयानक तकनीक है और आप उनकी इस तकनीक को युगों प्राचीन इस स्वर्णिम सिद्धांत का उद्धरण देकर ध्वस्त कर सकते हैं: 'दो ग़लत मिलकर सही नहीं हो जाते हैं।'

व्यक्तिगत आस्थाएं पवित्र होती हैं

जब मज़हबी पक्षधर नीति व सिद्धांत के तर्क से अपने मज़हब का बचाव नहीं कर पाते हैं तो वे 'आहत' होने का कार्ड खेलने लगते हैं, जैसे कि 'आप मेरी व्यक्तिगत आस्था पर प्रश्न नहीं उठा सकते हैं और ऐसे प्रश्न अत्यंत आहत करने वाले हैं।' मैंने सदा कहा है कि हास्यास्पद विचार उपहास उड़ाये जाने योग्य ही होते हैं। हानिरहित, अतार्किक आस्थाएं अन्य हानिप्रद, अतार्किक आस्थाओं की ओर ले जाती हैं, जैसा कि पहले मेरी स्वर्गीय कैथोलिक सास के प्रकरण में बताया जा चुका है। यदि कैथोलिक राजनीतिज्ञ यह नहीं मानते कि जीवन इतना पवित्र है कि आप अपनी इच्छा से उसे समाप्त नहीं कर सकते तो मेरी सास को अपने जीवन के अंतिम कुछ माह में इतना कष्ट न उठाना पड़ता। पाकिस्तान के जाने-माने भौतिकविद (और संभवतया एक नास्तिक) प्रोफेसर परवेज़ हूदभाय ने अपने साक्षात्कार में बताया कि पाकिस्तान के एलयूएमएस विश्वविद्यालय के जीवविज्ञान विभाग के अध्यक्ष (उन्होंने नाम नहीं लिया) विश्वास करते हैं कि प्रतिदिन सूरा-रहमान पढ़ने से व्यक्ति कैंसरमुक्त रहता है। वह प्रोफेसर एक गंभीर विद्वान है, फिर भी अपने मन में यह अंधविश्वास पाले हुए हैं कि जिन्हें कैंसर होता है वे इसके पात्र हैं, क्योंकि वे लोग पर्याप्त कुरआन नहीं पढ़ते हैं।

मेरी इच्छा होती है कि प्रोफेसर हूदभाय ने उस प्रोफ़ेसर का नाम लिया होता जिससे कि हम सार्वजनिक रूप से उनका उपहास कर पाते। बेतुकी आस्थाओं को परिवर्तित करने का एक उपाय है जनसमूह में ऐसी आस्थाओं का उपहास उड़ाना। भले ही यह उपहास कितना भी आहत करने वाला और असहिष्णु प्रतीत हो, पर यदि आप मुहम्मद के उड़ने वाले घोड़े के विचार की आलोचना करते हैं और इसका उपहास उड़ाते हैं तो पार्श्व में बैठा मुसलमान ऐसी बिना सिर-पैर वाली कहानियों पर प्रश्न उठाने के लिये प्रेरित होता है। विख्यात मुस्लिम टीवी व्यक्तित्व मेहदी हसन से रिचर्ड डॉकिन्स ने पूछा कि क्या वे मुहम्मद के उड़ने वाले घोड़े की कहानी पर विश्वास करते हैं और उन्होंने कहा हां। जिस क्षण उन्होंने हां कहा, उनकी सारी समझदारी व बुद्धि लुप्त हो गयी और मैंने (जो कभी इस व्यक्ति को अत्यंत बुद्धिमान समझता था) इसके बाद इस व्यक्ति को गंभीरता से लेना बंद कर दिया। यह स्पष्ट था कि हसन यह

स्वीकार करते समय असहज थे और उनके पास अपनी स्थिति को उचित ठहराने का कोई उपाय नहीं था, फिर भी वह इसे अस्वीकार नहीं कर सके, क्योंकि यह इस्लाम की प्रमुख आस्थाओं में से एक है। एक मुक्त समाज में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से पवित्र और कुछ भी नहीं है। मज़हबी पक्षधर दावा करते हैं कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ आहत करने की स्वतंत्रता नहीं है, जिस पर पूर्व मुस्लिम अली ए. रिजवी कहते हैं कि आहत करने की स्वतंत्रता के बिना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हो ही नहीं सकती। जब कभी आपको कुछ ऐसा कहने की आवश्कता पड़ती है जो यथास्थिति के विरुद्ध हो तो इससे कोई न कोई तो आहत होगा ही। अन्यथा, यदि आप कुछ ऐसा कहने जा रहे हैं जो समाज में पहले से ही स्वीकृत है तो आपको अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, आप वो बात ऐसे ही बोल सकते हैं और कोई भी आपको नहीं रोकेगा। जब कोई व्यक्ति मुहम्मद के उड़ने वाले घोड़े में विश्वास करता है तो संभव है कि वह अन्य अतार्किक मान्यताओं में भी विश्वास करता है। मुझे आश्चर्य नहीं होगा यदि कोई मुसलमान मेरे पास आये और बोले कि वह बीती रात एक भूत से मिला और उससे बतियाया अथवा वह मुसलमान यह कहे कि किसी पड़ोसी ने उस पर कोई जादू-टोना कर दिया है। मुझे आश्चर्य तो तब होगा जब कोई नास्तिक ऐसा कहे, क्योंकि नास्तिक ऐसा व्यक्ति नहीं होता है जो अतार्किक मान्यताओं पर अपना जीवन जिये।

सामान्य बहाने

जब मज़हबी पक्षधरों के सारे तर्क व्यर्थ हो जाते हैं तो संभव है कि वे आपके समक्ष सामान्यत: प्रयोग किये जाने वाले इन बहानों को बनायें। ये नितांत प्रचलित होते हैं और कम अनुभवी मज़हबी भी संभवत: इनका प्रयोग करता है:

- यह तो अनुवाद की समस्या है (धरती चपटी नहीं है। यह गोल है)।
- उस समय ऐसा ही होता था (कई औरतों से शादी करना और सैक्स-स्लेव रखना)।
- यह हमारे जानने का विषय नहीं है (अल्लाह को किसने बनाया?)।
- यह सच्चाई नहीं, अपितु एक रूपक है (जैसे कि मुहम्मद की ओपन हॉर्ट-सर्जरी)।
- यदि आप अल्लाह में विश्वास रखते हैं तो फिर ऐसे व्यर्थ के प्रश्न नहीं करते (कि क्यों करोड़ों बच्चे भूख से मर रहे हैं)।

अंतिम शब्द

कभी तो मज़हब हानिरहित प्रतीत होता है और मानवता के लिये अच्छा भी लगता है, किंतु आप इसकी सतह पर थोड़ा सा खरोंचिये और फिर देखिये कि यह कितना विषैला व बुरी प्रकृति का है। मज़हब दावा करते हैं कि यदि उनके बताये मार्ग पर चलते हुए ठीक से इसका पालन किया जाये तो मनुष्यों का भला होगा, जबकि सच यह है कि वास्तविकता इससे नितांत भिन्न है। यदि हमें मुहम्मद के इस्लाम और उसके जीवन को एक आदर्श मानकर अनुसरण करना है तो हमें अपने पास दास, यौनदासी (सैक्स-स्लेव) रखना होगा, काफ़िरों व राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों के विरुद्ध जंग छेड़नी होगी, महिला को एक यौन-वस्तु समझकर व्यवहार करना होगा, दूसरों के साथ यौनसंबंध बनाने वालों व समलिंगियों की हत्या करनी होगी और उड़ने वाले घोड़े जैसे बिना सिर-पैर के दावे पर विश्वास करना होगा। यही वो समय है कि इस्लाम में विश्वास न करने वाले हम सभी काफ़िर मुखर हों और एक होकर मज़हब द्वारा फैलायी गयी अतार्किकता, बर्बरता और अंधविश्वास के विरुद्ध लड़ाई लड़ें।

हम पर नस्लवादी होने, इस्लामोफोबी होने और विद्वेषी होने जैसे अनेक अपमानजनक आरोप मढ़े गये हैं, किंतु यह हमारे आगे बढ़ने में बाधा नहीं बनना चाहिये, क्योंकि जो कोई भी यथास्थिति के विरुद्ध खड़ा होता है उसे इसी प्रकार के विरोध का सामना करना पड़ता है। हिंसा की धमकी भी हमें नहीं रोक सकती है। वे अधिक से अधिक कर क्या सकते हैं। शारीरिक हमला या हम पर कोई झूठा आरोप मढ़ सकते हैं।

विश्व पहले की तुलना में आज सर्वाधिक ध्रुवीकृत है, विशेषकर मुस्लिम दुनिया और हम मज़हबी उन्मादियों और धर्मनिरपेक्ष पक्षों के बीच विभाजन रेखा स्पष्ट देख सकते हैं। ईरान और अब यमन में विरोध प्रदर्शन मेरे इस दावे को प्रतिबिंबित करते हैं। मेरे जन्म का देश पाकिस्तान और अधिक ध्रुवीकृत हो रहा है।

वहां पर हिंसक, मुखर मज़हबी धूर्त पहले की तुलना में अब और अधिक आक्रामकता से शरिया क़ानून की मांग कर रहे हैं तो वहीं कुछ धर्मनिरपेक्षतावादी भी हैं जो देश को और अधिक धर्मनिरपेक्ष बनाने में लगे हुए हैं। पाकिस्तान लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्ष मूल्यों का इस्लाम में घालमेल कर दोहरा खेल खेल रहा है और अब अपनी ही लगायी आग में जल रहा है। आज नहीं तो कल, हम लोग मज़हबी धर्मांधों और धर्मनिरपेक्षतावादियों के बीच की यह खाई और चौड़ी होती देखेंगे। इतिहास में ऐसा कभी नहीं हुआ जब पाकिस्तान में इतनी बड़ी संख्या में लोग शरिया क़ानून की मांग कर रहे हैं, पर इतिहास में पहले ऐसा भी कभी नहीं हुआ है कि हम धर्मनिरपेक्षतावादियों, मानवतावादियों व नास्तिकों की संख्या चालीस लाख पहुंच गयी है। आपको लगता होगा कि पाकिस्तान के उन्नीस करोड़ मुसलमानों की तुलना में चालीस लाख की संख्या अत्यंत न्यून है, पर यह भी तो है कि इन उन्नीस करोड़ मुसलमानों में से अधिकांश इस्लाम को नहीं जानते हैं और वास्तव में शरिया नहीं चाहते हैं।

बहुत लंबे समय से मज़हब आलोचकों का मुंह बलात् बंद कराते रहे हैं। उन मज़हबी लोगों ने मज़हब की आलोचना करने पर घृणित ढंग से हमें अपने स्थान से भगाया, हमारी हत्याएं कीं। ये मज़हबी यही सब अत्याचार करके इतने लंबे समय तक अपना अस्तित्व बनाये रखे हैं, परंतु उनके दुर्भाग्य से अब उनकी पकड़ ढीली पड़ रही है और मेरे जैसे लोग मनुष्य रूपी उन मज़हबी भेड़ों के झुंड से बाहर आ रहे हैं। हम उनके स्तर पर जाकर उतना नीचे नहीं गिर सकते हैं- जैसे कि उन्होंने सदियों से हमारे जैसे लोगों की हत्याएं की हैं। हमें हिंसा के माध्यम से इन मज़हबी उन्मादियों पर अपना विचार भी नहीं थोपना है। हां हमें उन अज्ञानी मजहबियों को शिक्षित करने के लिये अपना स्वर मुखर करते रहना है। उनके पास बंदूक़ें हो सकती हैं, पर हमारे पास शब्द हैं, वो शब्द जो कल एक सुंदर विश्व के निर्माण में सहायक हो सकते हैं, वो शब्द जो समस्त विश्व के कष्टों को हर सकते हैं। अधिकांश मुसलमान सही इस्लाम नहीं जानते हैं। ऐसा ही ईसाइयों व अन्य धर्मावलंबियों के साथ है। मज़हब नामक इस मनोवैज्ञानिक रोग को समाप्त करने का एकमात्र मार्ग शिक्षा व प्रति-तर्क है। पश्चिमी देशों में रहने वाले मेरे पूर्व-मुस्लिम साथियों! आप लोगों पर अत्याचारी मुस्लिम समाजों में रह रहे अपने पूर्व मुस्लिम साथियों के लिये लड़ने का बड़ा उत्तरदायित्व है। ये पूर्व-मुस्लिम स्वतंत्रता

युक्त ऐसे मुक्त समाज की लालसा में जी रहे हैं। हो सकता है कि हम कभी रहस्यमयी एकाधिकारवादी ईश्वर की सत्ता का खंडन कर पाने में समर्थ न हो पायें, परंतु हमने निस्संदेह सभी ज्ञात मज़हबों के ख़ुदाओं को असत्य सिद्ध कर दिया है। इन मज़हबों की विचारधाराएं नारी के प्रति विद्वेषी, समलिंगियों के प्रति शत्रुता भरी, नस्लवादी व फ़ासीवादी हैं। कोई भी समझदार व्यक्ति ऐसी विचारधाराओं का विरोध करेगा। हमें अपने भाइयों व बहनों का मार्गदर्शन करने की आवश्यकता है जिससे कि वे अज्ञानता के अंधकार से बाहर निकल सकें तथा उन्हें उस सौंदर्य व नैतिकता को दिख़ाने की आवश्यकता है जो मज़हबहीन संसार का निर्माण कर सकता है।

क्या आप हमारी सहायता करेंगे?

आप हमें कैसे सहायता कर सकते हैं?

निम्नलिखित सोशल मीडिया मंच पर विमर्श में सम्मिलित होइये:

Patreon: https://www.patreon.com/exMuslim

Twitter: @XMuslimAtheist

Facebook: http://www.facebook.com/exmuslimatheist666

YouTube: http://videos.exmuslimatheist.com

संदर्भ

1. Pigafetta, Antonio (1906). Magellan's Voyage Around the World.
2. Alvarez, L. W., Alvarez, W., Asaro, F., Michel, H.V. (1980). 'Extraterrestrial cause for the Cretaceous-Tertiary extinction.' Science 208 (4448): 1095-1108. Bibcode 1980Sci... 208.1095A. doi:10.1126/science.208.4448.1095.PMID 17783054.
3. http://www.abc.net.au/news/2017-11-26/pakistan-calls-in-army-to bring-end-to-anti-blasphemy-protests/9194246
4. Sahih Bukhari 5590 (Hadith on Music).
5. Ibn Ishaq, The Life of Muhammad (Arabic), pp. 191-92; 163/236; 181/262; 308/458.
6. Ibn Ishaq, Sirat Rasul Allah (The Life of Muhammad).
7. Ibn Ishaq, pp. 675-76/995-96.
8. Ibn Ishaq, Sirat Rasul Allah (The Life of Muhammad), p. 307.
9. Ibn Ishaq, Sirat Rasul Allah (The Life of Muhammad), p. 674.
10. Al-Tabari, vol. 9, p. 128.
11. Sahih Bukhari, vol. 2, book 26, no. 740.
12. Sahih Bukhari, vol. 3, book 48, no. 853.
13. Sahih Bukhari, vol. 5, book 58, no. 236.
14. Sahih Bukhari, vol. 7, book 62, no. 64.

15. Sahih Bukhari, vol. 8, book 73, no. 151.
16. Al-Tabari, vol. 9, pp. 130-131.
17. Sahih Bukhari, vol. 6, book 60, no. 201.
18. Ibn Saad/Bewley, vol. 8, p. 60.
19. Ahmed, M. Mukkaram (2005). Encyclopaedia of Islam, p. 141.
20. Hamid, Abdul Wahid (1998). Companions of the Prophet. Vol. 1. London: MELS. p. 138.
21. Sayeed, Asma (2013). Women and the Transmission of Religious Knowledge in Islam.
NY: Cambridge University Press. p. 35.
22. Al-Tabari, vol. 9, p. 139.
23. Al-Tabari, vol. 8, p. 4.
24. Al-Tabari, vol. 8, p. 2.
25. Al-Tabari, vol. 8, p. 3.
26. Al-Tabari, vol. 9, p. 134.
27. Sahih Bukhari, vol. 6, book 60, no. 311.
28. Ibn Ishaq, Sirat Rasul Allah (The Life of Muhammad), p. 466.
29. Sahih Muslim, book 8, no. 3373.
30. Sahih Muslim, book 8, no. 4345.
31. William Muir (2003). The Life of Mahomet.
32. Sunan Abu Dawud, book 29, no. 3920.
33. Ibn Ishaq, Sirat Rasul Allah (The Life of Muhammad), p. 515.
34. Al-Tabari, vol. 39, pp. 184-185.
35. Al-Tabari, vol. 39, p. 186.
36. Al-Tabari, vol. 39, p. 193.
37. Al-Tabari, vol. 39, p. 194.
38. Al-Tabari, vol. 9, p. 139.
39. Al-Tabari, vol. 9, p. 138.

40. Al-Tabari, vol. 9, p. 135.
41. Bewley/Saad, 8:106.
42. Al-Tabari, vol. 39, p. 165.
43. Al-Tabari, vol. 39, p. 187.
44. Al-Tabari, vol. 39, p. 188.
45. Al-Tabari, vol. 39, p. 187.
46. Al-Tabari, vol. 9, p. 136.
47. Al-Tabari, vol. 9, p. 138.
48. Sahih Bukhari, vol. 9, book 85, no. 57.
49. All three references given on page 14 were inspired by the research of writer James A. Arlandson.
50. Sahih Bukhari, vol. 5, book 59, p. 462.
51. Putnam, R. D., and Campbell, D. E. (2010). American Grace: How Religion Divides and Unites US, chap. 1, note 5.
52. Kosmin, B. A. and Keysar, A. (2009). American Religious Identification Survey (ARIS).
53. MacLeod, N., Rawson, P. F., Forey, P. L., Banner, F. T., Boudagher-Fadel, M. K., Bown, P. R., Burnett, J. A., Chambers, P., Culver, S., Evans, S. E., Jeffery, C., Kaminski, M. A., Lord, A. R., Milner, A. C., Milner, A. R., Morris, N., Owen, E., Rosen, B. R., Smith, A. B., Taylor, P. D., Urquhart, E., Young, J. R. (1997). 'The Cretaceous-Tertiary biotic transition.' Journal of the Geological Society 154 (2): 265-292. doi:10.1144/gsjgs.154.2.0265
54. NOT IN USE
55. http://www.adelaidenow.com.au/news/rudd-condemns-rape-in-marriage-cleric/newsstory/77bfc5c29d92dce4d6f858ea5686a216? sv=1a1a2dd 476a84ff66a 81261ee476cb9e
56. https://youtube.com/watch?v=8RqYK9972s0

57. http://www.evoanth.net/2012/04/26/caring-neanderthals/
58. http://www.evoanth.net/2012/11/27/caring-homo-erectus/
59. http://www.sciencemag.org/news/2017/06/true-altruism-seen-chimpanzees-giving-clues-evolution-human-cooperation
60. Islamic Embryology and Islam, p. 2.
61. Commentary of al-Baydhawi (Lights of Revelation, Dar al Geel), p. 184.
62. Ibn Ishaq, Sirat Rasul Allah (The Life of Muhammad), p. 150.
63. 'Egypt: Rulers, Kings and Pharaohs of Ancient Egypt: Ramesses II.'
64. http://www.messagetoeagle.com/ancient-great-civilizations-had-great-understanding of-weather-and-climate/
65. Sahih Muslim, vol. 1, p. 297.
66. Sahih Bukhari, vol. 5, book 58, p. 227.
67. https://womhealth.org.au/pregnancy-and-parenting/five-causes-female-infertility
68. Sahih Bukhari, vol. 1, book 6, p. 315.
69. Muhammad ibn Saad (1995). Kitab al-Tabaqat al-Kabir, vol. 8. Translated by Bewley,
A. The Women of Madina, pp. 162-163.
70. http://www.islamicstudies.info/tafheem.php? sura=2 -verse= 189-to=196
71. Sunan Ibn Majah, Hadith (1944) (Hasan).
72. https://www.councilofexmuslims.com/index.php?topic= 22828.0
73. 'Over 1 million arrivals in Europe by sea: UNHCR.' Business Standard. 30 December 2015.
74. https://muslimstatistics.wordpress.com/2015/03/19/sweden-

77-6-percent-of-all-rapes-in-the-country-committed-by-muslim-males-making-up-2-percent-of-population/
75. http://www.townsvillebulletin.com.au/news/men-with-no-beards-cause-indecent-thoughts-turkish-preacher-says/news-story/debc09bf38356cd18962c0ec917c2ea4
76. http://www.pewforum.org/2013/04/30/the-worlds-muslims-religion-politics-society-overview/
77. http://www.pewresearch.org/fact-tank/2016/03/30/prior-to-lahore-bombing-pakistanis-were-critical-of-taliban-and-other-extremist-groups/
78. http://blogs.discovermagazine.com/notrocketscience/2012/08/27/unlike-humans-chimpanzees-only-punish-when-they have-been-personally-wronged/#.WlbMwiN7HyI
79. http://www.recitequran.com/en/tafsir/en.ibn-kathir/9:29
80. https://sidmennt.is/wp-content/uploads/Gallup-International-um-trú-og-trúleysi-2012.pdf
81. Sahih Bukhari book58, no.227
82. Pablo, Ben (2004). 'Latin America: Colonial.' Glbtq.com. Archived from the original on 11 December 2007, retrieved 1 August 2007.
83. Isbouts, Jean-Pierre (2007). The Biblical World: An Illustrated Atlas. National Geographic Books. p. 71. ISBN 1426201389.
84. https://www.usatoday.com/story/money/2017/07/11/warren-buffett-charitablecontributions-bill-melinda-gates-foundation/468837001/
85. Al-Khasa'is al-Kubra, 2:252, Matba'ah Da'irat al-Ma'arif, Hayder Abad.
86. Dala'il al-Nubuwwah, 2:381, Dar al-Baz, Makkah.
87. Sahih Bukhari, book 50, no. 891.

88. Sahih Bukhari, book 59, no. 617.
89. Sahih Bukhari, book 23, no. 360.
90. Sahih Bukhari, book 4, no. 187.
91. Quran 47:12.
92. Quran 7:166, 2:65.
93. Quran 5:60.
94. Quran 74:50.
95. Quran 8:55.
96. Quran 2:27, 2:121, 3:85.
97. Quran 2:10, 5:52, 24:50.
98. Quran 39:22, 57:16.
99. Quran 5:41.
100. Quran 2:171, 6:25.
101. Quran 2:171, 6:25.
102. Quran 2:171, 6:35, 11:29.
103. Quran 8:37.
104. Quran 13:17.
105. Quran 29:49.
106. Quran 98:60.
107. Quran 95:5.
108. Quran 45:7.
109. Quran 47:3.
110. Quran 3:32, 22:38.
111. Quran 32:14, 45:34.
112. Quran 47:10.
113. Quran 2:88, 48:6.
114. Quran 17:18.
115. Quran 22:18.

116. http://www.worldometers.info/world-population/population-by-country/
117. http://www.pewresearch.org/fact-tank/2015/11/17/in-nations-with-significant-muslim-populations-much-disdain-for-isis/
118. Bundeskriminalamt (BKA) data, p. 14.
119. https://www.khaleejtimes.com/article/20080715/ARTICLE/307159930/1098
120. http://www.bbc.com/news/uk-31794599
121. https://www.kristeligt-dagblad.dk/danmark/flertal-vil-kontrollere-fængselsimamer
122. http://www.washingtonpost.com/wpdyn/content/article/2008/04/28/AR2008042802560.html
123. https://en.wikiquote.org/wiki/Fulke_Greville,_1st_Baron_Brooke #Mustapha_(1609)
124. https://en.wikipedia.org/wiki/LGBT_rights_by_country_or_territory#/media/File:World_laws_pertaining_
125. Tafsir Ibn Kathir, 9:29.

अल्लाह का अभिशाप

मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा

हारिस सुल्तान

पूर्व मुस्लिम तथा नास्तिक हैरिस सुल्तान एक पाकिस्तानी मूल का आस्ट्रेलियन नागरिक है। 19 वर्ष की आयू में वह लाहौर, पाकिस्तान के संकीर्ण वातावरण से निकल कर आस्ट्रेलिया के खुले और विस्तृत वातावरण में पहुंचा। तथापि वह अपने नास्तिक बनने का श्रेय रिचर्ड डाकिंज़ द्वारा प्रस्तुत ईश्वर विरुद्ध तर्कों को देता है। कुरान तथा मुहम्मद की जीवनी के निष्पक्ष अध्ययन ने उसे इस्लाम से दूर कर दिया। उसे इस्लाम की गहन जानकारी है तथा उस में इस्लाम की त्रुटियों को सरल शैली में उजागर करने की क्षमता है। इस लिए उस की पुस्तक ब्लॉग तथा वीडियों इस्लाम को समझने का सब से अच्छा साधन हैं। सामाजिक संचार साधनों द्वारा बहुत बड़ी संख्या में लोग उस के अनुयायी हैं और वह इस माध्यम से उन लोगों के सम्पर्क में रहता है, जिन्हों ने इस्लाम त्याग दिया है। इसी माध्यम से वह उन पूर्व-मुस्लमानों की अवस्था की जानकारी प्राप्त करता है तथा उन्हें प्रोत्साहित करता है कि वे खुल कर सामने आएं।